जाटों का इतिहास

[उत्तरी भारत के इतिहास में योगदान]

लेखक

प्रो कालिका रजन कानूनगो

अनुवादक

डॉ दिनेशचन्द्र चतुर्वेदी

प्रस्तावना

वर्तमान भारतीय जनसमुदाय मे जाट एक उतनी ही महत्त्वपूर्ण जाति ह जितनी वह मुसलिम काल म थी ओर उनकी परपराए धुधले प्राचीन युग की ओर सकेत करती ह। समस्त उपलब्ध सामग्री के आधार पर ऐसी जाति के विगत इतिहास के आलोचनात्मक अध्ययन को समस्त भारतीयो के लिए गहरी दिलचस्पी एव शिक्षा का विषय होने से रोका नहीं जा सकता। इस पुस्तक मे ऐसा ही अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

यह पुस्तक प्रोफेसर कालिका रजन कानूनगो के वर्षो के समर्पित एव स्नेहमय परिश्रम का प्रतिनिधित्व करती है। मुद्रित एव हस्तलिखित, फारसी मराठी फ्रांसीसी ओर अग्रेजी के समस्त ज्ञात स्रोतो का (पौराणिक युग के अध्ययन हेतु सस्कृत स्रोतो के अलावा) इसमे उपयोग किया गया है। हिस्ट्री ऑफ दी जाट्स' में जैसा सश्लेषण प्रस्तुत किया गया है वेसा इससे पूर्व कभी नहीं किया गया, ओर मेरी दृष्टि म जब तक नवीन सामग्री की खोज नहीं हो जाती भविष्य के शोधकर्ताओं के लिए भी कुछ नहीं बचा है। दृढ आलोचना शक्ति और सच्ची ऐतिहासिक भावना का प्रमाण प्रोफेसर कानूनगो अपनी पहली पुस्तक 'शेरशाह' मे ही दे चुके है, जो कि एक ही छलाग मे इस विषय की स्तरीय कृतियो की श्रेणी में पहुच गयी थी। अपनी हिस्ट्री ऑफ दी जाट्स' मे वे लिखित दस्तावेजो के गहन अध्ययन से ही सतुष्ट न रहे। उन्होने दिल्ली मे अपने पूर्व कालिज के विद्यार्थियो के साथ रहकर कार्य किया और उनका प्यार एव विश्वास जीत लिया और उनके ऐतिहासिक महत्त्व क स्थानो की यात्रा कर उनक जातीय समारोहो म भाग लिया। इन्होंने उन वयोवृद्ध जाटो से बातचीत की जिनकी यादों के जखीरे में भूतकाल कूट-कूट कर भरा हुआ हे। इस प्रकार व्यक्तिगत अन्वेषण से उन्होने विशाल क्षेत्र में बिखरी हुई सूचनाए एकत्रित करके इस पुस्तक मे प्रस्तुत किया है, जिससे यह अनुपम हो जाती है।

जैसी कि उनकी पूर्व-कृति की उच्च गुणवत्ता को देखते हुए आशा थी उसी

के अनुरूप किसी जनजाति-विशेष पर अपनी दृष्टि सकुचित करन क बजाय सपूर्ण भारतवर्ष को अपनी नजर म रखत हुए उन्होन यहा प्रमाणों का निष्पक्ष प्रस्तुतीकरण आर चरित्रा का विशाल दृष्टिकोण स अध्ययन किया है। यह विशाल दृष्टिकोण आर जिस राजवश या जाति विशेष पर कार्य किया जा रहा हा उसके प्रति दार्शनिक निर्लिप्तता १८वीं शताब्दी के भारत के किसी भी इतिहास के लिए आवश्यक है आर वही सच्चे इतिहास क रूप म स्थापित होने के योग्य है। जहा तक जाटों का प्रश्न ह वे मुगल साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया के दारान, उत्तरी भारत के इतिहास का निर्माण करने वाल उलझ हुए जाल क धागा में स एक है। दिल्ली क बादशाहा आर उनके अर्ध स्वतन्त्र कुलीना क अतिरिक्त जाट रुहेले सिख मराठे राजपूत अवध क नवाब अग्रेज कम्पनी साहसी फ्रासीसी—सभी उस एक सदी में भारतीय राजनीति की जटिलता में सम्मिलित हुए आर वही सच्ची भारतीय इतिहास के निर्माता जाटा के उत्थान, परिपक्वता आर पतन की गवाह थी। इसीलिए जाटो के इस विवरण को लिखने हेतु स्वय को पूर्णत सक्षम समझने से पूर्व पूर्ण बुद्धिमानी का परिचय देते हुए प्राफेसर कानूनगो ने समकालीन इतिहास आर इन समस्त शक्तियो के पारस्परिक प्रभाव का अध्ययन किया।

मुगल साम्राज्य के पतन के आलोचनात्मक अध्ययन की दिशा म यह एक उच्चकोटि का योगदान ह। जाट बधाई के पात्र है कि उन्हे ऐसा इतिहासकार मिला। सभव ह जाटा मे कुछ लोग अनजाने म इस बात पर भिन्नाए कि उनकी जनजाति के सबध मे प्रचलित धारणाआ को इसमे सतुष्ट नहीं किया गया किंतु सत्य महान् है आर रहेगा और प्रोफेसर कानूनगो ने लक्ष्य के प्रति एकनिष्ठ हाकर जिस सत्य की आकाक्षा की यह विद्वत्ता की राह में उपलब्ध समस्त स्राता स समर्पित ह।

मई १९२५ —*जदुनाथ सरकार*

अग्रेजी के प्रथम सस्करण की भूमिका

प्रस्तुत सस्करण

जाटों क अग्रणी इतिहासकार प्रो कालिका रजन कानूनगो की महत्त्वपूर्ण कृति 'हिस्ट्री ऑफ दी जाट्स की ऐतिहासिक महत्ता के कारण महाराजा सूरजमल स्मारक शिक्षा-सस्था ने इस अनुपलब्ध कृति का डॉ पूर्ण सिह डबास के सपादन मे १६८२ ई म पुनर्मुद्रण कराया था।

सदस्यो की माग पर इस कृति का हिदी अनुवाद भी सस्था के लिए श्री राजद्र सिह (नागार) ने किया था। इस अनुवाद का सशोधन किया जा रहा था। तभी हमे डॉ भगवान सिह ने सूचना दी कि वे डॉ दिनेशचद्र चतुर्वेदी कृत इस कृति के अनुवाद को डॉ नत्थन सिह एव श्री कमलेश भारतीय के सपादन में एडवाकेट ओ पी राणा की प्रेरणा से श्री वेदपाल सिह द्वारा किये गये दान से जाट महासभा द्वारा प्रकाशित करा रहे है। डॉ भगवान सिह सस्था के पूर्व उपाध्यक्ष एव आजीवन सदस्य थे। अत उनकी सूचना पर दूसरे अनुवाद का कार्य रोक दिया गया। १६८२ ई के प्रथम हिदी सस्करण के प्रकाशन के लिए सस्था उपर्युक्त सभी महानुभावो के प्रति आभार प्रकट करती है।

यह हिदी सस्करण भी समाप्त हो गया। सस्था द्वारा इसे पुन प्रकाशित करने के लिए डॉ भगवान सिह की मौखिक स्वीकृति के बावजूद सस्था की कार्यकारिणी के निर्णय के अनुसार सस्था सचिव श्री एस पी सिह न प्रयत्न करके उनसे लिखित स्वीकृति प्राप्त की। आदरणीय डॉ भगवान सिह की इच्छानुसार सस्था न इस शीघ्र प्रकाशित करने का निर्णय लिया है। विद्वानो की राय के अनुसार इतिहास सबधी कोई भूमिका अपनी आर से प्रस्तुत सस्करण में नही जाडी गयी है। प्रथम हिदी सस्करण म प्रो यदुनाथ सरकार द्वारा लिखित मूल पस्तावना ओर लेखकीय टिप्पणी नहीं दी गयी थी। ऐतिहासिक महत्ता के कारण उनका भी अनुवाद दे दिया गया है। इस प्रकार कृति के मूल रूप को यथावत् रखा गया है।

प्रस्तुत सस्करण को प्रकाशित करने का मेरा अनुरोध नेशनल पब्लिशिग हाउस दरियागज के स्वत्वाधिकारी श्री सुरेन्द्र मलिक ने स्वीकार करके इस शीघ्र

प्रकाशित किया है। सस्था की ओर से हम उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते है। सस्था के प्रधान श्री रामनिवास मिर्धा द्वारा व्यापक शैक्षिक दृष्टिकोण क साथ निरतर कार्य करने की प्रेरणा श्री एस पी सिह का सतत सहयोग विशेष रूप स शिक्षा-समिति के अध्यक्ष डॉ एस एस राणा का कुशल निर्देशन एव उनका तथा सदस्या का मुझ पर विश्वास इस कार्य की सफलता में साधक रह है। आशा है पाठक इस कृति से लाभान्वित हागे।

विनीत

(डॉ) वीर सिह

सचिव शिक्षा-समिति

महाराजा सूरजमल स्मारक शिक्षा-सस्था

अनुक्रम

लेखक की टिप्पणी

इस पुस्तक को प्रारभ करने का श्रेय अपनी जाति के प्रति उत्साह रखने वाले, मेरे दिल्ली के उन शिष्या को जाता ह जि हे चार वर्ष पूर्व मैने इसके लिए वचन दिया था। लेकिन इस कार्य को मेने जसा समझा उससे कहीं विकट साबित हुआ। जाटो का राजनीतिक इतिहास १८वीं शताब्दी के मुगल साम्राज्य के व्यापक इतिहास मे जटिलतापूर्वक उलझा हुआ है और उनके उद्गम का प्रश्न तो आज भी स्वय उनके लिए ओर विद्वानों के लिए एक रहस्य बना हुआ है। जाटों की खोई हुई वशावली की खोज म मने भारतीय पुराकाल ओर नृजाति विज्ञान के अनजान क्षेत्रों के अधकार में भटकने की जोखिम उठाई फिर भी म सत्य को खोज लेने का दावा नहीं करता।

अलखपुर हिसार के चाधरी छज्जूराम की उदारता को मे हार्दिक कृतज्ञता से स्वीकार करता हू जि होंने इस पुस्तक के प्रकाशन मे हुए व्यय मे उल्लेखनीय योगदान किया। भावनाए आर कर्तव्य दोना ही मुझ अपने प्रिय शिष्यों, चोधरी सादीराम बी ए आर पंडित मुखराम बी ए को उनके द्वारा समर्पित भाव से की गयी उन सेवाआ के लिए धन्यवाद देने को प्रेरित करती है जो उन्होंने हमारी एतिहासिक यात्राओं ओर खोजों के दारान कीं। मेरा अपने गुरु प्रोफेसर जदुनाथ सरकार क प्रति अहसानमद होने का यहा उल्लेख करना अत्यत आवश्यक ह जिनके निरतर सहयोग ओर निदेशन के अभाव म भारतीय इतिहास के इस अज्ञात ओर धुध भर क्षेत्र को पार करने की म उम्मीद नहीं कर सकता था।

लखनऊ विश्वविद्यालय
३० अप्रैल १९२५

—कालिका रजन कानूनगो

पुनश्च—यह सुखद सयोग है कि गुजरात के भूतपूर्व राज्यपाल डॉ स्वरूप सिंह उन शिष्या मे से एक हैं।

पहला अध्याय

उत्पत्ति एव आरम्भिक इतिहास

आवास भूमि और लोग

जाट एक ऐसी जनजाति है जो इतनी अधिक व्यापक और सख्या की दष्टि से इतनी अधिक है कि उसे लगभग एक राष्ट की सज्ञा प्रदान की जा सकती है अब उनकी सख्या लगभग ९० लाख है। (इस समय यह सख्या करोडों म है—सपादक) जिस क्षेत्र मे जाट निवास करत हैं, उसे मोटे तौर पर इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है—उत्तर मे उसका सीमाकन हिमालय की नीचे की पवत शृखला से होता है और पश्चिम म सिंधु नदी म दक्षिण म वह हैदराबाद (सिंध) से शुरू होकर अजमेर और फिर भोपाल तक फला हुआ है तथा पूव म गगा नदी उसके सीमान्तो को प्रदर्शित करती है। दूसरे शब्दो म जाट देश की सरचना एक पखे के आकार जसी है जिसका आधार सिंध म है। सिंधु नदी के उस पार भी पेशावर, बलूचिस्तान यहा तक कि सुलेमान पवत माला' के पश्चिम म भी हमे जहा-तहा जाट मिल जात हैं। पजाब सिंध राजस्थान तथा गगा के दोआब के पश्चिमी भाग मे इस जाति के द्वारा कृषक बिरादरियो की रीढ की हड्डी की रचना होती है। १३वीं शताब्दी तक जाट एक सुसम्बद्ध लोग थ उनम रक्त भाषा और धम की एकता पाई जाती थी। परन्तु अब उनम स एक तिहाई मुसलमान हैं बीस प्रतिशत सिख हैं और शेष हिंदू। परन्तु जाट चाहे वह हिन्दू हो या सिख और या मुसलमान वह आखिर मे जाट है वह मजबूती के साथ अपने पुराने जनजातीय नाम के साथ—उसे अपना गौरवपूण उत्तराधिकार मानकर—चिपका रहना ह और उसके साथ रक्त-सम्बन्धो की परम्परा चलती रहती ह।

जाट निस्सन्देह बहादुर किसान हैं अपने देश का गौरव हैं जो हल और तलवार दोनो क प्रयोग म समान रूप स सिद्धहस्त है परिश्रम तथा साहस म वह किसी भी भारतीय जनजाति स कम नही है। शरीर की बनावट म व राजपूत तथा

ग्रेषी जस हैं और व जाति व उस प्रारूप का प्रतिनिधित्व करते हैं जो भारत के परम्परागत उपनिवेशवासी आर्यों के सम्बन्ध में बताया गया है। व अधिकांशत लम्बे हैं उनका रंग साफ है और आखें काली हैं उनके चेहरे पर बाल बहुतायत में पाये जाते हैं उनका सिर लम्बा होता है नाक परिमित और सुव्यक्त होती है परन्तु वह बहुत लम्बी नहीं होती।

चरित्र में जाट पुराने एंग्लो-सैक्सन तथा पुराने रोमनों से मिलता जुलता है निस्सन्देह उसमें कल्टिक की अपेक्षा ट्यूटन विशिष्टताओं का आधिक्य है। वह हट्टा-कट्टा है सुस्त है उसमें कल्पना एवं भावनाओं का अभाव है उसमें प्रतिभा की कमी है किन्तु उसमें दृढ़ता यथेष्ट मात्रा में पाई जाती है उसमें अध्यवसाय है तथा उसकी बुद्धि व्यावहारिक है। ठोस तथ्यों के बिना केवल शब्दों के द्वारा कोई भी बात उसके गले के नीचे उतारी नहीं जा सकती। जैसा इबट्सन ने लिखा है दृढ़ता स्वतन्त्रता तथा अध्यवसाय एवं कठोर परिश्रम उसके चरित्र के कुछ अच्छे गुण हैं। जाट चरित्र की एक दूसरी विशिष्टता जिसे कुछ अंश तक पहले नहीं अवलोकित किया है उसका व्यक्तिवाद है। 'पंजाब की जनजातियों में से जाट केवायली अथवा बिरादरी के नियन्त्रण को बरदाश्त करने के मामले में सबसे अधिक अधीर है और वह उन लोगों में से है जो मजबूती के साथ वैयक्तिक स्वतन्त्रता का दावा करते हैं। रोहतक जैसे इलाकों में जहां जाटों के पास अपनी जमीन है और जहां उन्हें प्रतिद्वन्द्वी जातियों अथवा शत्रुओं के कारण किसी दूसरे से झगड़ा करने के लिए एक दूसरे की सहायता लेने के लिए बाध्य होना पड़ता है जनजातीय बंधन मजबूत है। परन्तु जहां तक नियम का सम्बन्ध है जाट ऐसा व्यक्ति है जो वही काम करता है जो उसे उचित लगता है कभी कभी वह ऐसे काम भी करता है जो उसे अनुचित लगते हैं। वह स्वतन्त्र है और वह स्व इच्छा से प्रेरित होता है किन्तु वह समझदार है और यदि उसके मामले में हस्तक्षेप न किया जाए तो वह शान्तिप्रिय है।'

जाट अभी भी सामाजिक विकास के जनजातीय चरण में है वह जाति पर आधारित भेदभाव अथवा कुलीनवाद को मान्यता प्रदान नहीं करता। जाति के सभी सदस्य समानता के स्तर पर हैं केवल बुजुर्गों का आदतन सम्मान किया जाता है। जाट निस्संकोच रूप से अपने बड़े भाई की विधवा से विवाह कर लेता है केवल इसी आधार पर उसे शुद्ध क्षत्रिय मानने में आपत्ति की जा सकती है। परन्तु यह एक ऐसी प्रथा है जो वैदिक काल में शुद्ध आर्यों के ऊपर की तीनों जातियों में पाई जाती थी।

जाटों और राजपूतों का विभेद जिनका उद्भव एक ही मूलवंश में हुआ है इस तथ्य से व्यक्त होता है कि जाट उस प्रथा पर अमल करते हैं और राजपूत उससे दूर रहते हैं जिस समय सामाजिक स्थिति को परखने की मूलभूत कसौटी

माना जाता है। ¹अपने गावो की शासन प्रणाली में जाट राजपूतो की अपेक्षा अधिक लोकतान्त्रिक हैं, आनुवशिक अधिकार के प्रति उनमे सम्मान की भावना अपेक्षाकृत कम है वे निर्वाचित मुखिया को अधिक पसन्द करते हैं। उनमे गोत्र की भावना बहुत मजबूत है। वे आनुवशिक झगडे को पवित्र कर्तव्य की भाति निबाहते हैं। एक वृद्ध जाट तब तक शान्ति से नही मर सकता जब तक कि वह अपने उत्तराधिकारियो को यह बताकर अपनी छाती का बोझ हल्का न कर ले कि उसके पडोसियो ने उसके और उसके पूर्वजों के साथ क्या बुरा और क्या अच्छा किया है तथा जब तक वह उन्हें बुराई का बदला और भलाई का भले कामो से बदला चुकाने का आदेश न दे दे। एक कुनबा दूसरे कुनबे से लड सकता है एक गोत्र की दूसरे गोत्र से लडाई हो सकती है, परन्तु जब भी जनजातीय सम्मान का प्रश्न उठता है अथवा किसी दूसरी बिरादरी के साथ सघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है जाति के वे सभी सदस्य जिनमे लाठी पकडने की सामर्थ्य है अपने पारस्परिक मतभेदो को अल्पकाल के लिए भुलाकर निष्ठा के साथ जनजातीय बुजुर्गों के आदेशो का पालन करने के लिए एकत्रित होते है।

इन रोचक लोगो की उत्पत्ति अन्धकार से घिरी हुई है जिसे वैज्ञानिक खोज का प्रकाश अभी तक दूर नही कर पाया है। शारीरिक बनावट भाषा, चरित्र भावनाओ शासन से सम्बद्ध अवधारणाओ तथा सामाजिक संस्थाओ में जाट प्राचीन वैदिक आर्यों का, हिन्दुओ की तीनो उच्च जातियो की अपेक्षा जिनका मूल चरित्र शताब्दियो के दौरान हुए विकास की प्रक्रिया में निश्चयपूर्वक लुप्त हो चुका है कहीं अधिक श्रेष्ठ प्रतिनिधि है। परन्तु जाट के जनजातीय स्वरूप से यह सकेत मिलता है कि वह विदेशी और कम सम्मानित यानी इण्डो सिथियन उत्पत्ति का आत्मज है। भारत के पुरातत्त्व एव मानव विज्ञान के अध्यताओ ने इस मान्यता के साथ अपना मत प्रतिपादित किया है कि राजपूतो और जाटो जैसे उत्कृष्ट उद्यमी और सैनिक गुणो से सम्पन्न लोग उत्तर-पश्चिम से भारत में आये होगे और उन्होंने यहा आकर यहा के वैदिक आर्यों के अशक्त उत्तराधिकारियो को पूर्व और दक्षिण की ओर भगा दिया होगा क्योकि सिकन्दर से लेकर अहमद शाह दुर्रानी तक के ज्ञात ऐतिहासिक काल में विदेशी अप्रवासियों ने निरपवाद रूप से अपना शासन यहा के मूल निवासियो के ऊपर आरोपित किया है। इसके अतिरिक्त यह भी एक ज्ञात तथ्य है कि पार्थियन जातियो की गृहभूमि मध्य-एशिया से शक यूची कुशान और हूण जैसे अनेक विदेशी झुण्डो ने १०० ई०पू० से लेकर ६०० ई० तक के काल में भारत में प्रवेश किया कालान्तर में वे सभी भारत के समाज में विलीन हो गये। यदि ऐसा है तो प्रश्न है कि इन जातियो के आधुनिक प्रतिनिधि कहा हैं? राजपूतों और जाटो की जगजू आदता, अपरम्परागत रिवाजो तथा उत्पत्ति के सम्बन्ध में भ्रम उत्पन्न करने वाली परम्पराओ ने अध्यताओ की विदग्धता को आकर्षित किया

है और उन्होंने एकदम उनकी शकों और हूणों से पहचान स्थापित कर दी। कर्नल टॉड ने इस सम्बन्ध में एक काल्पनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसमें यह कहा गया कि भारत के जाटों, रोमन साम्राज्य के गोथों तथा जटलैण्ड में जटों के बीच रक्त सम्बन्ध पाये जाते हैं। इस सिद्धान्त ने विद्वानों की अनेक पीढ़ियों को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। जाट कबीले का नाम विद्वानों के कानों में आकस्मिक शब्द गेट (Gaete) यूटी (Yuti) और यथा (Yetha) की तरह ध्वनित हुआ। भाषा वैज्ञानिकों ने पहली बार इसके विरुद्ध अपना विरोध व्यक्त किया। डॉ० ट्रम्प (Dr Trumpp) और बीम्स' (Beames) ने शक्तिशाली शब्दों में इन दोनों जातियों को उनकी शरीर की बनावट और भाषा के आधार पर शुद्ध आर्य घोषित किया। यह कहा गया कि उनकी भाषा शुद्ध हिन्दी की ही एक बोली है जिसमें सिथियन भाषा की लेशमात्र भी झलक नहीं है। परन्तु उन्हें विकासोन्मुख विज्ञान ने खामोश कर दिया उसने यह अकाट्य अभ्युक्ति प्रतिपादित की भाषा जाति का प्रमाण नहीं है।

इसके उपरान्त मानवशास्त्री अपने वैज्ञानिक उपकरणों के साथ प्रस्तुत हुए उन्होंने भारत के विभिन्न लोगों की खोपड़ियां और नाक नापनी शुरू की ताकि उनकी खोई हुई वंशावली को फिर से प्राप्त किया जा सके। इस खोज के फलस्वरूप सर हर्बर्ट रिसले ने भारत के लोगों के सात वर्गीकरण किये और उन्होंने राजपूतों और जाटों को वैदिक आर्यों का वास्तविक उत्तराधिकारी बताया। इण्डो सिथियन सिद्धान्त पर यह पहला वैज्ञानिक प्रहार था। परन्तु विज्ञान एक स्थान पर रुका नहीं रहता। इसके बाद रिसले के सिद्धान्त की भी अनेक विद्वानों ने विभिन्न आधारों पर आलोचना की है।

मानवमिति अथवा भाषा के औचित्य के सम्बन्ध में हरेक पर विचार करने के उपरान्त चाहे जो भी मतभेद रहे हों हमारे ज्ञान की वर्तमान स्थिति में कोई भी सर हर्बर्ट रिसले के इस कथन से असहमत नहीं हो सकता भारत में जहां ऐतिहासिक साक्ष्यों का अस्तित्व शायद ही हो जो तथ्य साधारणतः उपलब्ध हैं वे तीन प्रकार के हैं—शारीरिक विशिष्टताएं भाषायी विशिष्टताएं तथा धार्मिक एवं सामाजिक रूढ़ियां। इनमें से पहली दो सबसे अधिक विश्वसनीय हैं। अधिकांश मानव वैज्ञानिक बिना किसी विरोध के अब सर विलियम फाउलर के इस मत से सहमत हैं जिन्होंने कुछ वर्ष पूर्व लिखा था कि शारीरिक बनावट किसी भी जाति की पहचान करने की सर्वश्रेष्ठ वास्तव में एकमात्र सच्ची कसौटी है भाषा रूढ़ियां आदि से सहायता मिल सकती है अथवा उनसे कुछ संकेत प्राप्त हो सकते हैं परन्तु बहुधा वे *भ्रमोत्पादक हैं।' सभी प्रमुख विद्वानों के अनुसार जाट शुद्ध* आर्य की शारीरिक बनावट और भाषा' की संयुक्त कसौटी पर खरा उतरा है।

जहां तक धार्मिक एवं सामाजिक परम्पराओं का प्रश्न है सभी पर्यवेक्षक

सामान्य रूप से इस बात से सहमत हैं कि इन मामलो मे जाट आय व्युत्पत्ति से निसृत अन्य हिन्दू जातियो से बहुत अधिक भिन्न नही हैं। विज्ञान ने यह सिद्ध करने मे भले ही सफलता प्राप्त कर ली हो कि जाट इण्डो-आयन मूलवश से सम्बन्ध रखते हैं परन्तु इस बात को पर्याप्त मात्रा मे स्वीकृति उस समय मिल सकती है जबकि सस्कृत साहित्य मे उल्लिखित किसी प्राचीन आय जनजाति के साथ उनकी समानता निश्चयात्मक रूप से स्थापित की जाय। चूकि इस सम्बन्ध मे ठोस वज्ञानिक साक्ष्य लगभग लुप्त हो चुके हैं इसलिए विद्वानो को बाध्य होकर अवज्ञानिक तरीके अपनाने पडे हैं। उदाहरणाथ अब वे ध्वनियो की समानता का आश्रय लेते हैं। महाभारत के कुछ अध्यायो मे पजाब और सिन्ध की—जिन्हे ऐतिहासिक काल म जाटो की गहभूमि कहा जा सकता है—विभिन्न जनजातियो का उल्लेख है। उसम एक जरत्रिका और दूसरी मद्रक जातिया का वणन है—दोनो बाहिका थे यानी यहा बाहर स आये थे। सर जेम्स कम्पबेल और ग्रियसन का कहना है कि सस्कृत साहित्य म यह जाटो का सबसे पहला उल्लख है।[1] मद्रक राजा शल्य को कण के कटु उत्तर मे इन लोगो की आदतो और चरित्र का सुस्पष्ट चित्रण है यद्यपि वह विकृतियों से मुक्त नही है। मद्रक अपने मित्रो के प्रति सदव निष्ठाहीन होत हैं उनम स्नेह का अभाव होता है, वे हमेशा दुष्ट झूठे और क्रूर होते हैं। ये दुष्ट लोग तला हुआ जो और मछली खात हैं तथा उनके घर मे पिता, पुत्र मा सास, ससुर चाचा पुत्री दामाद भाइ पात मित्रो और अतिथियो के साथ नौकरो और नौकरानियो के साथ स्त्री और पुरुष मिलकर एक साथ दारू पीते हैं और गौ-माम खात हैं वे कभी रोत हैं और कभी हसत हैं उन्हे अश्लील बातचीत और गीता म आनन्द आता है। उनकी स्त्रिया मदिरा के प्रभाव म आकर नगी नाचती हैं। उनका रग साफ होता है और कद लम्बा, वे आवरण पहनते हैं भोजन अधिक मात्रा म करत हैं तथा पवित्रता क नियमा के पालन म व निलज्ज और लापरवाह हैं। वाहिको स जिन्ह हिमालय गगा यमुना, सरस्वती और कुरक्षेत्र के क्षेत्रो स निष्कासित कर दिया गया है दूर रहना चाहिए। बाहिको की रचना प्रजापति के द्वारा नहीं हुई जिन्होन शुद्ध आर्यों की रचना की है वे पिशाच दम्पत्ति क आत्मज हैं जिनका नाम बाही और हीक था और जो विपासा (व्यास) नदी के किनारे रहत थे। एक सकाल नाम का नगर है और एक अपगा नाम की नदी है जहा जरत्रिक नाम का वाहिको का एक भाग रहा करता था। उनका चरित्र अत्यधिक निन्दनीय है। य लोग वडी मात्रा म गाश्त आर उबला हुआ जो खात हैं या व जो की राटी लहसुन क साथ गा मास आर तल हुए जो का भोजन करत है। उनकी स्त्रिया मदिरा पान करती है सावजनिक रूप स हसती और नाचती है ऊट अथवा गध की भाति ऊची और कक्श आवाज म अश्लील गीत गाती है त्योहारो पर जब व नाचती हैं और एक-दूसर को 'तू करम

पहाड़ी ... नृत्य गान आदि भाषाओं में गुनगुनाती हैं तब उनके उत्साह के ऊपर कोई मर्यादा नहीं रहती। एक काफिर को कुछ अरसे से एक बार कुछ समय के लिए रखा गया। उसने अपने देश की स्त्रियों के सम्बन्ध में कहा, "मैं काफिर हूँ, मैं इस समय कुछ अरसे से निर्वासित हूँ। मेरी पत्नी और गोरे-गोरे बच्चे अपने सुन्दर परिधान में सुख निश्चय ही उस समय ... करती हैं जब वह विश्राम कर रही होगी? आह! मैं अपने और इनको प्यार करने अपने देश कब वापस जाऊँगा और कब ... बूढ़िया ... बच्चों और भाइयों का प्यार मनोरमा से नेत्रों को रंगे हुए तथा माथे ... और ठोड़ी पर गोदने के चिह्नों को लिए हुए गोरवर्ण स्त्रियों को देखूँगा। हम कब ... और ... की सुहावनी छाया में बैठकर ... के साथ ... और इस प्रकार शक्ति पाकर ... उतारेंगे और ... कब पीयेंगे? ... और ... में युवक और वृद्ध दोनों ही ... मद्य-पान करते हैं और ऊँची आवाज में गाते हैं। उन लोगों का जीवन स्वर्ग है जो सुरा, गायन, नृत्य, ऊन और भेड़ का भोग नहीं ... ।"

उपरोक्त चित्रण से प्राचीन काल में पाये ... की भूमि में जिस प्रकार की स्थिति पाई जाती थी उसका स्पष्ट विवरण मिल जाता है। इससे पहले प्रभाव से ही यह निष्कर्ष निकलता है कि जर्तिक वर्तमान जाटों के पूर्वज थे। परन्तु यदि गहराई से इस बात पर विचार किया जाए तो इन दोनों लोगों का तादात्म्य अवास्तविक प्रतीत होगा। उपरोक्त उद्धरण के उस अंश में जिसमें कहा गया है कि वाहिकों की रचना प्रजापति के द्वारा नहीं हुई यह स्पष्ट है कि वैदिक आर्य भूमि के निवासियों का यह विश्वास था कि उनके क्षेत्र से बाहर की जातियों की उत्पत्ति उन मूलवंशों से हुई है जो उनके मूलवंश से भिन्न थे।" ये लोग स्पष्टतः उन लोगों के पूर्वज थे जो ग्रियर्सन के मतानुसार वर्तमान पिशाच बोलियों को बोलते हैं— कश्मीर, दरद और हिन्दूकुश के काफिर। किन्तु आर्यों का सिर चौड़ा अथवा बीच के आकार का होता था और इसलिए इस बात का प्रश्न ही नहीं उठता कि वे लम्बे सिर वाले जाटों के पूर्वज थे। वाहिक स्त्रियाँ अल्प परिधान तथा शालें पहनती थीं इस तथ्य से केवल यह संकेत मिलता है कि वे यहाँ किसी दूसरे देश से आये थे। कश्मीर की लम्बी गौरवर्ण [illegible] और सुन्दर स्त्रियाँ सम्भवतः वाहिक स्त्रियों की वास्तविक प्रतिनिधि हैं। यदि जाट हिन्दुओं के सभी दस संस्कार नहीं मानते तो कुछ को तो अवश्य मानते हैं। उपनयन संस्कार निर्धारित समय पर तो नहीं होता परन्तु विवाह के अवसर पर होता है।" परम्परा यह है कि पुरोहित विवाह के समय उन्हें जनेऊ पहना देता है और विवाह के कुछ समय बाद उसे उतार दिया जाता है। वाहिकों का विवाह उन्हीं के गोत्र में होता है जो जाटों में नहीं होता। जाटों में उत्तराधिकार के वे ही नियम हैं जो अन्य हिन्दुओं में पाये जाते हैं

तथा उनके यहा बहन के पुत्र को अपने पुत्र के मुकाबले म उत्तराधिकार का स्वामी नही माना जाता जसा बाहिको म होता था। यह सही है कि सि ध के कटटर हि दू अभी भी अपने यहा के जाटो को घणा के साथ वहेका अथवा विदेशी कहकर पुकारत हैं परन्तु यह बात सभव प्रतीत नही होती कि एक गैर महत्त्वपूर्ण जनजाति के नाम को, जो नतिकता चरित्र शक्ति अथवा आचरण की शुद्धता मे बदनाम हो, अफगानिस्तान से लेकर मालवा तक रहने वाने लाखो लोग अपना ले। इसके अतिरिक्त किसी भी जाट जनजाति को साकल के साथ अपने सम्ब धो की याद नही है लगभग सभी का विश्वास है कि उनके पूवज भारत के किसी अ दरूनी भाग से इस भूमि पर निवास करने आये थे। इस प्रकार स्पष्ट ह कि जनजातीय नामो की ध्वनि म समानता के आधार पर सुझाय गये तादात्म्य मात्र को उचित नही माना जा सकता।

जत्थर और जाट

जिस प्रकार यूरोपियन विद्वान जाटो की इ डो शिथियन उत्पत्ति सिद्ध करन क लिए यूनानी और लटिन साहित्य म स प्रमाणा की खोज कर रहे थे उसी प्रकार जाट-समाज के कुछ शिक्षित लोग यह सिद्ध करन के प्रयास म रत थ कि जाटो का सम्ब ध प्राचीन काल क क्षत्रिय वण से सम्बद्ध अनक योद्धा जातियो म स किसी एक के साथ है। अलीगढ के एक जाट सस्कृत विद्वान पडित गिरिवर प्रसाद ने अगद शर्मा नाम के एक शास्त्री को प्राचीन साहित्य क आधार पर जाटो की उत्पत्ति के सम्ब ध मे खोज करन का काम सौंपा। शास्त्री ने भी अपने निष्कष ध्वनियो की समानता पर आधारित करके यह बताया कि जत्थर जाटो के परिकल्पित पूवज थे। उ होने अपने विद्वत्तापूण सिद्धान्त का प्रतिपादन जाथरोपत्ति नामक एक सस्कृत पुस्तिका म किया। यह पुस्तिका उन सभी प्राचीन ग्रथो की शृखला है जिनम जाथर मूल जाति का उल्लेख है और जिनकी उत्पत्ति केसम्ब ध मे पदम पुराण म निम्न वणन पाया जाता है— जब भगु क पुत्र परशुराम ने समस्त योद्धा वग क लोगो को मार दिया तो उनकी पुत्रियो न ससार को क्षत्रियो से रहित देखा तथा उनकी पुत्रियो म पुत्र प्राप्त करन की लालसा जागत हुइ उ होने ब्राह्मणा स सम्पक स्थापित किया और सावधानी के साथ उनके बीज को अपने गभ म रखकर क्षत्रिय पुत्र उत्पन्न किए जो जाथर कहलाए।" ग्राउज (growse) न लिखा है कि इस परिकल्पना मे कोई बडी असम्भावना नही है कि जत्थर शब्द का सक्षिप्तीकरण करक उसे जाट बना लिया गया हो परन्तु यदि एक मूल जाति का अवतरण किसी दूसरी जाति स हुआ है तो यह अत्यधिक आश्चय की बात है कि इस तथ्य का उल्लेख पहले कभी नही हुआ। इस कठिनाई का निवारण यह कहकर

चोटी गु नगम गाती आदि माथों से पुकारती है तब उनके उत्साह के ऊपर कोई मर्यादा नहीं रहती। एक बाहिक को कुछ कारण से एक बार कुछ समय के लिए रहना पड़ा। उसने अपने देश की स्त्रियों के सम्बन्ध में लिखा है यद्यपि मैं बाहिक हूँ मैं इस समय कुरु जनपद में निर्वासित हूँ पर मेरी लम्बी और गोरवर्ण पत्नी अपने सुन्दर परिधान में सुख निमग्न ही उस समय याद करती है जब वह विश्राम कर रही होगी। भाई मैं शतद्रु और इरावती को पार करके अपने देश कब जाऊँगा और कब मजबूत चूड़ियाँ पहने बाहों और गालों का पहने मनसिला से नेत्रों को रंगे हुए तथा माथे, गाल और ठोड़ी पर लाल के बिन्दुओं को लिए हुए गोरवर्ण स्त्रियों को देखूँगा। हम कब शादी पीलू और करीर की सुगन्धित छाया में बैठकर ऊँटों के साथ ... हम जो की रोटी खायेंगे और इस प्रकार शक्ति पाकर गाजरों के कपड़े उतारेंगे और उन्हें कब पहनेंगे? मद्रा और गान्धारों में युवक और वृद्ध दोनों ही इसके मदमस्त करते हैं और ऊँची आवाज में गाते हैं। उन लोगों का जीवन स्वर्ग है जो गूमारों गाते गाते ऊँचे और मद्रा का नाम नहीं जाने।

उपरोक्त विवरण में प्राचीन काल के पाञ्चनदिया की भूमि में जिस प्रकार की स्थिति पाई जाती थी उसका स्पष्ट विवरण मिल जाता है। इसके पढ़ने मात्र से ही यह विदित होता है कि अधिकतर वर्तमान जाटों के पूर्वज थे। परन्तु यदि गहराई से इस बात पर विचार किया जावे तो इन दोनों मतों का तारतम्य अवास्तविक प्रतीत होगा। उपरोक्त उद्धरण के उस अंश में जिसमें कहा गया है कि बाहिकों की रचना प्रजापति के द्वारा नहीं हुई यह स्पष्ट है कि वैदिक आर्य भूमि के निवासियों का यह विश्वास था कि उनके क्षेत्र से बाहर की जातियों की उत्पत्ति उन मूलवंशों से हुई है जो उनके मूलवंश से भिन्न थे।'' ये लोग स्पष्टतः उन लोगों के पूर्वज थे जो ग्रियर्सन के मतानुसार वर्तमान पिशाच बोलियों को बोलते हैं— कश्मीर, दरद और हिन्दूकुश के काफिर। जिनके आर्यों का सिर चौड़ा अथवा बीच के आकार का होता था और इसलिए इस बात का प्रश्न ही नहीं उठता कि वे लम्बे सिर वाले जाटों के पूर्वज थे। बाहिक स्त्रियाँ अल्प परिधान तथा कानों पहनती थीं इस तथ्य से केवल यह संकेत मिलता है कि वे यहाँ किसी दूसरे देश से आये थे। कश्मीर की लम्बी गोरवर्ण विलासी और सुन्दर स्त्रियाँ सम्भवतः बाहिक स्त्रियों की वास्तविक प्रतिनिधि हैं। यदि जाट हिन्दुओं के सभी दस संस्कार नहीं मानते तो कुछ को तो अवश्य मानते हैं। उपनयन संस्कार निर्धारित समय पर तो नहीं होता परन्तु विवाह के अवसर पर होता है।'' परम्परा यह है कि पुरोहित विवाह के समय उन्हें जनेऊ पहना देता है और विवाह के कुछ समय बाद उसे उतार दिया जाता है। बाहिकों का विवाह उन्हीं के गोत्र में होता है जो जाटों में नहीं होता। जाटों में उत्तराधिकार के वे ही नियम हैं जो अन्य हिन्दुओं में पाये जाते हैं

तथा उनके यहा बहन के पुत्र को अपने पुत्र के मुकाबले म उत्तराधिकार का स्वामी नही माना जाता जसा बाहिको मे होता था। यह सही हे कि सि ध के कटटर हिदू अभी भी अपन यहा के जाटो को घणा के साथ वहेका अथवा विदेशी कहकर पुकारत हैं पर तु यह वात सभव प्रतीत नही होती कि एक गैर महत्त्वपूण जनजाति के नाम को, जो नतिकता चरित्र शक्ति अथवा आचरण की शुद्धता मे बदनाम हो, अफगानिस्तान से लेकर मालवा तक रहन वाले लाखो लोग अपना ले। इसके अतिरिक्त किसी भी जाट जनजाति की साकल के साथ अपने सम्ब धो की याद नही है लगभग सभी का विश्वास है कि उनके पूवज भारत के किसी अन्दरूनी भाग स इस भूमि पर निवास करने आये थे। इस प्रकार स्पष्ट ह कि जनजातीय नामो की ध्वनि म समानता के आधार पर सुझाये गये तादात्म्य मात्र को उचित नही माना जा सकता।

जत्थर और जाट

जिस प्रकार यूरोपियन विद्वान जाटो की इ डा शिथियन युत्पत्ति सिद्ध करन के लिए यूनानी और लटिन साहित्य म स प्रमाणा की खोज कर रह थ, उसी प्रकार जाट-समाज के कुछ शिक्षित लोग यह सिद्ध करन के प्रयास म रत थ कि जाटा का सम्ब ध प्राचीन काल के क्षत्रिय वण स सम्बद्ध अनक योद्धा जातियो म स किसी एक के साथ है। अलीगढ के एक जाट सस्कृत विद्वान पडित गिरिवर प्रसाद ने अगद शर्मा नाम के एक शास्त्री को प्राचीन साहित्य के आधार पर जाटो की उत्पत्ति के सम्ब ध मे खोज करन का काम सौंपा। शास्त्री ने भी अपन निष्कष ध्वनियो की समानता पर आधारित करके यह बताया कि जत्थर जाटो के परिकल्पित पूवज थे। उ होने अपने विद्वत्तापूण सिद्धान्त का प्रतिपादन 'जाथरोत्पत्ति' नामक एक सस्कृत पुस्तिका म किया। यह पुस्तिका उन सभी प्राचीन ग्रथो की शृखला ह जिनम जाथर मूल जाति का उल्लेख है और जिनकी उत्पत्ति क सम्ब ध म पदम पुराण म निम्न वणन पाया जाता ह— जब भगु क पुत्र परशुराम ने समस्त योद्धा वग क लोगो को मार दिया तो उनकी पुत्रियो न ससार को क्षत्रियो से रहित देखा तथा उनकी पुत्रियो म पुत्र प्राप्त करने की लालसा जागत हुई उन्होंने ब्राह्मणा स सम्पक स्थापित किया और सावधानी क साथ उनक बीज को अपने गभ म रखकर क्षत्रिय पुत्र उत्पन्न किए जो जाथर कहलाए।" ग्राउज (growse) न लिखा है कि इस परिकल्पना म कोई बडी असम्भावना नही है कि जत्थर शब्द का सक्षिप्तीकरण करक उसे जाट बना लिया गया हो परन्तु यदि एक मूल जाति का अवतरण किसी दूसरी जाति स हुआ है तो यह अत्यधिक आश्चय की बात है कि इस तथ्य का उल्लेख पहल कभी नही हुआ। इस कठिनाइ का निवारण यह कहकर

किया जा सकता है कि जाट कुछ अपवादो को छोडकर सामान्यत अशिक्षित रहे हैं और इसलिए उन्होंने अपनी प्राचीन काल से चली आ रही वशावली को जानने की कभी चिन्ता नही की तथा दूसरा को उनके पूर्वजो की खोज करने मे पर्याप्त दिलचस्पी नही थी। परन्तु इसमे भी अधिक अकाट्य आपत्ति हम उस उद्धरण मे देखने को मिलती है जिसे स्वय शास्त्री ने बृहत्-सहिता (XIV ८) से उद्धृत किया है। इसमे जायरो की गृहभूमि दक्षिण-पूर्व मे बताई गई है जबकि यह बात सुनिश्चित है कि जाट पश्चिम से आए थे। सम्भवत जाट बिरादरी के नेता बेसवा पडित के जायरो को और जनरल कनिंघम के सिन्धी जेठो को अपना पूर्वज स्वीकार नही करेंगे क्योकि भरतपुर के राजा अपने को उसी मूल जाति मे सम्बद्ध मानते हैं जो यादवो की थी।''

अपनी उत्पत्ति से सम्बद्ध रहस्य को खोजने का दूसरा प्रयास मेरठ के एक वकील चौधरी लहरीसिंह की एक छोटी-सी पुस्तिका दि एथनोलोजी ऑफ दि जाट्स के द्वारा किया गया। यह पुस्तिका १८८३ की जनगणना अधिकारियो के अनुरोध पर लिखी गई थी। इस लेखक ने भी जाट शब्द की उत्पत्ति जाथर शब्द से निसृत मानी है परन्तु उसका मत जायरोत्पत्ति के लेखक से इस अर्थ मे भिन्न है क्योकि उसकी मान्यता है कि जाथर विदेशी लोग थे और जिन्हे यह नाम महाभारत विष्णु पुराण और भागवत मे उल्लखित जाथर पर्वत से प्राप्त हुआ था। महाभारत और विष्णु पुराण जाथरो के देश का उल्लेख कलिंग काशी और अपरकाशी के साथ हुआ है।

परन्तु जाटो को प्राचीन जायरो का वशज इसलिए नही माना जा सकता क्योकि ध्वनि के स्नेहपूर्ण साक्ष्य का महत्त्व उस समय समाप्त हो जाता है जबकि हम पता चलता है कि इन दोनो लोगो के बीच कोई एसी परम्परा नही पाई जाती जिसे मिलता जुलता कहा जा सके। यह दावा यथार्थ मे इतना अदभुत है कि स्वय जाट उससे आश्चर्यचकित हैं। इस विसगति की ओर आख बन्द की जा सकती थी यदि जायरो का अस्तित्व पूर्णरूप से लुप्त हो गया होता। परन्तु दक्षिण भारत मे वे अभी भी पाये जाते हैं और वे जाटो के साथ अपना किसी भी प्रकार का सबध नही जोडते। ये जायर दक्षिणी मराठा ब्राह्मणो की एक उपजाति है जो करहड के नाम से जानी जाती है।''

जाटो की तथाकथित यादव व्युत्पत्ति

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जाटो की उत्पत्ति कहा से हुई इस सम्बन्ध मे कोई बात निश्चयपूर्वक नही कही जा सकती। हम केवल इतना जानते हैं कि कोई एसा वैज्ञानिक तर्क नही है—भाषा वैज्ञानिक अथवा नृजातिवैज्ञानिक जिसके

आधार पर जाट के इस दावे को अस्वीकार किया जा सके कि उसकी उत्पत्ति इण्डो आयन मूल वश से हुई है और वह न तो सिथियन है और न ब्राह्मण और क्षत्रिय विधवा (जाधर) की वण-सक्र औलाद ह। वह मध्य एशिया अथवा काल्पनिक जाधर पवत से आया हुआ विदेशी आक्रमणकारी भी नही है, बल्कि वह भारत की धरती का वास्तविक बेटा है जिसके पूवज पजाब और सिन्धु-पार के क्षेत्रो मे बसने के पूव मालवा और राजपूताना म निवास करते थ। जाटो को यह बात समझानी मुश्किल है कि वे प्राचीन यादवो क वशज नही हैं। यद्यपि उनके पास अपने इस दावे को प्रमाणित करने के लिए कोई साक्ष्य नही है। अब जबकि उनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध मे प्रतिपादित सभी ऊट-पटाग सिद्धान्तो की वधता विज्ञान की कसौटी पर कसे जान के उपरान्त समाप्त हो चुकी ह हम उनकी तथाकथित यादव व्युत्पत्ति के सिद्धान्त को न्यायिक रूप स उस समय तक अस्वीकार नही कर सकते जब तक वह स्वीकारात्मक ढग से अप्रमाणित न हो जाए। अत यह उचित ही है कि हम इस परम्परा को भी ऐतिहासिक अनुसधान की कसौटी पर परखें और यह जानने का प्रयास करें कि क्या इस सिद्धान्त मे विश्वास करन का कोई तकसगत आधार है।

११वी शताब्दी क इतिहासकार अलबरूनी न श्रीकृष्ण के ज म के सम्बन्ध म निम्न कहानी लिखी है तब मथुरा म वसुदेव के नगर क तत्कालीन शासक कस की बहन स पुत्र उत्पन्न हुआ। वे जाट परिवार से सम्बन्ध रखते थ उनके पास पशुधन था और वे निम्न वण के शूद्र थे। जसा विष्णु पुराण मे लिखा है कि यदु यद्यपि जाटो की ११वी शताब्दी के निम्न शूद्र की स्थिति से कुछ ऊचे थे परन्तु यह उस स्थिति तक लगभग पहुच चुके थे क्योकि राजतात्रिक सविधान द्वारा शासित कट्टर आय जन जातियो की दृष्टि म व बहुत सम्मानित नही थे। (विल्सन का विष्णु पुराण प० ६०२ ६०३) यदु अथवा यान्व स जाट अथवा जट शब्द को व्युत्पन्न करने म कोइ बडी कठिनाई नही है क्योकि जन जातीय नामो का उच्चारण विभिन्न प्रान्तो म विभिन्न प्रकार स होना ह। यदि केवल ध्वनि की कठिनाई जाटो की यादव व्युत्पत्ति क सिद्धान्त को मान्यता प्राप्त करने म व्यवधान पदा करती है तो जाटो की हैहय यादवो की एक शाखा जट्टाआ अथवा सुजाटो स पहचान करने म कोई कठिनाइ नही होनी चाहिए।" विष्णु-पुराण म लिखा है सुजाट अपनी बडी सख्या क लिए सामान्य रूप स नही जाने जाते। (विल्सन प० ४१८ फुट नोट २०)। अत हम इस बात पर आश्चय नही करना चाहिए कि ब्रह्म सहिता अथवा बाद की सस्कृत रचनाओ म जाटो का उल्लेख उनक विशिष्ट जनजातीय नाम से नही हुआ। यहा यह तक प्रस्तुत किया जा सकता है कि हैहय दक्षिण के लोग थ जो नमदा क तट म निवास करते थ और इसलिए उन्हें वतमान जाटो का पूवज नही माना जा सकता क्योकि व मुख्यत सिन्ध और पजाब म पाए जाते

है। इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि जाटों की आज भी नर्मदा घाटी में भोपाल तथा अन्य स्थानों पर संख्या कम नहीं है तथा हैहया का उल्लेख पश्चिम के लोगों के रूप में बहुत महिता (संस्कृत मूल पाठ अध्याय १४ पृ० २९१) में हुआ है। कालान्तर में यदु कबीला उत्तर-पश्चिम की ओर चला गया। बाल मूतर चहान और कहला के जाट कबीले मालवा धार और दक्षिण को अपनी मूल गृह भूमि बताते हैं। (राज की पंजाब ग्लोसरी ॥) वर्तमान जाटों की भांति प्राचीन यादव भी एकरूप नहीं थे किन्तु वे एक मिली जुली जाति के थे। दरअसल उन्हें अनेक कबीलों का संघ कहा जा सकता है जिसमें अंधक भोज कुकुर दशार्ना आदि कबीले शामिल थे। परन्तु यह कहना सच नहीं होगा कि उस गणना का आधार केवल जन्म है। समाज के कबायली चरण में एक कबीले का दूसरे कबीले में विलय एक आम बात थी। जाटों के विभिन्न गोत्रों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में परस्पर विरोधी परम्पराएं हैं यहां तक कि डेरा गाजी खां के बब्बर भी अपने को जाट होने का दावा करते हैं इन तथ्यों से यह बात स्पष्ट हो जाती है। यदु मूलवंश से सम्बद्ध ये लोग स्पष्टतः बाहर से आए थे। इस बात की पुष्टि भागवत पुराण के एक लेखांश से हो जाती है जिसमें लिखा है कि राजा सगर ने हैहया का अन्त करके अपने हथियार शक यवन और बबरों के विरुद्ध उठाए जिन्होंने उसके पूर्वजों के विरुद्ध हैहयों का साथ दिया था (संस्कृत मूल पाठ स्कन्द IX अध्याय ८) हरिवंश ने पुरु एवं यदु के वंशजों के बीच चली आ रही आनुवंशिक लड़ाई का उल्लेख किया है। यह लड़ाई वास्तव में शास्त्र सम्मतता (orthodoxy) तथा शास्त्र विपरीतता (hetrodoxy) के बीच लड़ाई थी—एक ओर शुद्ध आर्य थे और दूसरी ओर यादवों के नेतृत्व में युद्ध करने वाले बाहर के लोग। कबायली संघर्ष का इसी प्रकार का रूप जिसमें विदेशी भी किसी एक गुट का साथ देने लगते हैं आज भी रोहतक और दिल्ली के जिलों में देखा जा सकता है। इन जिलों का देहात दो गुटों में विभक्त है—दाहिया और अहूलन। इस क्षेत्र के गूजर और तगा थाया नौन्था के जागलन जाट तथा रोहतक के लाटमार जाट दाहियों के साथ मिले हुए हैं और रोहतक के हूडा जाट अहूलनों के साथ। इस प्रकार का विभाजन सोनीपत और एक सीमा तक दिल्ली तहसील में भी देखा जा सकता है और लोक मस्तिष्क में इसकी जड़ इतनी गहरी है कि मुसलमान भी किसी न किसी गुट के साथ जुड़ हुए हैं। इस प्रकार पच एगूरान के मुसलमान गूजर और उनके पड़ोसी गांव के लोग अपने को दाहिया कहते हैं। (रोज की पंजाब ग्लोसरी ॥ २४०)

आधुनिक इतिहास में पिछले युग के कबायली संघर्षों का इससे अच्छा कोई दूसरा उदाहरण नहीं है।

परशुराम के हाथों यदु मूलवंश के लोगों को भयानक प्रतिशोध को भुगतना

पडा, उन्होने ईश्वर म आस्था न रखने वाली तथा आततायी योद्धा-जाति को लगभग समाप्त कर दिया था। इनमे स कुछ न भाग कर पहाडो म शरण ली थी और कुछ ने निम्न जातियो म अपने को विलीन करके अपन को छिपा लिया था। बिना किसी अनुदेशन अथवा धर्मानुष्ठान के वे शूद्रो की भाति बढे हुए। उदार ऋषि कश्यप न उन्हे पुन क्षत्रिय के रूप मे मान्यता प्रदान की। सम्भवत नव क्षत्रियों के वग की यह पहली रचना थी जसे बाद के युग म अग्निकुलों की हुई थी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कश्यप गोत्री जाटो की जो अपने म राजपूत रक्त होने का दावा करते हैं—उत्पत्ति प्राचीन यादवो म से हुई है और उनके इस गोत्र का नाम उस महात्मा का उनके प्रति किय गये अनुग्रह के कारण कश्यप पडा।

ऐतिहासिक काल से जाट बिरादरी हिन्दू समाज के अत्याचारो स भाग कर निकलने वाले लोगो को शरण देती आई है उसने दलितो और अछूतो को ऊपर उठाया है उनको समाज म सम्मानित स्थान प्रदान कराया है तथा शारीरिक बनावट और भावनाओ म उन्हे एकरूप आय सरचना दी है। यदि जाट की उत्पत्ति का सही तरीके से पता लगाना है तो हम मुख्य धारा म ऊपर की ओर चलना है न कि सहायक धाराओ मे। यह कहना कि जाटो की उत्पत्ति बाहर के लोगो से है क्योकि उनमे कुछ विदेशी कबीलो का विलय हुआ है उसी प्रकार मूखतापूण है जितना कि यह कहना कि गगा हिमालय से अवतरित न होकर विन्ध्याचल से अवतरित हुई है क्योकि सोन नदी विन्ध्याचल स कुछ पानी उसमे लाकर मिलाती है।

लोगो का स्थानान्तरण

जाटो का स्थानान्तरण भारतीय सीमा के उस पार उत्तर-पश्चिम म किस प्रकार हुआ इसका प्रामाणिक इतिहास है क्योकि इतिहास के ऊषा काल म ही वे किरमान और मन्सूर तथा फारस के सीमान्तो पर स्थित क्षेत्रो मे अरब भूगोलशास्त्रिया और इतिहासकारो के द्वारा देखे गय थ।[1] व पहने हिन्दू थे जो अरबो के सम्पक म आये थे तथा अरब सभी हिन्दुआ को केवल जाट के नाम से जानत थ। उनक द्वारा हिन्दू साम्राज्य के पिछवाडे की रचना होती थी जिसका उस समय इस्लाम क अविवकी उदय के उपरान्त सिन्धु नदी के पूव की ओर हटना आरम्भ हो चुका था। जाटो के इस प्रकार पूव की ओर हटने के फलस्वरूप इस सिद्धान्त का जन्म हुआ है कि जाट बबर आक्रमणकारी थ। यह सम्भव है कि जाट चूकि हमेशा स उत्साही और सैनिक सेवा के लिए आतुर रहे हैं इसलिए उन्होने पशियन और मौय सम्राटो के यहा वेतनभोगी सनिको की भूमिका निबाही हो। शास्त्रसम्मत

ब्राह्मणवाद का विरोध करने के कुफ्र के लिए उन्हें बाद के समय में काफी भुगतना पड़ा। सिन्ध में उन्हें शासक के स्थान से हटाकर वहां के ब्राह्मण अपहारक (usurper) चच ने उन्हें दास की स्थिति प्रदान कर रखी थी और शास्त्रसम्मतता के इस विरोध को ही मध्य युग में जाटों के सामाजिक पराभव के लिए एक बड़ी सीमा तक उत्तरदायी कहा जा सकता है।

जाट और उनका आरंभिक इतिहास

ईसाई सम्वत् की आरम्भिक शताब्दियों में मध्य एशिया से स्थानान्तरण की अनेक लहरें तो डूब गई परन्तु उनमें से कुछ ने जाटों तथा अन्य भारतीय मूल जातियों को सिन्धु नदी के तट पर ला पटका। सिन्धु का दुर्गम्य रेगिस्तान अब उनका नया घर बन गया। अशुद्ध जातियों के साथ सम्पर्क स्थापित करने अपनी शास्त्र विरोधी जीवन-पद्धति तथा जाति के नियमों और ब्राह्मणों के उपदेशों के प्रति उदासीनता के कारण उनकी जाति समाप्त हो गई तथा ... व हिन्दुओं की भांति

था) अपन कबील के लोगो को समझाया कि एक समय था जब मेद जाटो पर आक्रमण करते थे और उन्हे हैरान करते थे तथा जाटो ने भी बदला लेकर मेदो के साथ वही किया। उसने उनके मस्तिष्क पर इस प्रभाव को छोडने का प्रयास किया कि दोनो कबीलो के लिए शान्ति मे रहना उपयोगी है अत उसने जाटो और मेदो दोनो को यह परामर्श दिया कि उन्हे अपने कुछ सरदार राजा दहरत (धनराष्ट्र) के पुत्र दजूशन (दुर्योधन) के पास भेजने चाहिए और उनसे यह अनुरोध करना चाहिए कि वह उनके लिए एक राजा नियुक्त कर दे, जिसकी सत्ता को दोनो जन जातियो के समूह स्वीकार कर लें। कुछ विचार विमर्श के उपरान्त उन्होने उस पर अमल करना स्वीकार कर लिया तथा सम्राट दजूशन ने शक्तिशाली राजा जयद्रथ की पत्नी तथा अपनी पत्नी दसाल (दुशाला) को उनका शासक नियुक्त कर दिया। दसाल ने वहा जाकर जाटो और मेदो के शासन का दायित्व अपने हाथो मे ले लिया। उस समय वहा कोई ब्राह्मण अथवा बुद्धि व्यवसायी व्यक्ति उनके देश मे नही था। फलत उसने अपने भाई की सहायता के लिए एक लम्बा पत्र लिखा उसने समूचे हिदुस्तान से ३०,००० ब्राह्मण इकट्ठे किए तथा उन्हे उनके सामान और आश्रितो के साथ अपनी बहन के पास भेज दिया। (इलियट I १०४)[1]

यद्यपि यह कहानी अक्षरश सही नही है, तथापि उसमे अस्पष्ट रूप से इस बात का सकेत अवश्य मिलता है कि सिन्ध मे शुद्ध आर्यों का मुख्यत ब्राह्मणो का देश के मध्यवर्ती क्षेत्र से स्थानान्तरण हुआ था। सम्भवत किसी प्रबुद्ध राजा ने उन्हे आमन्त्रित किया था ताकि उसके प्रजाजनो एव सजातीय लोगो को अज्ञान एव अधम से मुक्त रखा जा सके। शायद ब्राह्मणवाद के प्रद्योत नगर से इस बात का सकेत मिलता हो कि वहा सबसे पहले ब्राह्मण आकर बसे थे। स्थानीय राजाओ के सरक्षण मे उनकी पर्याप्त उन्नति हुई यहा तक कि वे इतने शक्तिशाली हो गये कि १०वी शताब्दी मे दाहिर के ब्राह्मण पिता चच ने अपने स्वामी राजा साहसी राय II से उसकी सुन्दर परन्तु बेवफा रानी सुहान्दी की सहायता से जो उससे प्रेम करने लगी थी उसका राजपाट छीन लिया। उसने औपचारिक रूप से उसकी विधवा रानी से विवाह कर लिया तथा चालीस वर्षों तक वह वहा शासन करता रहा। चच ने एक बुद्धिमान एव प्रबुद्ध शासक की ख्याति अर्जित की। परन्तु वह जाटो का प्रबल शत्रु था उसने अधिकाश जाटो की स्थिति भूदास जैसी कर रखी थी। उसने जाटो और लुहानो को काफी परेशान किया उनके सरदारों को उसने बन्दी बनाया। उनमे से कुछ को उसने ब धक बनाकर ब्राह्मणावाद के किले मे रखा।

उसने उन्हे निम्न शर्तों को मानने के लिए विवश किया— वे अपने पास कभी तलवार नही रखेंगे नकली तलवारो को वे रख सकते थे उन्हे अधो वस्त्र जान मखमल और रेशम के नही हो सकते थे उन्हे अपने घोडो पर जीन कसने की भी

इजाजत नहीं थी तथा उनके लिए अपने सिरों और पैरों को नंगा रखना अनिवार्य था, बाहर जाते समय उनके लिए यह भी आवश्यक था कि वे अपने कुत्तों को अपने साथ ले जाएं उनका यह भी कर्तव्य था कि वे ब्राह्मणाबाद के सरदार की रसोई के लिए लकड़ी के ईंधन की व्यवस्था करें, मार्गदर्शकों और गुप्तचरों के प्रबन्ध का दायित्व भी उनको सौंपा गया था तथा उनसे इन पदों पर नियुक्त होने के उपरान्त शासक के प्रति निष्ठा की अपेक्षा की जाती थी। (चचनामा ईलियट I १५१)। जब मोहम्मद बिन कासिम ने दाहिर के राज्य पर आक्रमण किया तो पश्चिमी सीमान्त के जाटों ने आक्रमणकारी का साथ दिया जबकि पूर्व के लोगों ने दाहिर के साथ आक्रमणकारी के विरुद्ध लड़ाई लड़ी। (देखिए चचनामा मिर्जा कलीच बेग का अनुवाद पृ० १८८ १३७)।

अपनी विजय के पूर्ण होने के पश्चात मोहम्मद बिन कासिम ने दाहिर के एक भूतपूर्व मंत्री से जिसको उसने वजीर बना लिया था पूछा कि पिछले राजा के समय में जाटों की क्या स्थिति थी? उसने उत्तर दिया कि उन्हें अच्छे वस्त्रों को पहनने की अनुमति नहीं थी वे काला लुंगी पहनते थे तथा अपने कंधों पर मोटा कपड़ा डालते थे। वे अपने कुत्तों को अपने घर से बाहर जाते समय अपने साथ रखते थे ताकि उन्हें पहिचाना जा सके। उनका यह काम था कि वे एक कबीले को दूसरे कबीले के साथ सम्पर्क स्थापित करायें वे रात दिन उनके मार्ग-दर्शन में चला करते थे। उनमें छोटे और बड़े का कोई विभेद नहीं था। उनमें जंगली आदमी की प्रवृत्ति है और वे अपने स्वामी के विरुद्ध हमेशा बगावत करते थे। वे सड़कों पर लूटमार करते थे तथा देवल के प्रदेश में सभी उनकी इन डकैतियों में उनका साथ देते थे। (ईलियट, I १८७)। शासकों के परिवर्तन से उनके जीवन में कोई सुधार नहीं हुआ मोहम्मद बिन-कासिम ने उनके सम्बन्ध में पुराने नियमों को कायम रखा। ककन देश पर (सम्भवतः दक्षिण-पूर्वी अफगानिस्तान ईलियट I, ३८३) जाटों का स्वतंत्र आधिपत्य था जिसे बाद में उनसे अरब सेनापति अमरान बिन मूसा ने खलीफा अल मुतासिम-बी इल्लाह के शासन काल में (८३३ ८१) में छीन लिया (इलियट I ४४८)। इसी शासन काल में जाटों के विरुद्ध एक और अभियान भेजा गया उन्होंने हजारे की सड़कों पर आधिपत्य स्थापित कर रखा था सड़कों पर उनका आतंक कायम था तथा रेगिस्तान की ओर जाने वाली सभी सड़कों पर उनकी चौकियां थी। पच्चीस दिन की घमासान लड़ाई के बाद उन पर काबू पाया जा सका। युद्ध में उनके सत्ताईस हजार लोग बन्दी बनाए गए। इन लोगों में युद्ध के लिए जाते समय तुरई बजाने का रिवाज था। (ईलियट II २४७)

औरंगजेब के समय के पूर्व के इतिहासों में जाटों का थोड़ा-बहुत उल्लेख मिल जाता है परन्तु उसका व्यावहारिक महत्व कुछ नहीं है। हां उससे उनकी राष्ट्रीय

विशिष्टताओं की जानकारी अवश्य हो जाती है। इन सभी मामलों में—चाहे वह गजनी के सुलतान महमूद के विरोध में हो अथवा नादिरशाह और अहमद शाह अब्दाली के विरुद्ध जाटों ने प्रतिकूलतम परिस्थितियों के होते हुए भी अथवा महान विजेताओं द्वारा स्थापित आतंक की चिन्ता न करते हुए पीछे हटती सेनाओं के पिछवाड़े पर आक्रमण किया है। यदि मुकाबला हुआ तो उन्होंने दृढ़ता एवं शौर्य को प्रदर्शित करने में कोई कोताही नहीं बरती और ऐसा करते समय उन्होंने रणक्षेत्र में होने वाली तबाही का अथवा युद्ध में पराजित होने के उपरान्त अपनी नियति में लिखी दुर्दशा पर कोई ध्यान नहीं दिया। अपने शत्रुओं की तलवारों द्वारा सिखाए गए भयानक पाठों के सन्दर्भ में उनकी स्मरण शक्ति आश्चर्यजनक रूप में दुर्बल रही है।

जब महमूद गजनवी सोमनाथ से लौट रहा था, तब जाटों ने उसकी सेनाओं पर आक्रमण करने का दुस्साहस किया था। उसका सत्रहवां आक्रमण उनको दंडित करने के उद्देश्य से ही हुआ था। उस इस अवसर पर एक बड़ा सामुद्रिक युद्ध लड़ना पड़ा था जिसमें उसने अपनी भूमि पर लड़े गए युद्धों के समान ही प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। उसने एक बड़े सैन्य दल को मुल्तान की ओर बढ़ने का आदेश दिया और जब वह वहां पहुंच गया उसने एक हजार चार सौ नौकायें बनवाईं जिनमें प्रत्येक में तीन मजबूत लोहे के नोकदार बरछे लगे थे जिनमें से एक नौका के आगे की ओर लगा था और दो अगल-बगल में लगाये गए थे ताकि जो भी उनके सम्पर्क में आए वह अनिवार्य रूप से नष्ट हो जाए। प्रत्येक नाव में बीस धनुषधारी थे जो तीर-कमान हथगोले और नफ्था से लैस थे और इस प्रकार उसने जाटों पर आक्रमण करने की योजना बनाई। जाटों को जब इस सम्भावित आक्रमण की सूचना मिली तो उन्होंने अपने परिवारों को द्वीपों पर भेज दिया और संघर्ष के लिए अपने को तैयार कर लिया। कुछ विद्वानों के अनुसार उन्होंने चार हजार और कुछ के अनुसार आठ हजार नौकाओं के साथ जो सैनिकों और शस्त्रों से भली भांति सुसज्जित थीं मुसलमानों के आक्रमण का प्रतिरोध किया। दोनों के युद्ध-पोतों का मुकाबला हुआ और भयंकर युद्ध हुआ। जाटों की प्रत्येक नौका जब मुस्लिम जंगी बेड़े के सम्पर्क में आई तब वह आगे निकली हुई नोकदार बरछियों से टकराकर चूर चूर हो गई और समुद्र में डूब गई। इस प्रकार अधिकांश जाट भी डूब गए और जो शेष बच रहे उन्हें तलवार से मार दिया गया। सुल्तान की सेनाएं इसके पश्चात उन स्थानों पर गईं जहां उनके परिवार के सदस्य छिपे हुए थे। उसने इन लोगों को बन्दी बना लिया। (तबकात-ए-अकबरी इलियट द्वारा उद्धृत II ४७८)

११९२ में पृथ्वीराज की पराजय के उपरान्त हरियाणा के जाटों ने जटवान नामक एक योग्य सरदार के नेतृत्व में जातीय विद्रोह का झण्डा बुलन्द किया

और उन्होंने हांसी में मुस्लिम सेनापति की नाकेबन्दी कर दी। इसकी सूचना पाने के उपरान्त कुतुबुद्दीन ने एक रात में चालीस मील का सफर तय किया। जटवान ने अपना हांसी का घेरा हटा लिया और उसने एक दृढ़ संघर्ष की तैयारी की। ताज उल मासीर के लेखक ने लिखा है— सेनाओं ने इस्पात की दो पहाड़ियों की भांति एक-दूसरे पर आक्रमण किया तथा बागड़ देश के सीमान्तों पर स्थित युद्ध-क्षेत्र योद्धाओं के रक्त से रंग बिरंगा हो गया जटवान के बहु-देववाद एवं सर्ववाद के झण्डे को शक्तिशाली हाथों ने नीचे गिरा दिया। (ईलियट II २१८)।[1] १५३० के आसपास जाटों ने सुनाम और समाना के इर्द गिर्द भटिटयों मीनाओं तथा अन्य जनजातीयों के साथ मिलकर मंडलों की रचना की उन्होंने खिराज देना बन्द कर दिया और सड़कों पर लूटपाट करने लगे। सुल्तान मोहम्मद बिन-तुगलक ने उनके खिलाफ सैनिक कार्यवाही की उसने उनके मंडलों को तोड़ दिया उनसे उनकी पुरानी भूमि छीन ली तथा उन्हें तितर बितर कर दिया। (तारीख ए फीरोजशाही ईलियट III २४५)। तैमूर ने अपने द्वारा किए गए जाटों के दमन पर सन्तोष व्यक्त किया है। उसने जाटों के सम्बन्ध में कहा है कि वे हृष्ट-पुष्ट होते थे सूरत शक्ल में वे राक्षसों की तरह थे और संख्या में वे चींटियों अथवा टिड्डियों की भांति थे व्यापारियों और राहगीरों के लिए वे महामारी की भांति थे। (मलफूजात-ए तिमूरी इलियट III ४२६)

बाबर ने जाटों को नील आब और भेरा पर्वतों के बीच निवास करते हुए देखा था जहां उन्होंने गक्कर सरदारों का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया था (ममोर्स आफ बाबर ए० एम० बवरिज पृष्ठ ३८७) इस समय तक उनकी हुल्लड़ करने वाली तथा लूटमार करने की आदत पूर्ववत कायम थी। उसने लिखा है यदि कोई हिन्दुस्तान जाए तो जाटों और गूजरों के असंख्य झुंड पहाड़ों और मैदानों से बैलों और भैंसों पर चढ़े हुए नजर आएंगे। ये बद शकुन वाले लोग बिना किसी उद्देश्य के लोगों को सताते हैं। जब हम स्यालकोट पहुंचे उन्होंने हल्ला मचाकर उन गरीबों और दरिद्रों को जो नगर से निकलकर हमारे खेमे में आ रहे थे हमला कर दिया तथा उनके कपड़े उतारकर उन्हें नंगा कर दिया। मैंने इन मूर्ख चोरों को पकड़वाया और उनमें से दो या तीन को कटवाकर टुकड़े करवा दिए। (उपरोक्त पृष्ठ ४५४)।

बाबर की मृत्यु और शेरशाह के सिंहासनारोहण के बीच के गड़बड़ी के समय में कोट कबूलाह के एक बहादुर डाकू सरदार फतेखान जाट ने लाखी जंगल का समूचा क्षेत्र नष्ट कर दिया तथा लाहौर से पानीपत तक के समूचे भाग पर अपना आतंक स्थापित कर दिया। शेरशाह की तरफ पंजाब के सूबेदार हैबत खां नियाजी ने एक कठोर लड़ाई के बाद उसका दमन करने में सफलता प्राप्त की।[1]

सूर वशीय सुल्ताना और मुगला क मजबूत शासन तत्रो म जाटो के लिए अपन कानून विरोधी क्रिया कलापो को निष्पादित करन की गुजाइश बहुत कम थी। यह स्थिति औरगजब क समय तक चलती रही। फलत व उस समय तक खामोश बैठे रहे जब तक कि सम्राट के धार्मिक उत्पीडन और प्रान्तीय सूबेदारा के कुशासन न उन्हें विद्रोह करने के लिए नहीं उकसाया।

सदभ

१ कारमान तथा इराक म जाट और जिप्सी लोगो का मिश्रण पाया जाता है जिनकी सख्या २० हजार है तथा मकरान और अफगानिस्तान म इनकी सख्या ५० हजार है।
देखिए एशिया लेखक ए० एच० कीन सर रिचड टेम्पल द्वारा सम्पादित प० २१० २१८

२ रिसले पीपुल्स आफ इण्डिया पृ० ८

३ इब्बटसन पजाब ग्लौसरी II म उद्धत पृ० ३६६

४ जिमर न ऋग्वद क एक उद्धरण स यह प्रदर्शित किया है कि कभी कभी विधवा अपन पति क छोटे भाई म विवाह कर लेती थी।

५ इब्बेटसन सेन्सस रिपोट १८८१ परा ४४६

६ बीम्स न लिखा ह जाटो की आयन व्युत्पत्ति क सिद्धान्त का यदि खडन करना ह ता उसक विरुद्ध जितन तक दिय गय हैं उनम अधिक शक्तिशाली तर्कों क दिय जान की आवश्यकता है। शारीरिक प्रकार और भाषा ऐस विचार हैं उन्ह केवल शब्दा की समानता क कारण अमान्य नहीं माना जा सकता विशषत उस समय जबकि शब्द यूनानियो और चीनिया क उच्चारण क कारण हमारे सामन इस प्रकार प्रस्तुत होत हैं कि व पहचान भी नही जात।
इलियट ममाइस आफ दि रमज ऑफ नाथ वेस्टन प्रोविन्सेज आफ इण्डिया I १३३ १३७

७ रिसन न लिखा है मिथियल लागो क सभा अवशष मिट चुक है और वह विद्यार्थी जो यह जानना चाहता ह कि उनका क्या हुआ उस इस आधुनिक अदाज म अधिक सुनिश्चित कोई तथ्य नहा मिलता कि उनका प्रतिनिधित्व जाटो और राजपूता के द्वारा होता है। परन्तु इस मत क पक्ष म जो तक प्रस्तुत किया गया है वह सारहीन वणन है जो इस सन्देहपूण मान्यता पर आधारित है कि आजकल जिन लोगा का जाट कहा जाता है व वह लोग थ जिन्हे

हरोडोटस गट के नाम स पहचाना था। (पीपुल आफ इण्डिया पृ० ६० ६८
८ रिमने पीपुन आफ इण्डिया प० ६
६ ग्रियसन न जाट बिरादरी की एक बडी सख्या के द्वारा बोली जाने वाली सिन्धी और पजाबी मे पिसाका भाषा की विशिष्टताए अवलोकित की है। परन्तु सभवत य विशिष्टताए उन्होने पिसाका बोलन वाल आक्रमणकारियो स नही ली परन्तु उन लागो की भाषा स ग्रहण की जा पूर्वी तुर्किस्तान की होमो एल्पीटम स मिलती जुलती थी। आर० पी० चन्दा इण्डो एथन दसेज प० ७८
१० सर जेम्स कम्पबेल उन्हे विदेशी मानता है जिन्होन कुश झुण्ड के साथ जिनका सवश्रेष्ठ प्रतिनिधि कनिष्क था—१५० और १०० ई० पू० म भारत म प्रवश किया। ग्रियसन उन्ह श्रेष्ठ आय मानता ह काफिर नही। वाराहमिहिर ने दो प्रकार के लोगो का उल्लख किया ह—जटासुर उत्तर पूव म और जटाधार कावेरी के निकट दक्षिण म। इनके नाम ग्रियसन क विद्वत्तापूण कानो म जाट जसे ध्वनित हुए होग।
देखिए—बृहत सहिता (सम्पादित—सुधाकर द्विवेदी खड १०) प्रथम भाग प० २६३ २६६
११ आर० पी० चन्दा इण्डो एथन रेसज I प० ४२
१२ होशियारपुर डिस्ट्रिक्ट गजट १८८३ प० ५५—उन ब्राह्मणा क यहा जिन्होने कृषि का उद्यम अपना लिया ह अधिष्ठापन सस्कार निर्धारित समय पर शायद ही होता ह। लडको को विवाह के समय जनऊ दे दिया जाता ह।
१३ क्षत्रवशूये पुरालोक मागवन यदाहृत।
विलोक्या क्षत्रिया धावी हयास्तथा सहस्त्रश।
ब्राह्मणान जगहुस्तस्मिन पुत्रोत्पादन लिप्सया।
जन्ठरे पारित गभ मरक्य विधिवतपुरा।
पुत्रान सुपसिरे कन्या जाठरान क्षत्रवशमान॥
१४ ग्राउज मथुरा (१८७८) प० २१ २२
१५ इस सम्बन्ध म जी० बी० जायर न मुझ ८ अगस्त १६२४ को लिख एक पत्र म मूल्यवान सूचना भजी ह।
१६ कार्तवीर क १०० पुत्रो म म पाच प्रमुख थ—सूर सूरसन वृष्ण मधु आर जयध्वज। अन्तिम म हैहय कबील के पाच महान सम्भागा का उदय हुआ—तालजध वितिहोत्र अवन्य तुण्डिकेरा और जाट जिन्ह सुजात भी कहा जाता था। विन्सन ने इस सम्बन्ध म सन्देह व्यक्त किया ह कि क्या हैहय हूण और शक कबीला के आत्मज नही थ जिन्ह पुराणो क चतुर नुवनाकारा न आय वशावली पर आरोपित कर दिया। बीम्स न लिखा ह। जाट गुप्त

जवर तथा अय नामा म जान गा। थ। इस व्ग विवाद की चना परिशिष्ट यट् म करेंगे।

१७ इलियट हिस्ट्री आफ इण्डिया I पृ० १४ ४१८ II पृ० २४७

१८ एद वतमान नखक न लिखा है – सिधु घाटी के इन जाटो न जाति की मस्या का पूण रूप म कभी स्वीकार नहा किया तथा शेप हिन्दू उह उम भावना म देखत हैं जो वचका अथवा विल्णी शब्दा म निहित हैं। (एशिया नखक—ए० एच० कीन पृ० २६६) यह निस्म देह वही शब्द है जिस महाभारत म वहेका कहा गया है और जा जन्मिवका मदरा तथा सिधु सौवीर प्रान्तों क लोगा क लिए प्रयुक्त किया गया है।

१६ यह निस्मन्देह एक एसी कहानी है जिसकी पुष्टि महाभारत तक म नही हुई है। तथापि इसम मिलती जुलती कहानी हम १२वी शताब्दी क बगाल क इतिहास म देखन को मिलती है। सूरवश क प्रख्यात सस्थापक आदिसुर न कन्नौज म पाच ब्राह्मण उमक यहा पुरोहित का काम करन क लिए बुलाए थ जिन्हान बगाल म ब्राह्मणवाद को पुन स्थापित किया।

२० मडल कोई किला नही है जैसी ईलियट की मायता है। उसका अथ है अध-सघ अनक ग्रामा तथा कबीलो का समान उद्देश्य के प्रति पारस्परिक महायता क लिए यूनियन। इस प्रकार के सगठन यद्यपि कम हैं तथापि देश क इस भाग म आज भी देख जा सकत हैं। उनकी रचना या तो सामूहिक हितो की प्राप्ति क लिए होती है और या दूसरों की अयायपूण मागो का विरोध करन क लिए तथा अपनी शिकायतो क निवारण के लिए।

२१ हवन खा की फथखान जाट क विरुद्ध लडाई (निखर की पुस्तक शेरशाह पृ० ३०८ ३११)

दूसरा अध्याय

औरगजेब के शासन-काल मे जाट-इतिहास

हिन्दू प्रतिक्रिया और जाट शक्ति का उदय

अकबर के निद्राजनक जादू जहागीर की सुखद उदासीनता तथा शाहजहा की कोमल थपकियो के द्वारा उत्पन्न एक शताब्दी की मायावी निद्रा के उपरान्त हिन्दू भारत यकायक सन्त सम्राट औरगजेब के पवित्र कायकलापो के द्वारा १७वी शताब्दी के अर्धांश मे जागृत कर दिया गया। वह दिल्ली के सिंहासन पर विराजमान शासक को चाहे उसका सम्बन्ध विजातीय धम के साथ ही क्यो न हो पथ्वी पर भगवान की छाया मानने का अभ्यस्त था। दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा की उक्ति उसके मानस म भली प्रकार जडें जमाए हुई थीं। किन्तु अब जागृत हिन्दू को यह देखकर आश्चयपुक्त दुख हुआ कि हिन्दुस्तान का निष्पक्ष शासक इस्लाम का युद्धकारी प्रचारक बन गया है। उसने पुराने और विस्मृत सभी तरीके फिर स अपना लिए हैं जजिया फिर से लागू कर दिया गया शाही देख रेख म मदिरो को नष्ट करने तथा मूर्तियों को तोडने का काम तेजी के साथ चलता रहा सब दिशाओं से गाडिया भर भरकर टूटी हुई मूर्तिया आती रहीं और उन्हे दिल्ली और आगरा की जुम्मा मस्जिदो की सीन्यों के नीचे दफनाया जाता रहा। सावजनिक पदों स हिन्दू-वचित कर दिए गए एक अध्यादेश जारी किया गया जिसके द्वारा राजस्व विभाग से सभी हिन्दू लिपियों को हटा दिया गया। हिन्दुओ के धार्मिक मेलों पर पाबन्दी लगा दी गई तथा उनके त्यौहारो क सार्वजनिक अनुष्ठानो पर प्रतिबन्ध आरोपित कर दिये गए। मुसलमान व्यापारी सीमा शुल्क से पूणत मुक्त कर दिए गए जबकि हिन्दुओं पर वह पूववत बना रहा। हिन्दुओ को अपने मूर्तिपूजक धम को तिलाजलि देने के लिए राज्य द्वारा सहायता का प्रलोभन दिया गया। सक्षप म निष्ठुर हत्या को छोडकर हिन्दू प्रजाजनों क धम को परिवर्तित करवाने के लिए सभी उपाय प्रयुक्त किए गए।[1] यह एक विचार को कठोरता तथा दृढ़ता

पूर्वक ठोस रूप देने का प्रयास था, यह न तो किसी झक्कीपन से अनुप्राणित था और न उसे पापमय ही कहा जा सकता था। उसका कसूर यह था कि उसे सफलता नहीं मिल सकी इस्लामिक भारत का उसका स्वप्न पूरा नहीं हो सका।

तथापि इसी खुली शत्रुता के द्वारा औरंगजेब ने बिना जाने हिंदू राष्ट्रवाद को पुनर्जीवित कर दिया जिसको उसके पूर्वजों ने अपनी क्रूर दया के द्वारा करीब करीब मार दिया था। सुदूर महाराष्ट्र से एक नये जीवन का स्पंदन आता दिखाई पड़ा जिसने उत्तर की ओर चलकर हिन्दू-समाज के सबका लगे अंग को भी झकझोर दिया। पंजाब में उत्पीड़न के फलस्वरूप भावुक भक्तों का एक विनम्र सम्प्रदाय क्रूर सैनिकों में परिवर्तित हो गया। गुरु गोविन्दसिंह का सिख मत इसका वास्तविक प्रतिवाद था। धर्मान्धता की टक्कर धर्मान्धता के साथ थी, सिख मुस्लिम सेनाओं से युद्ध करने के लिए जाते समय यह गाते थे— 'खालसा वह है जो बन्द गाड़ी में बैठकर युद्ध करता है तथा जो एक खान को मारता है।' औरंगजेब ने *जसवंत की पत्नियों तथा उसके बालक पुत्र को बन्दी बनाने का प्रयत्न करके* राजपूतों की आँखें खोल दीं। बहादुर दुर्गादास ने मार्ग प्रशस्त किया और राठौरों की तलवारें स्वतन्त्रता और धर्म की रक्षा के लिए म्यानों से निकल आयीं। उसके देशवासियों ने उसकी स्मृति को इन शब्दों के साथ श्रद्धांजलि दी है—'यदि असकरन के घर में दुर्गा का जन्म न हुआ होता तो सभी का खतना हो जाता।'[१]

१६६६ में शाही राजधानी की छाया में रहने वाली एक दूसरी हट्टी-कट्टी जाति जाटों ने विद्रोह का झंडा बुलन्द कर दिया। यह तो उस प्रचंड अग्नि-काण्ड की केवल एक चिनगारी मात्र थी जिसे समूचे भारत में सम्राट के धर्म प्रचारात्मक जोश ने प्रज्वलित किया था। मथुरा और आगरा जिला के जाट एक लम्बे समय से दमन और कुशासन के शिकार हो रहे थे। मथुरा के हिंदू मन्दिरों के ध्वंस से, जिनकी ऊँची मीनारें आगरा की इमारतों का उपहास करती थीं, उनकी धार्मिक भावनाओं को आघात पहुँचाती थी। उन्होंने अपने खेतों को तहस नहस होते हुए, तथा अपनी बेटियों और बहुओं को मुसलमानों की काम पिपासा की सन्तुष्टि के लिए अपहरण होते देखा था। मथुरा का एक फौजदार मुरशिद कुली खाँ सुन्दर स्त्रियाँ पाने के लिए गावों पर हमला किया करता था। उसकी एक और कुख्यात आदत यह थी—हिंदू पर्वों और मेलों में वह अपने माथे पर चन्दन लगाकर तथा हिंदू की भाँति धोती पहनकर भीड़ में घूमा करता था और जैसे ही उसकी निगाह किसी ऐसी स्त्री पर पड़ती जिसका सौन्दर्य चन्द्रमा में भी ईर्ष्या की भावना जागृत कर सकता था वह उस पर भेड़िये की तरह झपट पड़ता था उसके आदमी उसे नाव में बैठा देते थे जिसे वह पहले से जमुना के तट पर तैयार रखते थे और वह उसे लेकर आगरा भाग आता।[२]

औरंगजेब ने अब्दुल नबी नामक एक धार्मिक व्यक्ति को मथुरा का गवर्नर

नियुक्त किया। वह भी उसी अर्थ में धार्मिक था जिस अर्थ में उसका स्वामी धार्मिक था। पदासीन होने के उपरान्त उसने पूरी निष्ठा के साथ सम्राट की 'मूर्ति पूजा के उन्मूलन की नीति को कार्यान्वित करना' आरम्भ कर दिया और इस प्रक्रिया में उसकी लगभग १० मई १६६६ को जाटों से लड़ाई हो गई। तिलपत के जमींदार गोकुल के नेतृत्व में विजयी विद्रोहियों ने सादाबाद के परगना में लूटमार की। यह खतरा इतना गम्भीर था कि मुगल शासन ने उसे इस शर्त पर क्षमा करने की पेशकश की कि वह लूट का माल वापस कर दे। विद्रोहियों ने समझौता करने से इन्कार कर दिया। औरंगजेब ने रदनदाज खाँ, हसन अली खाँ तथा अन्य उच्च अधिकारियों के नेतृत्व में एक बहुत शक्तिशाली सेना विद्रोहियों को कुचलने के लिए भेजी तथा वह स्वयं दिल्ली से प्रभावित क्षेत्र में इस अभियान का मार्ग-दर्शन करने के लिए गया। हसनअली ने जाटों के तीन किलेबन्द गाँवों पर हमला किया तथा उसने एक बड़ी कीमत चुकाकर इस लड़ाई में कामयाबी हासिल की। किसानों ने एक लम्बी और अनवरत लड़ाई लड़ी जिसमें उन्होंने बड़ी भारी वीरता का परिचय दिया जो उनकी हमेशा से चारित्रिक विशेषता रही है। जबकि प्रतिरोध असम्भव हो गया तो उनकी स्त्रियां ने कुओं तथा तालाबों में कूदकर अपनी इज्जत बचाई और जाट किसान मुगलों पर टूट पड़े और उन्होंने बड़ा मूल्य हासिल करके अपना जीवन उन्हें सौंप दिया। गोकुल ने २०,००० आदमी इकट्ठे किये तथा तिलपत से बीस मील दूर उसने शाही सेना का मुकाबला किया जिसमें उसके सैनिकों ने अत्यन्त बहादुरी के साथ युद्ध किया। परन्तु साहस के द्वारा अनुशासन और युद्ध-सामग्री की कमी को पूरा नहीं किया जा सकता। एक लम्बे एवं रक्तपूर्ण संघर्ष के उपरान्त उन्हें मुगलों के श्रेष्ठ अनुशासन और तोपखाने के सम्मुख झुकना पड़ा। वे तिलपत की ओर वापस चले गये और तीन दिन तक उन्होंने उसकी रक्षा की। इस युद्ध में तीन हजार विद्रोहियों को मारने के लिए मुगलों को अपने चार हजार सैनिकों के प्राणों से हाथ धोना पड़ा। गोकुल को बन्दी बना लिया गया, उसके अंग आगरा के पुलिस कार्यालय के एक प्लेटफार्म पर एक-एक करके काट दिये गये। (सरकार द्वारा रचित हिस्ट्री आफ औरंगजेब III ३३०-३३६)। गोकुल का खून व्यर्थ नहीं गया उसने जाटों के हृदय में स्वतन्त्रता के नव-अंकुरित पौधे को पानी दिया।

राजाराम जाट (१६८६-१६८८)

जाटवीर गोकुल की मृत्यु के १५ वर्ष बाद सिनसिनी के जमींदार भज्जासिंह के पुत्र राजाराम के रूप में जाटों में एक अधिक योग्यता-सम्पन्न नेता का उदय हुआ। उसने अपने गोत्र सिनसिनवार जाटों तथा सोगरियाओं के बीच एकता स्थापित की। सोगरियाओं के इस समय के चौधरी का नाम रामचेहरा था तथा वह सोगर के

किन का स्वामी था। उसन अपन इलाक क अव्यवस्थित झुण्ड को एक सुगठित सेना का रूप दिया उन्ह रजीमन्टो म सगठित किया, उन्ह तोप-बारूद स लस किया तथा उन्ह अपन कप्तानो के आदशो का पालन करना सिखाया। जाट-क्षत्र क पगडण्डी विहीन जगलो म अनुकूल ठिकानो पर छोटी छोटी गढ़िया का निर्माण किया गया तथा उन्ह मिट्टी की कच्ची दीवालो स ढका गया ताकि तोपखाना का हमला उन पर कोई असर न डाल सक।

राजाराम न थोड ही दिना म आगरा जिला म मुगलो की सत्ता को समाप्त कर दिया सडको पर यातायात बन्द कर दिया तथा अनक गावो म लूट मार की। आगरा का सूबदार सफी खा एक प्रकार म नगर म घिर गया और एक बडा घमासान लडाइ क बाद नगर का फौजदार मीर अबुलफजल अकबर क मकबरा सिकन्दरा को राजाराम न आक्रमण स रक्षा कर सका।[१] जाटो न इसक बाद और अधिक साहसिकता का प्रदशन किया। धौलपुर क निकट उन्होन सुप्रसिद्ध तूरानी योद्धा अगर खा क खम पर आक्रमण किया और वे उसकी गाडिया घोडो और औरतो को उठा कर ल गय। जब खा न हमलावरो का पीछा किया तो वह अपन दामाद और ८० अनुचरो क साथ मारा गया।

दक्षिण म मराठा लोमडी का पीछा करन क अनन्त प्रयास न सम्राट को थका दिया था। जब जाट भडिए उसकी राजधानी की दीवालो तक आकर अपन शिकार क लिए गरज रह थ। उनकी आवाज दूर सम्राट को सुनाई द रही थी। मई १६८६ म औरगजब स्थिति की गम्भीरता को समझ गया था फलत उसन अपन एक महान् जनरल खान ए जहा कोकलताश जफरजग को जाटो का दमन करन का दायित्व सौपा। परन्तु खान-ए जहा को अपन अभियान म सफलता नही मिली। राजाराम की सफलता और खान ए जहा की पराजय स सम्राट चौक गया और उसन अपन पुत्र आजम को यह आदश दिया कि वह स्वय जाकर आक्रमण की कमान अपन हाथ म ल। परन्तु राजकुमार कवल बुरहानपुर तक ही जा पाया था कि उस वापस बुला लिया गया क्योकि उस समय (दिसम्बर १६८७) गोलकुण्डा म अपनी प्रतिष्ठा को फिर स प्राप्त करन की गम्भीर समस्या प्रस्तुत थी। फिर भी शाहजाद क ज्यष्ठतम पुत्र बीदरबख्त को जो उस समय कवल १७ वष का बहादुर बालक था जाटो क विरुद्ध युद्ध की सचालित कमान सौपी गई तथा खान-ए-जहा को उसका मुख्य परामशदाता एव मुख्य अधिकारी क रूप म काम करत रहन को कहा गया।

परन्तु जब तक शहजादा युद्धस्थल तक पहुच पाता जाट नता न और भी अधिक दुस्साहस कर डाल थ। १६८८ क आरम्भ म सिकन्दरा म अकबर क मकबर (जिस बहिश्तावाद का नाम द दिया गया था) पर आक्रमण क समय जब कि सम्राट का माग तय किया जा रहा था। सिकन्दरा क निकट यमुना क किनार उन उसका पीछा किया था

निधन के उपरान्त जाटों के नेतृत्व का दायित्व अपने ऊपर लिया। ' उसमें संगठन करने तथा विशेष अवसरों का चतुराई के साथ प्रयोग करने की क्षमता थी। ' वह जाट की दृढ़ता तथा मराठों की चलाकी और राजनीतिक बुद्धिमत्ता के समन्वय का प्रतिनिधित्व करता था। उसका नैतिक नीति वचन सोलहवीं शताब्दी के मयन रफीउद्दीन सफवी जैसे मुस्लिम धर्मशास्त्रियों से लिया गया था जिन्होंने मुसलमानों को यह शिक्षा दी थी कि काफिर के ऊपर कभी विश्वास नहीं किया जाना चाहिए।' चूरामन ने अनेक मुसलमानों के साथ काम किया था, उनके साथ लड़ाइयाँ लड़ी थीं परन्तु वह किसी के भी प्रति निष्ठावान नहीं रहा। वह कठोर व्यावहारिक राजनीतिज्ञ था जिसने स्वामिभक्ति सम्मान प्रेम जैसी उत्तम भावना के वशीभूत होकर अपना विवेक नहीं खोया। वस्तुतः उसके हृदय में इन विचारों के लिए स्थान भी नहीं था। तथापि वह ऐसा व्यक्ति था जिसने जाटों की किस्मत का निर्माण किया उसने जाट शक्ति को १८वीं शताब्दी की उत्तर भारत की राजनीति में महत्त्वपूर्ण स्थान दिलाया—ऐसा स्थान जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी।

इमाद्-उद-सादात के लेखक ने चूरामन के आरम्भिक जीवन के सम्बन्ध में निम्नलिखित विवरण दिया है उसने अपने जीवन का आरम्भ डाकुओं के एक गिरोह के नेता के रूप में किया था वह काफिलों और राहगीरों को लूटा करता था। थोड़े ही समय में उसने अपनी कमान में ५०० घोड़े और १००० पैदल इकट्ठे कर लिए। हाथरस और मुड़सान के कुख्यात किलेदार दयाराम और भूपसिंह के पितामह तथा भूरे सिंह के पिता नन्दा जाट भी १०० घुड़सवारों के साथ उसकी सेना में शामिल हो गये। जब चूंकि उसका संगठन इतना बड़ा हो चुका था कि आवश्यकताएं केवल व्यापारिक काफिलों की लूट से पूरी नहीं हो सकती थी अतः उसने परगनों को लूटना आरम्भ कर दिया। इस समय उसने आगरा से ४८ कोस दूर घने जंगल के दलदली रास्ते में अपनी शरण के लिए एक स्थान बनाया जिसके चारों ओर उसने गहरी खाई खुदवाई। वहां वह अपनी लूट का माल जमा करता था, धीरे धीरे वहां बहुत-सी कच्ची ईंटें जमा हो गई और यही कालान्तर में जो स्थान विकसित हुआ वह भरतपुर कहलाया। उसने पड़ोस के गावों से कुछ हिन्दू चमार एकत्रित किए तथा उन्हें इस स्थान की रक्षा का विशेष उत्तरदायित्व सौंपा। जब उसकी सेना में १४००० आदमी हो गये, तब उसने भरतपुर की रक्षा का दायित्व अपने एक विश्वासपात्र भाई को सौंप दिया जिसे उसने पर्याप्त संख्या में सैनिक और युद्ध-सामग्री दी और वह स्वयं लूट के अभियान पर कोटा और बूंदी की ओर चला गया। जहां उसने अनेक काफिलों को लूटा और बहुत माल प्राप्त किया। ' वह अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक साहसी था उसने न केवल अपने सैन्य बल में वृद्धि की अपितु उसमें बन्दूकधारियों की वृद्धि के द्वारा उसे शक्तिशाली

भी बनाया। उसने घुड़सवारों की भी वृद्धि की। उसने सड़क पर राज दरबार के मंत्रियों को लूटा तथा प्रान्तों से आय राजस्व और शाही तोपखाने पर आक्रमण किया। १७०४ के करीब उसने मुगल आधिपत्य में सिनसिनी को छीन लिया परन्तु अक्टूबर १७०५ में वह पुन उसके हाथ से निकल गयी। (प्रो० जदुनाथ सरकार माडर्न रिव्यू अक्टूबर १९२३)

दक्षिण अभियानों में थके हुए औरंगजेब की १७०७ में मृत्यु के उपरान्त इस डाकू सरदार को और भी बड़े अवसर प्राप्त हुए। बहादुरशाह और आजम ने समूगढ़ के निकट जाजऊ में निर्णायक युद्ध की तैयारी की जहां भाग्य ने हिन्दुस्तान का ताज उनके पिता के सिर पर रखा था। चूरामन ने अपनी जाति तथा अन्य लोग एकत्रित किए तथा वह दोनों सेनाओं के इर्द गिर्द घूमता रहा और वह इस अवसर की प्रतीक्षा में रहा जिसमें वह विजयी पक्ष की ओर से सामयिक उत्साह को प्रदर्शित करने के लिए विजित पक्ष के खेमे पर टूट पड़ सके। उसे अपनी इस योजना में बड़ी सफलता मिली युद्ध की समाप्ति पर उसे लूट का बहुत-सा माल मिला तथा साथ ही विजेता बहादुरशाह की ओर से उसे १५०० जाट और ५०० घोड़ों का मनसब प्राप्त हुआ। चूरामन ने अपनी इस प्रचुर दौलत का विवेकसंगत तरीके से प्रयोग किया उसने नित्य अनवरत सैनिकों की भरती की तथा अपने शत्रुओं को मित्र बनाया। परन्तु चूंकि बहादुरशाह की सरकार काफी मजबूत थी वह उसके प्रति निष्ठावान बना रहा तथा शाही कमाण्डर की पदवी जो उसे कुछ ही दिन पहले प्राप्त हुई थी उसके औचित्य को सिद्ध करने के लिए वह उसकी अच्छी सेवा करता रहा। वह १७११ में बहादुरशाह के साथ लाहौर गया और वहां १७१२ में उसने उसके चार नालायक बेटों के बीच उत्तराधिकार का युद्ध अपनी आंखों से देखा।

स्वर्गीय सम्राट का ज्येष्ठतम जीवित मुख्य पुत्र जहांदार शाह अब औरंगजेब के सिंहासन को लज्जित कर रहा था। वह आयु में बड़ा था। (इस समय उसकी आयु लगभग ५० वर्ष था।) परन्तु विलासप्रियता और आमोद प्रमाद में वह बच्चे से भी बदतर था। ... दासी ... मूर्ख ... लाल कुंवर जिसका वह ... पर रखता था। उसने अपने ... दस ... दिन रात्रिकालीन भोग ... सैनिकों ... व्यय में ... उसने रात्रि में हनुमान की ... थी। ... उसने ... की रचना कर ली थी ... में ... सम्मान ही हो ... गया उसने ... लिए नये प्रयोग आरम्भ

तूरानी गुट था जो निजाम उल मुल्क के नेतत्व में काम कर रहा था। इन दोनों गुटों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा चूरामन के लिए सहायक सिद्ध हुई। वजीर सयद अब्दुल्ला जयपुर के राजा के विरुद्ध था और वह उसकी सफलता नहीं चाहता था। वजीर के एक सम्बन्धी और एजेन्ट के माध्यम से चूरामन ने अधीनता-स्वीकृति का प्रस्ताव भेजा उसने ३० लाख रुपये का खिराज शाही खजाने में भेजने की पेशकश की साथ ही में उसने वजीर को भी २० लाख रुपया देने का वायदा किया। फरुखसियर लाचार था उसी प्रकार जिस प्रकार सिन्दबाद को लाचारी का एहसास हुआ था। दो सयद-बन्धु उसके कन्धों पर सवार थे, अत उसने अनिच्छा से और अभद्र तरीके से विद्रोही को क्षमा कर दिया जिसे वजीर के सुरक्षा-आश्वासन के साथ बादशाह की उपस्थिति में लाया गया था। इसके बाद चूरामन सयद बन्धुओं का सक्रिय एवं विश्वस्त पक्षधर बन गया।

चूरामन और सयद-बन्धु

फरवरी १७१९ में फरुखसियर को सयद बन्धुओं ने अपदस्थ कर दिया उसे अन्धा कर दिया गया था उसे मार डाला और उसके स्थान पर उन्होंने एक क्षयग्रस्त युवक रफीउद दरजात को गद्दी पर बैठाया। तीन महीने के बाद नये बादशाह को भी गद्दी से उतार दिया गया और उसके उपरान्त उसका ज्येष्ठ भ्राता रफी उद्दौला सिंहासनारूढ़ हुआ। यह आदमी इतना भाग्यशाली था कि चार महीने बाद उसकी स्वाभाविक मृत्यु हो गई। इसके पश्चात सयद बन्धुओं ने सितम्बर १७१९ में गद्दी मोहम्मद शाह को सौंप दी। परन्तु बादशाह बनाने वाला का अन्त सन्निकट था। एक स्त्री का अभिशाप एक के ऊपर गिरा और दूसरा अत्यधिक घमंड के कारण भगवान् के क्रोध का भाजन बन गया। सयद अब्दुल्ला की कामुक दृष्टि बादशाह रफी उद दरजात की पत्नी इनायत बानू बेगम के ऊपर थी। जब दुखी बेगम ने यह देखा कि उसका पति उसकी रक्षा करने में असमर्थ है तो उसने अपने सुन्दर बाल काट डाले और उन्हें अपने को भ्रष्ट करने के इच्छुक के पास भेज दिया ताकि वह अपमान में बच सके। सयद हुसन अली में भी घमंड एवं प्रमोमाद सीमाओं का अतिक्रमण कर चुका था। एक बार उसने गर्व से यह कहा था कि जिस किसी के ऊपर वह अपने जूतों की परछाईं डाल देगा वह सम्राट आलमगीर के समकक्ष हो जाएगा। चूरामन परछाईं की भांति सयद बन्धुओं के साथ रहा करता था फरुखसियर के अपदस्थ होने के समय वह हुसन अली की सेना के साथ था। बाद में वह उसके साथ एक झूठे दावेदार नकूसियर के विरुद्ध अभियान में आगरा गया जिसे सयद-बन्धुओं के शत्रुओं ने बादशाह घोषित कर दिया था। उसे उस किले के घेरे का महत्त्वपूर्ण काम सौंपा गया था,[11] और

गरीजन के साथ यह उसके प्रभाव का परिणाम था कि किले का समर्पण कर लिया गया। इसके बाद वह हुसन अली के साथ निजाम उल मुल्क के विरुद्ध चढ़ाई में दक्षिण गया (मई १७२०)। उसकी इन निष्ठावान सेवाओं के लिए सयद ने उसे राजा की पदवी से अलकृत करने का वायदा किया, परन्तु यह वायदा इसलिए पूरा नहीं हो सका क्योंकि इस बीच मोहम्मद शाह के शह पर मुगलों ने हुसन अली की हत्या कर दी थी। सैयद बन्धुओं का साथ छोड़ने के लिए उस बादशाह की ओर से प्रचुर पुरस्कारों का प्रलोभन दिया गया। यह सोचकर कि व्यर्थ में सम्राट से शत्रुता मोल लेना मूर्खतापूर्ण कार्य होगा, उसने उन प्रलोभनों को स्वीकार कर लिया तथा मोहम्मद शाह की सेना में शामिल हो गया। चतुर जाट ने सम्राट को अपना रास्ता बदलने के लिए राजी कर लिया जो अन्यथा उनके गांवों में होकर गुजरता। अपने गांवों को कुछ दूरी पर छोड़कर उसने बादशाह की सेना के साथ अपने शत्रु राजा जयसिंह की सीमाओं में प्रवेश किया और उसने ऊंची पहाड़ियों काटेदार जगलों तथा निर्जन रेगिस्तानों पर कब्जा कर लिया। (इरविन लेटर मुगल्स II ६८ ६९)

जब सयद अब्दुल्ला ने एक बड़ी सेना के साथ मोहम्मद शाह पर आक्रमण किया तो चूरामन अपनी जाट सेना के साथ सेना से मिल गया। ऐसा करते समय वह अपने पुराने स्वामी के प्रति किसी भक्ति अथवा कृतज्ञता से अनुप्राणित नहीं था। लोगों के दावों पर नजर रखने वाले जाट बीरों का तर्क था कि सयद की पराजय होने पर मोहम्मद शाह से क्षमा प्राप्त करना आसान होगा परन्तु यदि इसके विपरीत हो गया तो सयद के बदले से बचना बहुत कठिन होगा। (लेटर मुगल्स II ८१)

युद्ध के दिन (नवम्बर १७२०) जो होडल के पड़ोस में हुआ था चूरामन और उसके जाट सैनिकों को मोहम्मद शाह के खेमे और असबाब पर आक्रमण करने का दायित्व सौंपा गया था ताकि प्रतिपक्ष की सेना का विघटन कराया जा सके। उसने मन लगाकर पूरी लगन के साथ इस अनुकूल कार्य को पूरा किया जिसका अर्थ था अधिकतम लाभ और न्यूनतम हानि। भेड़ियों के झुण्ड की तरह जाट सैनिक असबाब खेमे पर पश्चिम दक्षिण और पूर्व से बारी-बारी से टूट पड़े। यद्यपि कठिनाई से उनके आक्रमण को विफल कर दिया गया तथापि वे अनेक बैल और घोड़े ले जाने में सफल हुए और उन्हें कैम्प में बहुत अधिक घबड़ाहट पैदा करने में कामयाबी मिल गई। परन्तु जो असली लड़ाई हुई। उसमें अब्दुल्ला की सेना लगभग नष्ट हो गई। अतः दूसरे दिन चूरामन ने उभयपक्ष में से किसी की प्रसन्नता अथवा अप्रसन्नता की चिन्ता किये बिना दोनों पक्षों को बिलकुल निष्पक्ष होकर लूटा। था लूट के माल को लेकर वह अपने इलाके में चला गया।

अब चूरामन एक स्वतन्त्र राजा की भाँति आचरण करने लगा था, हालाकि उसने अभी तक राजा की उपाधि धारणा नही की थी क्योकि उसे आशका थी कि ऐसा करने से उसके इलाके के लोगो मे कही ईर्ष्या की भावना जागृत न हो जाय। उसने मारवाड के राजा अजीतसिंह से मत्री करके कछवाहो के विरुद्ध अपनी शक्ति में वृद्धि की तथा उसने बुन्देलो को इसलिए सहायता भेजी ताकि वे पूव मे मुगलों को फसाये रखें। परन्तु उसने अपने भतीजे बदनसिंह को कारागार मे डालकर एक अविवेकी एव अन्यायपूण काय किया।

बदनसिंह को अन्य जाटो के हस्तक्षेप के बाद जेल से रिहा किया गया। यथाथ मे इस समय तक जाटो को चूरामन के मसूबा के सम्बन्ध मे सन्देह होने लगा था। पारिवारिक मन मुटावो ने उसके शत्रुओ को उसके विरुद्ध कायवाही करने के नये अवसर प्रदान किए। बदनसिंह सुरक्षा और सहायता के लिए आगरा के सूबेदार सादात खा के पास भागकर चला गया जिसने जाटो के विरुद्ध अभियान पहले से ही छेड रखा था। चूरामन के पुत्र मोहकमसिंह ने सादात खा के प्रतिनिधि नीलकठ नागौर को जबरदस्त शिकस्त दी। खा ने भी इस युद्ध मे कोई विशेष पराक्रम का परिचय नहीं दिया था। अत उसे उसके पद से हटा दिया गया। इसके बाद राजा जयसिंह ने जाटो के विरुद्ध फिर से कमान सम्भाली ताकि वह अपने पुराने अपमान को मिटा सके। परन्तु इस समय तक चूरामन जहर खाकर आत्महत्या कर चुका था (सितम्बर-अक्टूबर १७२१)

उसकी मृत्यु की कहानी इस प्रकार है—

"उसका एक सम्पन्न सम्बन्धी बिना किसी औलाद के मर गया था। भाइयों ने चूरामन के ज्येष्ठ पुत्र मोहकम सिंह को बुलाया और उसे मतक की जमीदारी का दायित्व सौंप दिया तथा उसकी समूची सम्पत्ति भी उसी को दे दी। चूरामन के दूसरे पुत्र जुलकरन ने अपने भाई से कहा 'मुझे भी उस माल म एक भाग देकर अपना हिस्सेदार बना लो। दोनों भाइयों के बीच म इस मामले को लेकर बडी जबदस्त कहा सुनी हो गई। मोहकम सिंह ने अपने भाई का प्रतिरोध करने के लिए शक्ति के प्रयोग की भी तयारी कर ली। बुजुर्गों ने चूरामन के पास यह सदेश भेजा कि उसके पुत्र आपस में लड रहे है जो ठीक नही है। चूरामन ने मोहकम सिंह से कहा। पुत्र ने पिता को गाली गलौज की भाषा मे उत्तर दिया और इस बात का सकेत दिया कि वह अपने पिता और भाई दोनो से लडने को तयार है। चूरामन को क्रोध आ गया और सतान से दुखी होकर उसने एक खुराक घातक विष की निगल ली जिसे वह सदव अपने पास रखता था और गाव मे एक बगीचे म जाकर अपने प्राण त्याग दिये। बहुत समय बीत जाने के बाद आदमी उसकी खोज करने के लिए भेजे गये और उन्होने उसके मत शरीर को पाया।

(लेटर मुगल्स, II प० १२२)

सदर्भ

१ सरकार हिस्ट्री आफ औरगजेब III पृ० २६०

२ यह कहा जाता है कि एक बार एक जाट एक चारण स ताड पत्र पर लिखी विजय से सम्बद्ध कविता को निम्न आशु कविता सुनाता हुआ लेकर चला गया—

' दमक-दमक ढोल बाजे देन्दे ठोर नागरा की।
आमो घर दुग्गा नही हो तो सुनयत हो जाती साराकी ॥
मारवाड सेन्सस रिपोट (वर्नाक्यूलर) १८६२ III प० ५६

३ सरकार हिस्ट्री आफ औरगजेब III प० ३३२

४ सिनमिनी भरतपुर स १६ मील दूर उत्तर-पश्चिम म है।

५ (कि तु मच यह है कि सिक्दरा की लडाई मे मुगल शासको को राजाराम और जाट किसानो की ताकत का पता लग गया। सिकन्दरा के महल को कुचल दिया गया।—सम्पादक)

६ ईश्वरदास १३२ b मनूची (Mnaucci) ने लिखा है उन्होने अपनी लूट का कायक्रम कौसे क वन्ट दरवाजा को तोडकर आरम्भ किया उन्होने मूल्यवान नगों और सोने चादी के बरतनो को लूटा तथा जिम ममान को वे नही ले जा सकते थ उस उन्होने नष्ट कर दिया। फिर अकबर की हड्डियो को कब्र से निकालकर उन्होने क्रोध स उन्हे अग्नि के सामने फेंककर जला दिया।

७ यह अनुभाग आशिक रूप स साराश है उमके अधिकाश उद्धरण प्राफमर जदुनाथ सरकार द्वारा लिखित लेख दि ब्रकिंग अप आफ दि मुगल एम्पायर जाटस एण्ड गूजस म स लिए गए है जो अक्टूबर १९२३ क माडन रिव्यू म प्रकाशित हुआ था।

८ प्रो० जे० एन० सरकार का लेख जाटस एण्ड गूजस माडन रिव्यू अक्टूबर १९२३

९ मखजान ए-अफगान डान का अनुवाद प० १३७ (य काफिले शाही मनसबदारो के होते थे जनता के नही—सपादक)

१० इमाद उद-सादात फारसी पाठ प० ५८

± (इतिहासकार यहा लूट शब्द का प्रयोग करता है। यह लूट अवश्य थी पर जनता की नही न शहर क किसी धनवान की। वह लूट थी शाही काफिलो खजाना तथा हाकिमो की जिसको क्रान्ति या विद्रोह कहा जाना चाहिए —सपादक)

११ चूरामन की हृदयहीन गददारी का एक दूसरा उदाहरण फादर वण्डल न दिया है— नेकू सियर के साथ एक समझौता किया गया था कि उसके भाई

अलीजफर को राजा जयसिंह के प्रदेश तक एक बड़ी रकम लेकर चला जाने दिया जाएगा ताकि वहां सेना खड़ी की जा सके और वह उसे लेकर आवश्यकता के समय अपने भाई की सहायता के लिए वापस चला आने दिया जाएगा। सूरमल ने अभागे शाहजादे के साथ गद्दारी की उसके रुपयों को छीन लिया (५० लाख सोने के सिक्के) तथा एक विश्वासपात्री के साथ उसे हुसैन अली के पास भेज दिया।

तीसरा अध्याय

जाट-शक्ति का विस्तार

भरतपुर के राज परिवार का सस्थापक ठाकुर बदन सिंह

सूरजमल के पिता ठाकुर बदन सिंह ने अपने जीवन का आरम्भ जयपुर के महाराजा सवाई जय सिंह के सामन्त के रूप म किया था। जयसिंह ने उसे वह सब भूमि और उपाधिया दी थी जो चूरामन को मुहम्मद शाह के शासन काल म प्राप्त हुई थी। अपने विख्यात चाचा स सवथा भिन्न वह चुप रहने वाला तथा विनम्र स्वभाव का व्यक्ति था तथा लुटेरे के जीवन म उसकी कोई रुचि नही थी। उसने एक वध शासक के रूप म अपने शासन का श्रीगणश किया वह ईमानदारी म शान्तिकालीन कलाओ को प्रोत्साहन देना चाहता था। उसकी आस्था अपने राज्य को सन्तुलित विस्तार दन एव मजबूत बनाने म थी न कि अनियमित एव अविश्वसनीय विजयो म। उसने अपन ऊपर जो दायित्व लिया था वह कोई सुगम काम नही था उसका अथ था एक लडाकू सरदार के प्रभाव क्षेत्र का एक ऐस सुव्यवस्थित राज्य म परिवतन जिसम एक नियमित शासन हो। (जिस व्यक्ति को मुगलवजीर सयद भाई तथा सम्राट फरुखसियार राजकीय आश्रय प्रदान करता ह उसको इतिहास डाकू कहत नही चूकता। चूरामन के साथ यह अन्याय ह वह डाकू नही विद्रोही था। लोकप्रिय क्रान्ति का सूत्रधार था—सम्पादक) तथापि इस काम म उस वर्षों क धयपूण परिश्रम और कुशल प्रशासन के उपरान्त उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई। हमने उसक कूटनीतिक कायकलापो अथवा शानदार शस्त्रास्त्र के प्रयोग क बारे म कुछ भी नही सुना परन्तु यह स्पष्ट ह कि सिंहासनारूढ होने क कुछ ही वर्षों म वह इतना शक्तिशाली हो गया था कि आमर (जयपुर) के ऊपर उसकी निभरता समाप्त हो गई थी। इसके पश्चात उसने मेवात क विदाहियो के साथ मत्री स्थापित की जयपुर क राजा क प्रदेशो पर चढाइया की जिसके कारण जयपुर नरेश को उसस समझौता करने क लिए उस इतनी भूमि देनी पडी

जिससे उसे १८ लाख रुपये की आय होती थी। उसने उस समय व्याप्त गड़बड़ी का लाभ उठाकर बयाना जिले के कुछ स्थानों को अपने अधिकार में ले लिया तथा वर में उसने एक किला बनवाया जिसे उसने अपने छोटे पुत्र प्रताप सिंह को दे दिया। उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि उसने समूचे आगरा और मथुरा जिलों में अपने परिवार की सत्ता को स्थापित किया। इस लक्ष्य की प्राप्ति में वह आंशिक रूप से इसलिए सफल हुआ क्योंकि उसने मुस्लिम कुशासन के विरुद्ध हिन्दुओं के रक्षक होने का दावा किया इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसने मुख्यतः उन स्थानों के शक्तिशाली जाट परिवारों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। उसने कामर' के एक सम्मान एवं प्रभावशाली जाट चौधरी महाराम मोहन राम की पुत्री के साथ विवाह कर लिया और उसने अपनी दूसरी पत्नी मोहोर के जमींदार के यहां से ग्रहण की। इन विवाहों के फलस्वरूप वह एक प्रकार से समूचे मथुरा जिले का स्वामी बन गया।

मुगल शासन की दृष्टि में बदन सिंह अभी तक एक अकुलीन विद्रोही था, जिसे कठोरतम दंड मिलना चाहिए था और मिलता भी यदि दिल्ली के भ्रष्ट एवं जीर्ण दरबार में ऐसा करने की क्षमता होती। यदि नादिरशाह ने हिन्दुस्तान में कुछ और महीने रहने का निश्चय किया होता अथवा उसने अपनी अजमेर की इच्छित तीर्थयात्रा को क्रियान्वित किया होता तो उस स्थिति में जाटों का सरदार परसियन हथियारों के बोझ का अनुभव करने वालों में सबसे पहला व्यक्ति रहा होता। उसके चले जाने के बाद मुगल दरबार की कमजोर निगाह उत्तर-पश्चिम पर जमी रही। इस बीच ठाकुर बदन सिंह ने चुपचाप बिना किसी कठिनाई के अपनी सत्ता को बहुत से बाहर के जिलों में दृढ़ कर लिया। लोगों ने उसका इसलिए स्वागत किया, क्योंकि वह शासन करना चाहता था अपने पूर्वाधिकारियों की भांति लूट-मार नहीं। उसका एक इच्छित लक्ष्य अपने लिए 'राजा' की उपाधि प्राप्त करना था और इसके लिए वह शाही सिंहासन के समक्ष झुकने को भी तैयार था जिसकी वह अन्यथा अवज्ञा भी कर सकता था परन्तु सम्भवतः जयपुर के शासक की ईर्ष्या के कारण वह इसमें सफल नहीं हो सका।

क्योंकि वह जाटों को अभी तक अपनी रिआया मानता था। शायद इसी समय से भरतपुर के राज परिवार ने यादव कुल के साथ अपना वंश-परम्परा का दावा प्रस्तुत करना आरम्भ कर दिया लोगों ने उसे 'ब्रजराज' की उपाधि से विभूषित किया जिसे यद्यपि भूतकालीन परम्पराओं के आधार पर उचित नहीं ठहराया जा सकता था तथापि ब्रजमंडल अथवा मथुरा क्षेत्र पर उसके प्रभुत्व के आधार पर उसका औचित्य सुस्पष्ट था यह कहा जाता है कि मारवाड़ के अजीत सिंह तथा अभय सिंह रत्न सिंह को राजा कहकर सम्बोधित करते थे। जब महाराजा सवाई जयसिंह ने उसे अश्वमेध यज्ञ में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया तथा उसके पुत्र

सूरजमल को राजकुमारोचित सम्मान दिया तो उसकी महत्त्वाकांक्षा निश्चय ही सन्तुष्ट हुई होगी। निस्सन्देह बदन सिंह का कार्यकलाप और जीवन-पद्धति ऐसी थी जो किसी राजा के ही अनुरूप थी, उसने अपने दरबार में शान शौकत को बनाये रखने में कोई कमी नहीं रखी। उसने अनेक मुसलमान अफसरों को अपनी सेवा में लिया उन्होंने दरबार में वांछित परिष्कार एवं गरिमा को लाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया तथा उन्होंने उसके अशिष्ट ग्रामीण लोगों के समक्ष दरबारी जीवन का मॉडल प्रस्तुत किया तथा उन्हें शिष्टाचार का प्रशिक्षण दिया। इस्लामिक संस्कृति एवं कुलीनतांत्रिक प्रशिक्षण में उसकी बढ़ती हुई रुचि का प्रमाण हमें उसके सबसे छोटे और सबसे अधिक प्यारे पुत्र प्रताप सिंह की शिक्षा के द्वारा मिल जाता है।[1]

बदन सिंह में कुछ कलात्मक अभिरुचि भी थी उसका स्थापत्य से भी कुछ लगाव था जिसका प्रमाण हमें उसके द्वारा बनवाई गई इमारतों तथा उद्यान महलों के अवशेषों से प्राप्त हो जाता है। उसने डीग के दुर्ग का सुन्दर महलों के निर्माता के द्वारा सौन्दर्यीकरण कराया ये महल पुराने महल के नाम से जाने जाते हैं। बयाना जिले में वैर में उसने किले के भीतर एक बड़ा बाग लगवाया जिसके बीच में उसने एक मकान और जलाशय बनवाये ये अब फूल-बाड़ी के नाम से प्रख्यात हैं। उसने कामर और साहर में भी महलों का निर्माण कराया जो अब भग्नावस्था में हैं। उसने वृन्दावन में एक मन्दिर का निर्माण कराया जिसे उसने 'धीर समीर' का काव्यात्मक नाम दिया।[2]

बदन सिंह ने लम्बी आयु पाई उसने अपने राज्य का प्रबन्ध अपने सबसे योग्य पुत्र सूरजमल के हाथों सौंप अपना बुढ़ापा साहर में सुखपूर्वक काटा। उसकी मृत्यु ११६६ हिजरी में रमजान की नौ तारीख (७ जून १७५६) को हुई। यह शक किया गया कि उसे जहर देकर मारा गया था परन्तु इसका कोई ऐसा आधार नहीं है जिसकी कल्पना भी की जा सके।

राजा सूरजमल उसका चरित्र एवं प्रारम्भिक जीवन

ठाकुर बदन सिंह का उत्तराधिकारी राजा सूरजमल औसत लम्बाई से कुछ अधिक था उसका शरीर सुगठित था जिसमें बुढ़ापे में मोटापे की प्रवृत्ति पाई जाती थी और उसका रंग बहुत अधिक काला था। उसकी आँखें असामान्य रूप से चमकीली थीं और उसको देखने से यह लगता था कि वह अत्यधिक क्रोधी मनुष्य है परन्तु उसके आचरण में उसके मृदु एवं सौम्य होने का संकेत मिलता था।[3] उसने किताबें कम पढ़ी थीं तथा उसमें अपने छोटे भाई की दरबारी शालीनता भी नहीं थी। वह पोशाक और तौर-तरीकों में सीधा-सादा था उसमें राजनीतिक बुद्धिमत्ता

बड़ी मात्रा म थी उसकी बुद्धि स्थिर थी और उसका दृष्टि-क्षेत्र सुस्पष्ट था इमाद उस-सादात के लखक न लिखा है कि यद्यपि वह एक किसान की पोशाक पहनता था और कवल ब्रजभाषा ही बोल सकता था तथापि वह जाट जाति का प्लेटो था। बुद्धि और चतुराई म राजस्व एव नागरिक मामलो के प्रबन्ध म हिन्दुस्तान के प्रतिष्ठित लोगो म उसकी तुलना केवल आसफ जाह बहादुर (निजाम) स हो सकती थी उसम अपने मूलवश के सभी अच्छे गुण विद्यमान थे—स्फूर्ति साहस चालाकी कठोर अध्यवसाय अदम्य ओज जो कभी पराजय स्वीकार नही करता था, परन्तु किसी उत्तजक खल के अनुधावन म चाहे वह युद्ध हो अथवा राजनय वह अपने समकालीनो की अपक्षा अधिक कोमल अन्त करण का व्यक्ति नही था षड्यन्त्रो और अनतिक कूटनीति के युग म उसन पाखडी मुगल और चालाक मराठा दोनो को चकरा दिया था। सक्षप म वह एक चौकन्नी चिड़िया के समान था जिसने अपने को बिना फसाय प्रत्यक जाल म स दाना चुगा।

अपन पिता क जीवन-काल म उसका पहला महाकाय १७३२ म भरतपुर के किल पर कब्जा करना था। इसके लिए उसने उसके स्वामी खेमकरन जाट सोगरिया पर रात्रि म साहसपूर्ण आक्रमण किया। उस समय वह एक छोटा-सा मिट्टी का किला था और उसका उस समय तक दुर्भेद्य दुर्गीकरण नही हुआ था जिसके साथ उसका नाम बाद म जोड़ा गया था। उसकी अप्रशिक्षित प्रतिभा ने उसे एक अभेद्य दुग म परिवर्तित कर दिया और उसक इद गिद एक सम्पन्न नगर का विकास हुआ—ऐसा नगर जो वभव म दिल्ली और आगरा की शाही राजधानियो से टक्कर ले सकता था। उसके न्यायपूर्ण और बुद्धिमान शासन ने सभी वर्गों, व्यवसायो और धर्मों के लोगो को उसक राज्य की ओर आकर्षित किया जो उस समय हिन्दुस्तान के अव्यवस्थापूर्ण मण्डलों म एक मात्र ऐसा स्थान था जहा शाति और सुरक्षा पाई जाती थी। आरम्भ म उसन राजपूतो की ईर्ष्या को मिटाने के लिए उस समय के सबसे शक्तिशाली राजपूत शासक महाराजा सवाई जयसिंह के साथ अपने आपको सम्बद्ध कर लिया ताकि नवजात जाट-सत्ता आमर की छाया म निर्बाध रूप से विकास कर सके। नीति क अतिरिक्त आमेर के सिंहासन के प्रति निष्ठा की अन्तर्निहित भावना ने भी उस ऐसा करन की प्ररणा दी थी। महाराजा के प्रति सूरजमल की निष्कपट भक्ति क फलस्वरूप उस महान शासक स उसे पिता के समान स्नेह प्राप्त हुआ। महाराजा क निधन के उपरान्त अपने प्रिय सरक्षक की अन्तिम इच्छा क अनुसार उसन उसके ज्येष्ठ पुत्र ईश्वरी सिंह क सिंहासन पर दावे का उसके छोटे पुत्र माधो सिंह के दाव क विरुद्ध समथन किया। माधो सिंह का अपनी मा की ओर स सिसोदियाओ के साथ सम्बन्ध था जिसका उस गव था। ईश्वरी सिंह को आमर के सिंहासन स हटाने के लिए मल्हार राव होल्कर गगाधर तातिया, और मवाड़ क महाराणा न मराठाओ और सिसोदियाओ की एक बड़ी

सना के साथ जिसम बाद म जोधपुर और कोटा की राठौर और हाडा टुकडिया भी शामिल हो गइ, जयपुर की ओर कूच किया। राजा ईश्वरी सिह सूरजमल के साथ आमेर की अनिवाय सन्य भरती और जाट सहायको के साथ अपनी राजधानी से रवाना हुआ।

रविवार २० अगस्त १७४६ को बागरू म दोना सनाओं की टक्कर हुई, सघप असमाना के बीच था और वह न्यायपूण भी नही था सात शासको की सम्मिलित शक्ति एक राजा के विरुद्ध युद्ध कर रही थी सेना के हरावल दस्त की कमान सीकर क सामन्त शिव सिंह को सौंपी गई थी, सूरजमल को मध्य की सेनापवति का नतत्व करने का भार सौंपा गया था और राजा ईश्वरी सिंह पष्ठ के नेतत्व को सचालित कर रहा था। पहले दिन तोपखाने के द्वद्व युद्ध म कोई भी निणय नही हो सका। दूसरे दिन के युद्ध की समाप्ति आमेर के लिए दुखद रही क्योंकि इस दिन हरावल सना का कमाण्डर सीकर का सामन्त एक दढ सघप क उपरान्त मदान म खेत रहा। तीसरे दिन आतुर शत्रु जिसे अब विजय की पूण आशा थी युद्ध की व्यूह रचना मे उपस्थित हुआ। आमेर की सना उसका मुकाबला करन के लिए आई इस निर्णायक दिन हरावल का नेतृत्व सूरजमल क हाथ मे था। थोडी-सी बरसात क बावजूद सघपरत लोगो का जोश ठण्डा न हो सका और समूची युद्ध पक्ति म घमासान लडाई चली। चालाक मराठा सरदार मल्हारराव ने एक बडी सना की टुकडी के साथ पष्ठभाग पर राजा ईश्वरी सिंह पर आक्रमण करने क लिए गगाधर तातिया को भजा। तातिया ने चुपक स चलकर उनियारा के सामन्त राव सरदार सिंह नरूका पर हमला किया जो इस समय आमेर क पष्ठभाग का नेतृत्व कर रहा था। उसन पष्ठभाग की सना को भ्रमित कर दिया तथा केद्र मे स्थित तोपखाने पर जोर का दबाव डाला। बन्दूकची काट दिये गय थ तथा तोपें व्यथ कर दी गइ पराजय राजा ईश्वरी सिंह क चेहरे म झाक रही थी। यह दख कर कि सब कुछ खोया जा चुका है राजा ईश्वरी सिंह न अपनी अन्तिम आशा सूरजमल को गगाधर का मुकाबला करन का आदश दिया। जाट सरदार ने सिर झुकाया और एक क्षण भी सोचे बिना अपन स अधिक शक्तिशाली शत्रु क ऊपर बगल स हमला किया। अब विजयी मराठा और दन जाट के बीच दो घट तक युद्ध चला आखिर म गगाधर को पाठ सिखानी पडी और सूरजमल न टूटे हुए पष्ठभाग को पुनर्गठित करके और उस सरदार सिंह नरूका को कमान म छोडकर स्वय हरावल दस्त म पहुच गया ताकि शत्रु सना की बढत को रोका जा सके सकट की इस महान घडी म जाट सरदार न अतिमानवीय शौय प्रदर्शित किया एक स्थानीय इतिहासकार न लिखा है कि उसन अपन हाथ स ५० लोग मारे और १०८ को घायल किया। अन्त म रात्रि क अधकार न योद्धाओं को एक-दूसर से अलग किया। सूरजमल न आमेर की सना को पराजय के जबडों स

निकाल कर विजयश्री दिलाई। राजदूत चारण न बहादुर जाट द्वारा इस अवसर पर प्रदर्शित शौय का बखान करन म कोई सकोच नही किया बूदी के कवि सूरजमल ने अपन नामरासी क इस काय की याद को इन छन्दो क द्वारा स्थायित्व प्रदान करने का प्रयास किया है—

सह्यौ मलही जट्टिना जाय अरिष्ट अरिष्ट।
जाठर तग रविमल्ल हुव आमरन को इष्ट॥
वहु जट्ट मलहार सन लरन लग्यो हरवल्ल।
अगद है हुल्कर जाट मिहिर मल्ल प्रतिमल्ल॥

जाटनी न प्रसव-पीडा व्यथ म नही सही उसके गभ स उत्पन्न सूरज (रवि) मल शत्रुओ के लिए अभिशाप और आमर का हितैषी था। पृष्ठभाग स पीछे लौट कर उसन हरावल म मल्हार स युद्ध किया। होल्कर रात्रि की छाया था और वह सूय दोनो योद्धाओ की सघष म अच्छी टक्कर थी। चौथ दिन न्नि होने पर दोनो सनाओ क बीच फिर स टक्कर हुई। इस प्रकार लडाई दो दिन और चली इस कठिन सघष न आखिर म कम अध्यवसायी मराठाओ का धय तोड दिया। होल्कर न शान्ति का प्रस्ताव प्रस्तुत किया तथा माधोसिंह को गुजारे के रूप म उसे दिये गए पाच परगनो स सन्तोष करना पडा।

मुगलो के साथ सूरजमल की पहली टक्कर

सम्राट अहमदशाह क समय म सादात खा अमीर उल उमरा जुल्फिकार जग को आगरा और अजमेर का गवनर नियुक्त किया गया था। उसने मारवाड के राजा बख्तसिंह राठोर के साथ जिसने अपने भतीज रामसिंह स गद्दी छीन ली थी एक गठबन्धन कायम किया। यद्यपि रामसिंह को उसकी राजधानी स भगा दिया गया था वह जयपुर क राजा की सहायता स अजमेर क निकट मुकाबला करता रहे और अपन मराठा मित्रो की प्रतीक्षा करता रहा। स्पष्टत स्थिति बख्तसिंह लिए खतर स भरी हुई थी। इसलिए उसने सादातखा स सहायता की याचना की। खा को भी अपन आगरा के सूबे क एक बड भाग को जाटो क चगुल स मुक्त कराने क लिए जाटो क विरुद्ध उसकी सहायता की आवश्यकता थी। ऐसा प्रतीत होता है कि इस आशय की दोनो क बीच एक समझ कायम हो गई थी कि सादतखा दिल्ली आगरा शाही माग स आगरा की ओर कूच करने की बजाय दिल्ली क दक्षिण पूव म मवात क रास्त स आक्रमण करेगा बख्तसिंह की सेना के साथ उसके राज्य के सीमान्तों के निकट कहीं अपनी सना क साथ मिलेगा और फिर रामसिंह का दमन करने के लिए अजमेर की ओर मुडगा। अजमेर की विजय के उपरान्त जाट शेष का मान-मदन सुगम हो जायगा—इस प्रकार का विश्वास खान को दिलाया गया

था। ११६२ हिजरी[1] को वह १५००० घुडसवारो की सुसज्जित सेना के साथ सूरजमल के राज्य की उत्तरी सीमा पर स्थित निमरानी नामक स्थान पर पहुचा। जाट राजा बिना अपने हाथ को पहले दिखाये मुगल-सेना की गतिविधियो को देख रहा था। परन्तु सादातखा के कुछ सैनिको ने एक छोटे दुर्ग मे तैनात जाट गैरीजन से झगडा मोल लेकर उसे किले से बाहर कर दिया। खान ने सोचा कि यह उसकी एक महान विजय थी और उसने इस विजय पर हर्षोल्लास व्यक्त करने के लिए नगाडा का बजवाने का आदेश दिया। वह अपनी शक्ति के सम्बन्ध मे अतिविश्वस्त हो गया था तथा एक तुच्छ विजय से प्रसन्न होकर उसने अपने अभियान की समूची योजना बदल दी थी। वह वहा रुका और नारनौल की दिशा मे उसने अपने हरावला को वापस बुला लिया। अपनी सेना के कुछ अधिकारियो की गम्भीर आपत्ति के बावजूद उसने जाट देश को पहले विजित करने तथा बाद मे अजमेर जाने का निश्चय किया। सादातखा ने फतह अलीखा को आदेश दिया कि वह सेना लेकर लूटने और उजाडने के लिए जाय उसका दिल साभाचन्द की सराय से जहा उसका कम्प लगा हुआ था प्रात अपने अभियान पर निकला। जब दोपहर मे लुटेरे अपने काफिले के साथ लौटने को थे स्वय राजा सूरजमल के नेतृत्व मे जाट सेना वहा उपस्थित हो गई। फतह अलीखा ने जो इस समय वहा से दो या तीन कोस[1] के फासले पर था कुमुक के लिए अत्यावश्यक अनुरोध भेजा परन्तु वह मन्द गति मे सूर्यास्त के करीब वहा पहुची। अपने से अधिक शक्तिशाली सेना के सम्मुख रात्रि मे पाछे हटने को खतरनाक समझकर उन्होने सादातखा के पास यह प्रस्ताव भेजा कि वह रात्रि उसी स्थान पर व्यतीत करे उन्हे आशा थी कि वह प्रात अपनी समूची सेना के साथ आक्रमण करेगा। खान ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नही किया और उसने उनके तत्काल पीछे हटने का आग्रह किया। जाटो ने पीछे की ओर जाने वाले सैन्यदल को घेर लिया उनके घुडसवार तोडेदार बन्दूकचिया ने छोटे छोटे समूह बनाकर घोडो से उतरे बिना भ्रमित मुस्लिम सेना पर गोलियो की बौछार की। सूरजमल के घुडसवार तोडेदार बन्दूकचियो का रात्रि के अन्धकार मे गिरफ्त मे लाना असाध्य काम था। अनेक मुगल असहाय मृत्यु को प्राप्त हुए और शेष का उस समय मनोबल जवाब दे गया जब हाकिम खा गोली का शिकार बन गया तथा अली रुस्तम खा घायल हो गया। इन्ही दोनो बहादुर अफसरो ने कुमुक यहा तक पहुचाई थी। मुगल सेना का पीछे हटना धवडाई हुई सेना के भगदड मे परिवर्तित हो गया। भगोडो के आगमन से तथा शत्रु-पक्ष के हरावल दस्ते के सामने आ जाने से मुख्य कम्प मे भी घबराहट फैल गई। यदि सादातखा के अधिक विवेकशील सेनापतियो ने अपने स्वामी के भागने को जबरदस्ती न रोका होता तो उस स्थिति मे मुगल-सेना को और भी बडा अनर्थ देखना पडता। घबराहट के समाप्त होने तक सेनापतियों के सेनापति दल से

छटपटाते रहे। मियार के लेखक ने जिसका चाचा इस पूरी घटना का प्रत्यक्षदर्शी गवाह था, लिखा है "भाग्यवश चूकि जाट सरदार स्वय अपनी सुरक्षा की खातिर अमीर उल-उमरा को गिरफ्तार करने अथवा मारने की कुख्याति अजित नही करना चाहता था उसने कम्प को दो या तीन दिन तक घेरा डालने से ही सन्तोष कर लिया। इसके बाद उसने एक अफसर फतेह अलीखा के माध्यम से जिसे वह पहले से जानता था शांति के लिए शर्तें भेजी। अमीर-उल-उमरा ने उन्हे लाभकारी समझकर स्वीकार कर लिया। सूरजमल ने अपने पुत्र जवाहरसिंह को अमीर-उल उमरा के पास भेजा तथा अनेक शर्तों के साथ उसके साथ एक सन्धि पर हस्ताक्षर किए—इनमे से दो शर्तें यह थी कि वाइसराय के आश्रित लोग किसी पीपल के वृक्ष को नही काटेंगे तथा देश मे किसी मन्दिर का न तो अपमान करेंगे और न उसे कोई क्षति पहुचायेंगे।" साम्राज्य के अमीर-उल-उमरा पर विजय ने राजा सूरजमल को महान् प्रतिष्ठा प्रदान की तथा उससे आत्म विश्वास में भी वृद्धि हुई। इसके तुरन्त बाद उसने हिन्दुस्तान के राजनीतिक अखाडे मे प्रवेश किया जहा उसने अधिक पराक्रमी एव अधिक सम्मानपूर्ण भूमिका अदा की।

सूरजमल का रानी किशोरी के साथ विवाह

राजा सूरजमल ने राजनीतिक विवाहो के द्वारा अपने राज्य का विस्तार करने की अपने पिता की नीति का अनुसरण किया, उसने अपने पुत्र नवलसिंह का विवाह "कोटमान" के शक्तिशाली किलेदार सीताराम की पुत्री के साथ किया था तथा उसने स्वय अपना विवाह मथुरा से ५३ मील दूर होडल के एक शक्तिशाली एव सम्पन्न जाट के प्रमुख चौधरी काशी की पुत्री के साथ किया था। इस प्रतिभाशाली महिला का नाम रानी किशोरी" था जिसे सामान्यत उसके लाडले नाम हसिया के नाम से जाना जाता है (जिसका अर्थ है मुस्कराने वाली) और जिसका नाम भरतपुर के राज परिवार के इतिहास के साथ प्रमुख रूप से जुडा है। इस सम्बन्ध मे एक प्रचलित कहानी यह है कि एक बार राजा सूरजमल एक विशाल हाथी पर चढे होडल की एक गली मे होकर गुजर रहे थे लडकियो का एक झुड उस समय कुए से वापस लौट रहा था इतने बडे जानवर को देखकर ये लडकिया डरकर भाग गयी केवल एक लडकी वही खडी रही और इस अद्भुत जानवर तथा राजा के अनुचरो की चमकीली सज्जा को देखती रही। राजा लडकी की निर्भीकता से प्रभावित हुआ उसने उसके बारे मे जानकारी प्राप्त की तथा उसके सम्बन्धियो से उसके साथ विवाह करने का प्रस्ताव किया। इस जनश्रुति मे सत्य का अश चाहे कितना भी क्यो न हो प्रामाणिक इतिहास इस बात का साक्षी है कि गम्भीर विपत्तियो की घडी मे उसने अपने साहस और स्थिरता को नही छोडा। उसकी **प्रतिभा एव**

उपाय-कुशलता ने भरतपुर की किस्मत को अनेक बार लगभग अवश्यम्भावी विनाश से बचाया था।

सदर्भ

१ बामर मथुरा जिले म कोसी के निकट मथुरा स ३३ मील उत्तर-पश्चिम म है सोहोर १८ मील उत्तर-पश्चिम म है। (ग्राउज मथुरा पृ० २३)
२ इरविन लेटर मुगल्स II प० ३७४
३ इमाद-उस-सादात के लेखक ने लिखा है कि इस नवयुवक का विकास एक ऐसे उच्च कुलीन मुस्लिम सभ्रान्त व्यक्ति के रूप म हुआ था जिसमे शिष्ट तौर तरीके थ और जिसकी बोल चाल परिष्कृत थी। उसका पगड़ी बाधने का तरीका तथा उसकी पोशाक और साथ ही उसके रुचिकर व्यजन सभी कुछ म दिल्ली के तौर-तरीकों की नकल थी। उसका बेटा बहादुर सिंह तो अपने पिता को अपेक्षा इन मामलो म एक कदम आगे थ। उसने तो कुरान का भी अध्ययन किया था और उसने उस कुरा जानी तक पढ़ा था। इमाद प० ५५।
४ फादर वेण्डल, ओम हस्तलिपि पृ० /१।
५ इमाद प० ५५।
६ बागरू अजमेर आगरा ट्रक मार्ग पर जयपुर से १८ मील दूर दक्षिण-पश्चिम मे एक कस्बा है। (राजपूताना गजट पृ० १५५)।
७ महाराजा ईश्वरी सिंह का जीवन चरित्र (हिन्दी), लेखक ठाकुर नरेन्द्र सिंह वर्मा वदिक प्रेस अजमेर पृ० ५६ ७३
८ सियार-उल मुत्तखरिया के मूल पाठ म सादात खा का नाम नहीं मिलता (देखिए मूल पाठ II पृ० ३८) जिसका उल्लेख अनुवाद म है। अनुवादक ने उसे उसके नामरासी के साथ जो नवाब सफ्दर जग का चाचा और ससुर था जोड़ने की भूल की है (खण्ड ४ अनुक्रमणिका पृ० ६३)। बुरहान-उल मुल्क-सादात खा की मत्यु उस समय हुई जब नादिरशाह दिल्ली मे ठहरा हुआ था (सियार I ३१६) उसकी मृत्यु की ठीक तारीख १० मार्च १७३६ थी। दूसरे सादात खा (जुलफिकार जग) को अहमद शाह के समय मे गवर्नर नियुक्त किया गया था जो ११६० हिजरी क दूसरे जमादा I १ मई १७४० को गद्दी पर बठा था। उसे सम्राट अहमद ने बहस्पतिवार ११ जुलाई १७४७ को मीर बख्शी बनाया गया और उसी दिन राजा बख्तसिंह को गुजरात का सूबेदार बनाया गया।
९ सियार म यह तिथि ११६३ हिजरी लिखी ह जो गलत है। उस वर्ष अधिक

जानकार लेखकों के अनुसार सूरजमल सफदर जंग के मित्र के रूप में रुहेलाओं से युद्ध कर रहा था। सही तिथि सफर ११६२ हिजरी प्रतीत होती है। सियार III ३११, २०वीं पंक्ति के अनुवादक ने ११६२ के वर्ष के अन्त को छोड़ दिया है (पाठ II ३८)। यह पाठ भी गलत है। यह ११६१ के अन्त में होना चाहिए जैसा वक्त ए मोह आलम सानी से स्पष्ट है।

१० सियार के अनुवाद में इसका उल्लेख नहीं है।

११ इस अभियान के लिए सियार III पृ० ३१३ ३१५ का अवलोकन करें। अनुवाद अनेक स्थलों पर गलत है।

१२ यह स्थान आगरा दिल्ली ट्रंक मार्ग पर मथुरा जिले में स्थित है। यह गुड़गांव और मथुरा जिलों को विभाजित करने वाले सीमान्तों से तीन फर्लांग दक्षिण में है।

१३ मुझे रानी किशोरी के विवाह के ब्यौरे को प्राप्त करने में सफलता नहीं मिली चौधरी काशी के वंशज होडल में अभी भी सम्मानित स्थान प्राप्त किए हुए हैं। उनमें से कुछ उदाहरण चौधरी रतन सिंह भरतपुर राज्य में काम कर रहे हैं।

१४ भरतपुर क्षेत्र में राजा सूरजमल और किशोरी के मिलन की घटना इस प्रकार मिलती है। राजा का हाथी रास्ता रोके खड़ा था। किशोरी आदि कई लड़कियां सिर पर गागर रखे कुए से लौट रही थी। रास्ता बनाने के लिए किशोरी ने रास्ते में पड़ा एक अरहर का डंडा पर की उंगलियों से उठाया और हाथी के पृष्ठ भाग पर जमाया। डंडा लगते ही हाथी रास्ता छोड़कर बगल हो गया और लड़कियां निकल गयी। राजा सूरजमल ने जब किशोरी की यह घटना सुनी तो वह प्रभावित हुए और विवाह का प्रस्ताव किया। जिसको सहर्ष स्वीकार कर लिया गया—संपादक

चौथा अध्याय

नवाब सफदर जग का मित्र । राजा सूरजमल

सूरजमल द्वारा वल्लमगढ म जाटो की नवाब वजीर सफदरजग के विरुद्ध सहायता

मथुरा जिले को आधिपत्य म लेने के पश्चात् सूरजमल की निगाह दिल्ली के पडोस पर पडी वह अब और दक्षिण म अपनी सत्ता का विस्तार करने के लिए अवसर की प्रतीक्षा म था। बल्लमगढ के जाट फरीदाबाद के फौजदार से परेशान थे उन्होंने सूरजमल स सहायता की याचना की जिसके फलस्वरूप मुगल शासन से उसका झगडा और बढ गया। यहा बल्लमगढ के जाट सामन्ती परिवार की सक्षिप्त ऐतिहासिक विवेचना अपेक्षित है। तेवतिया गोत्र का एक गोपाल सिंह जाट बल्लम गढ स तीन मील उत्तर म स्थित सीही नामक गाव म १७०५ म बस गया था और मथुरा दिल्ली मार्ग पर लूट मार करके वह शक्तिशाली और सम्पन्न बन गया। नियागाव (बल्लमगढ स ८ मील पूर्व रेखाश ७७ ३० अक्षाश २८ २५) के गूजरो के साथ मैत्री करके तथा उनकी सहायता से उसने समीपस्थ गावो के राजपूत चौधरी को मार डाला। फरीदाबाद के स्थानीय मुगल अधिकारी मुतजा खा न विद्रोही को दडित करन क बजाय उससे सन्धि कर ली उसको १७१० मे फरीदाबाद परगना का चौधरी नियुक्त कर दिया गया तथा उस राजस्व मे स एक रुपये म एक आना अपन पास रखन का अधिकार दे दिया गया। गोपालसिंह की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र चरनदास उसके स्थान पर नियुक्त हुआ। उसने जब यह देखा कि ममापम्थ जिला म भी शिकजा ढीला होता जा रहा है तो राजस्व अपन पास रख लिया तथा मुतजा खा की सत्ता का उल्लघन करना आरम्भ कर दिया। परन्तु चरनदास को गिरफ्तार करके फरीदाबाद के कारागार मे डाल दिया गया। कुछ समय उपरान्त उसके पुत्र बलराम न फिरौती का एक झूठा भुगतान करके खान को धोखा देकर उस रिहा करवा दिया। पिता और पुत्र भागकर भरतपुर चल आय तथा सूरजमल की सहायता प्राप्त करके मुतजा खा को मार

डाला (देहली गजेटियर पृ० २१३)

विद्रोही आक्रमण का यह कार्य १७४७ में सम्राट अहमद शाह के सिंहासनारूढ होने तक अदंडित रहा। वजीर ने बलराम और राजा सूरजमल को उक्त परगनाओं को वापस करने के लिए अनेक बार लिखा, परन्तु प्रत्येक बार इस बात को झूठे बहाने बनाकर और टालू उत्तरों से टाल दिया गया। वजीर की क्रोधाग्नि को भड़काने के लिए तथा उसमें जाटों को नष्ट करने का संकल्प कराने के लिए यह पर्याप्त था। फलतः जनवरी १७४९ में (११६२ हिजरी) उसने उनके विरुद्ध अमीर-उल-उमरा के साथ मोर्चा लिया और फरीदाबाद को अपने अधिकार में ले लिया। सूरजमल इस समय मुगल-साम्राज्य के सेनापति के विरुद्ध हाल ही में एक लड़ाई जीत चुका था। जिसके उल्लास से वह उस समय वजीर के प्रस्ताव को स्वीकार करके विवादास्पद स्थानों से हटने की मनोदशा में नहीं था। उसने अपने समस्त ससाधनों के साथ सीहीं के जाटों की सहायता करने की तैयारी की तथा डीग और कुम्हेर के दुर्गों की रक्षा की व्यवस्था करके वजीर के विरुद्ध चढ़ाई कर दी (जून १७४९)। भाग्य सूरजमल का साथ दे रहा था वजीर को जब अपने सन्निकट अवध के सूबे में दुर्जेय रुहेलाओं के विद्रोह की सूचना प्राप्त हुई तो उसे जाटों के साथ अपने झगड़े के निबटारे को स्थगित करना पड़ा और वह दिल्ली लौट आया। उसने इन अफगानों के विरुद्ध संघर्ष किया तथा उनके उपद्रव को शांत करके उसने उनसे छीने हुए इलाकों के शासन का दायित्व नवलराय को सन १७५० के आरम्भ में सौंप दिया। इसके उपरान्त उसने जाटों के विरुद्ध कार्यवाही आरम्भ की और उसने एक सेना उनसे लड़ने के लिए भेज दी। जाट युद्ध के लिए तैयार थे वजीर ने १७५० की वर्षा ऋतु में (जुलाई १७५०) उनके विरुद्ध लड़ाई आरम्भ की और खिजिराबाद तक वह पहुंच गया। इसी बीच उसे एक बड़ी विपत्ति की सूचना प्राप्त हुई अहमदशाह बंगश के हाथ नवलराय पराजित होकर मारा जा चुका था। इस सूचना को पाने के बाद वजीर को सूरजमल से अपना झगड़ा समाप्त करने के लिए बाध्य होना पड़ा। एक मराठा वकील के माध्यम से समझौता सम्पन्न हुआ। प्रतीति को कायम रखने के लिए मराठा दूत के साथ बलराम को कलाइयां बंधे हुए वजीर के सम्मुख लाया गया उसने उदारता प्रदर्शित करते हुए उसे क्षमा कर दिया तथा अवध रूप से प्राप्त उसकी उपलब्धियों को उसके पास बने रहने की अनुमति प्रदान कर दी। राजा सूरजमल को ६ टुकड़े खिलत में दिए गए तथा उसके बख्शी को दो टुकड़ों में से एक दिया गया। मुगलों द्वारा योग्यता की स्वीकारोक्ति ने नवाब वजीर और महान जाट के बीच सच्ची मैत्री की बुनियाद रखी और वह अत्यधिक कठिन परिस्थितियों में भी अपने मित्र के प्रति निष्ठावान रहा।

अहमद शाह बंगश और रुहेलाओं के विरुद्ध एक अभियान में राजा सूरजमल

ने वजीर का साथ दिया। नवाब ने २६ शबन ११६३ हिजरी (सोमवार २३ जुलाई १७५०) को ७० ००० घुडसवारो के साथ कूच किया। सूरजमल न अपनी जाट सना के साथ अहमद खा की राजधानी फरुखाबाद पर अधिकार कर लिया। पटारी म १३ सितम्बर १७५० को घमासान लडाई हुई। वजीर हाथी पर चढा मध्य मे खडा था उसके दायी ओर की सना का नेतत्व सूरजमल के पास था और बायी ओर की सना इस्माइल खा काबुली के कमान मे थी। दोनो ओर की सेनाओ ने शत्रु के ऊपर तजी से प्रहार किया तथा उन्होने रुस्तम खा अफरीदी तथा कुछ अय रुहेला सरदारो को भगा दिया और ६ या ७ हजार अफगानो को मौत के घाट उतार दिया। नौ बजे प्रात लडाई आरम्भ हुई थी और वह तीसरे पहर तक चलती रही युद्ध का पलडा सफदर जग की ओर झुका हुआ था। जब अहमद खा ने देखा कि सब कुछ खोया जा चुका है तो उसने अपने पक्ष के लोगो को बुलाकर कहा कि व अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा को पुन प्राप्त करने के लिए अन्तिम प्रयास करें। उसने अपनी विशिष्ट पठान शली म कहा—'अयथा प्रत्येक अफरीदी (उनके अधिक वीर साथी) वगशो की दाढी पर पेशाब करेंगे। अफगान पलाश के पेडो के वन मे छिप गए तथा उन्होने वजीर की सेना पर आकस्मिक आक्रमण किया। वजीर ने अपनी डिवीजन म से अपनी दायी और बायी टुकडियो को कुमक भेजकर उस खतरनाक रूप से कमजोर कर लिया था। परन्तु अपने सेनापतियो से सम्पर्क स्थापित करने के लिए वह न तो आगे बढा और न उसने अपनी सेना को वापस बुलाया। नवाब सफदर जग गम्भीर रूप स घायल हुआ और उसे खेमे में ले आया गया। अगले दिन प्रात काल उसने शाही राजधानी की ओर लौटना आरम्भ किया। अफगानो न उसके लगभग समूचे प्रदेश पर अधिकार कर लिया इलाहाबाद के नगर को उन्होने लूटा और उसके किले को घेर लिया लखनऊ की रक्षा उसके नागरिको के अदम्य साहस के कारण हो सकी। इस बीच जब उसकी पराजय की सूचना दिल्ली पहुची तो उसके शत्रुओ ने बादशाह के कान उसके खिलाफ भरने शुरू किए और व उस अपदस्थ कराने के षडयत्र करन लगे। परतु उसकी सामयिक पहुच ने उनकी योजना को व्यथ कर दिया। वजीर ने पुन राजा नागरमल राजा लक्ष्मी नारायण राजा सूरजमल इस्माइल खां काबुली तथा अपने अन्य हितैषियो को बुलाया और उनस रुहेलिया के विरुद्ध नये अभियान की योजना के सम्बन्ध म विचार विमश किया। उसने मल्हारराव होल्कर की मराठा सेना को २५ ००० रुपया प्रतिदिन के हिसाब स तथा सूरजमल की जाट सेना को १५ रुपये प्रतिदिन के भत्त पर भरती कर लिया। ६ रबी १ ११६४ हिजरी को (मगलवार २२ जनवरी १७५१) उसन दूसरी बार अहमद खा वगश के विरुद्ध कूच किया। फरुखाबाद घेर लिया गया तथा समूचे रुहेला क्षत्र को आग और तलवार स तहस-नहस कर दिया गया। रुहेलाओ को

स्थायी रूप से परेशान करने के लिए कोल (अलीगढ) से लेकर कोराह जहानाबाद तक का इलाका मराठाओं को जागीर के रूप में देकर उनके लिए एक काटा बोया गया। उसने बादशाह को अपनी अफगानों के ऊपर विजय के उपरान्त ६ जमादा II, ११६४ हिजरी (२४ अप्रैल १७५१) का अभिवादन भेजा (वाका, पृष्ठ ६२)। इससे स्पष्ट है कि यह अभियान संक्षिप्त परन्तु तेज था और उसे समाप्त होने में केवल तीन महीने लगे।

वजीर के राजधानी से चले जाने के एक महीने बाद साम्राज्य के ऊपर एक महान् विपदा आ पड़ी। अहमदशाह अब्दाली ने पंजाब पर आक्रमण कर दिया ३ रबी II ११६४ हिजरी (सोमवार १८ फरवरी १७५४) को उसने लाहौर में प्रवेश किया तथा दिल्ली की ओर कूच करने की धमकी दी। सूरजमल को सम्पूरक के तौर पर बादशाह ने ३००० जात और २००० घोड़े का मनसब प्रदान किया रतन सिंह को राव का खिताब तथा जवाहिर सिंह को १००० जात और १००० घोड़ो का मनसब दिया (२८ मार्च १७५१) यह उसके पहले की श्रेणी के अतिरिक्त था, इस प्रकार अब वह ४००० जात और ३५०० घोड़ो का मनसबदार था (वाका, पृ० ७०)। वजीर को बार-बार तथा अत्यावश्यक सन्देश दिल्ली तुरन्त आने के लिए भेजा गया और उससे कहा गया कि वह अपने साथ मल्हारराव होल्कर तथा अन्य मराठा सरदारो को लेकर आये। वजीर की अनुपस्थिति में हरम की एक महिला एक हिजड़ा और एक चापलूस षड्यन्त्रकारी ने सम्राट के कमजोर मस्तिष्क पर पूरा नियन्त्रण कायम कर रखा था। उन्होंने उस आक्रमणकारी दुर्रानी के साथ संधि करने की प्रेरणा दी दुर्रानी ने यह आश्वासन दिया कि लाहौर और मुल्तान के सूबो के मिल जाने के बाद वह वापस चला जाएगा। राजधानी वापस लौटने पर वजीर ने उसकी अनुपस्थिति में उससे परामर्श बिना की गई अपमानजनक संधि पर न्यायोचित रोष व्यक्त किया। वह इस बुरे काम को करने वालो को दण्ड देने पर आमादा था। हिजड़ा वजीर के क्रोध का पहला शिकार बना। वजीर के घर में जावेद खा को एक दावत में आमंत्रित किया गया और वहा उसकी हत्या कर दी गई।

राजमाता तथा तूरानी गुट से सम्बद्ध सामन्तो द्वारा भड़काये जाने पर बादशाह अहमद शाह ने नवाब सफदर जंग को वजीर के पद से हटा दिया उसकी जागीरें छीन ली तथा अवध और इलाहाबाद के वाइसराय के पद से च्युत कर दिया। उनके बीच अब गृह-युद्ध छिड़ गया। भूतपूर्व वजीर अपने स्वामी की कृतघ्नता से हक्का-बक्का था वह निर्जीव की भांति आत्म-समर्पण करने को तैयार नहीं था अतः उसने राजधानी का घेरा डाल दिया और राजा सूरजमल जाट को बुलवा भेजा। अफगानो ने जो सफदर जंग के स्वाभाविक शत्रु थे गाजी-उद-दीन इमाद-उल मुल्क के नेतृत्व में शाही सेना का साथ दिया। क्रोधित नवाब द्वारा

भडकाये जाने पर जाटो ने पुरानी दिल्ली और उसके पडोस को इतनी बुरी तरह लूटा कि लोग उसे अभी भी जाट-गर्दी कहकर याद करते हैं इस प्रकार की दिल्ली के लोगों ने दो और लूट मारें देखी थी—शाह गर्दी जो अहमद शाह अब्दाली की लूट के साथ जुडी हुई है और भाओ गर्दी जिसका सम्ब ध पानीपत की लडाई से पूव मराठो द्वारा की गई लूट के साथ है। परन्तु उसकी सेवा म जितने भी मुगल थे उन्होंने नवाब वजीर का साथ छोड दिया और वे गाजी-उद दीन के नेतत्व म लडने वाल अपने तूरानी भाइयो से मिल गए। अब उसकी आशा केवल राजा सूरजमल पर केन्द्रित थी और आवश्यकता की इस घडी में जाट उसके लिए टूटी हुई रीड सिद्ध हुआ। उसे उच्च सम्मान के सपने दिखाए गए बदले की धमकिया दी गयी परन्तु इसे निष्ठावान सरदार न दोनों मे स किसी पर ध्यान नहीं दिया वह अपने मित्र के लिए अन्त तक युद्ध करने के लिए कृत-सकल्प था यद्यपि स्पष्टत उसके मित्र की पराजय सुस्पष्ट दिखाई पड रही थी। उसको आतकित करने क लिए गाजी-उद-दीन ने दक्षिण से मल्हार राव होल्कर को बुलवाया। परन्तु इसका भी कोई वाछित परिणाम नही निकला। चतुर राजा सूरजमल ने नए वजीर इन्तजाम-उद दौला और उसके महत्त्वाकाक्षी भतीजे गाजी उद-दीन के बीच चली आ रही ईर्ष्या का पूरा लाभ उठाया इन्तजाम उद-दीन को अपने भतीजे के उद्देश्यो के सम्बन्ध मे सन्देह था तथा उसकी योग्यता से उस डर लगता था। सूरजमल की कूटनीतिक चाल इतनी सफल हुई कि जब तक मराठा आ पाते, बादशाह की ओर स उसके पास सन्धि का प्रस्ताव आ गया। महाराजा माधोसिंह कछवाहा जो १७५३ के अन्त म दिल्ली आए थे उनसे मध्यस्थता करने को कहा गया। जाट राजा अपनी तलवार को म्यान मे रखने के लिए उस समय तक तयार नहीं था जब तक बादशाह सफदर जग को यदि वजीर के पद पर फिर स नियुक्त नहीं करता तो कम से-कम उसे अवध और इलाहाबाद की गवनरी वापस नही कर देता। अन्त मे इन शर्तों पर सन्धि कर ली गई और नवाब अपने सूबे पर शासन करने के लिए चला गया। सूरजमल ने अपने मित्र की उसके अवश्यम्भावी विनाश स रक्षा की थी और ऐसा करने म उसने गाजी-उद-दीन के साथ कठोर शत्रुता मोल ली थी जिसके परिणाम उसे बहुत शीघ्र भुगतने पडे।[1]

सदर्भ

१ कहानी इस प्रकार है कि बलराम ने यह वायदा किया था कि यदि उसके पिता को रिहा कर दिया जाएगा तो वह एक बडी रकम नकद दगा। पूव निश्चित शर्तों के अनुसार चरनदास पहरे म वल्लमगढ के निकट एक तालाब के पास

लाया गया। जब खजाने से भरी गाड़ी वहाँ आ पहुँची चरनदास को छोड़ दिया गया। वह एकदम अपने घोड़े पर चढ़कर भाग गया। जो थोला वहाँ पड़ा हुआ पाया गया उसमें केवल ताँबे के सिक्के थे। देलही गजेटियर ४०
२/३

२ यह बलराम बल्लभगढ़ अथवा बल्लभगढ़ के दुर्ग का निर्माता है। वह अपने नामराशी सूरजमल की पत्नी हासिया का भाई नहीं है। इस बलराम को २६ नवम्बर १७५३ को एक अकीत-महमूद खाँ ने मार दिया था जैसा वाक्या-ए शाह-आलम-सानी की निम्न प्रविष्टि से (पृ० ८३) स्पष्ट है—२ सफर ११६७ हिजरी को अकीबत महमूद खाँ बल्लू जाट (बलराम) के पास अपनी जागीर का मामला सुलझाने के लिए गया जाट से उसकी कुछ कहा-सुनी हो गई। उसने उक्त जाट का सिर काट डाला और वह उस सिर को बादशाह सलामत (अहमद शाह) के पास ले गया। यह अकीबत-महमूद मुतजा खाँ का बेटा था जिसकी हत्या बलराम ने की थी। तथापि बल्लभगढ़ और फरीदाबाद सूरजमल के अधिकार में रहे जिसने बलराम के पुत्र किशनसिंह और बिशनसिंह को बल्लभगढ़ का किलेदार और नाजिम नियुक्त किया गया। ये पद उनके पास १७७४ तक रहे (देखिए देलही गजेटियर प० २१३) अन्य तिथियों की भाँति गजेटियर की यह तिथि भी सन्देहपूर्ण है।

३ वाका पृ० ५७ ५८ हरचरनदास इमाद पृष्ठ ४६

४ इमाद पृ० ४६ सियार पृ० २६५ गुलिस्तान-ए रहमत के लेखक ने लिखा है कि रुस्तम खाँ अफरीदी को वास्तव में सूरजमल ने मारा था तथा अहमद खाँ ने अपने अनुचरों से यह समाचार छिपाया था।

५ इमाद पृ० ६३

६ इस गृह-युद्ध के ब्यौरेवार वर्णन के लिए देखिए—
तारीख-ए-मुज्जाफरी पृ० ६५ ७५, बयान-ए-वाका पृ० २७० २८०। हरचरनदास ने भी पाँच पृष्ठों में इसका वर्णन किया है। तारीख-ए-मुज्जाफरी का बयान अधिक प्रामाणिक है।

पांचवां अध्याय

सूरजमल का मराठो से सघर्ष

भरतपुर पर मराठा आक्रमण

१७४६ मे जाटों और मराठो के बीच पहली मुठभेड हुई थी परन्तु उस समय महाराज सवाई जयसिह की मृत्यु के उपरान्त कछवाहा उत्तराधिकार के युद्ध म दोनों एक-दूसरे की प्रतिपक्षी सेना म सहायक की भूमिका अदा कर रहे थ। तीन वष पूव (१७५२) राजा सूरजमल तथा मल्हारराव होल्कर ने रुहेला अफगानों के विरुद्ध युद्ध मे नवाब सफदर जग क भाड के मित्रो के रूप म एक दूसरे के साथ मिल कर सघर्ष किया था। सम्राट अहमद शाह और भूतपूव वजीर सफदरजग के बीच १७५२ में हुए गृह-युद्ध म गाजी-उद-दीन इमादउलमुल्क ने राजा सूरजमल और नवाब सफदरजग के विरुद्ध मराठाओं स सहायता का अनुरोध किया था। अक्टूबर १७५३ म रघुनाथ राव न सुविख्यात सरदारो के नेतत्व म एक बड़ी सेना के साथ उत्तर भारत की ओर अपन पहले अभियान पर कूच किया। उसका मुख्य उद्दश्य सम्पन्न जाट राज्य को लूटना था जो उसन अभी तक नही देखा था। राजा सूरज मल ने ऐसा कुछ भी नही किया था जिसन उन्ह कोई उत्तेजना दी हो और जिसके आधार पर युद्ध को उचित ठहराया जा सके। उन्होने चम्बल को धौलपुर के घाट पर पार करके भरतपुर की प्रादेशिक सीमा म प्रवेश किया। जाट राजा ने अपने पुरोहित रूपराम कटारी को रघुनाथ राव के पास सधि क लिए बात करने को भेजा और इस बीच उसने जल्दी से भरतपुर रामगढ़ (आधुनिक अलीगढ़) तथा अन्य किलों की प्रतिरक्षा को मजबूत किया और वहां रसद तथा अन्य सामग्री की व्यवस्था की। उसने अपनी मुख्य सना का जमाव डीग और भरतपुर के बीच म स्थित कुम्हेर म किया जो उसक राज्य की सुरक्षा क लिए सर्वोत्तम स्थान था। रघुनाथ राव ने एक करोड़ रुपया रक्षाशुल्क (ramsom) के तौर पर मांगे रूपराम ने कहा कि अधिक-से-अधिक चालीस लाख रुपये दिये जा सकत हैं। मराठाओं ने

आगे बढना जारी रखा और दूत यह कहकर वापस लौट आया कि इस सम्बन्धो मे वह अपने स्वामी से बात करके उत्तर देगा। सूरजमल ने रघुनाथ को लिखा कि या तो शान्तिपूर्वक चालीस लाख स्वीकार कर लो अन्यथा युद्ध की तयारी करो। पत्र के साथ उसने पाच तोप के गोले और कुछ बारूद भी जाट देश म उसे मिलने वाले आतिथ्य के नमूने के रूप म भेज दिए। जनवरी १७५४ म आक्रमणकारी कुम्हेर के सामन उपस्थित हुए और उस दैत्याकार दुग की त्योरी चढी आकृति ने उनके भ्रम को तोड दिया। रघुनाथ राव न अपने लालच म निशाना आवश्यकता से अधिक ऊचा लगाया था अब उस अपनी अविवेकी माग पर पछतावा आया। कुछ निरुत्साहित होने के बाद भी उसने तोपखाने को किले के विरुद्ध खडा करने का आदेश दिया। शाही रिसाला और तोपखाने के साथ गाजी-उद-दीन[1] मराठा-सना में शामिल हो गया और उसने घरने वालो के खेमे के उत्साह म वद्धि की।

कुम्हेर का घेरा (जनवरी १७५४—मई १७५४)

मराठा तोपखाने का कुम्हेर की दीवालों पर कोई प्रभाव नही पडा तथा उनकी मुख्य सेना को दृढ शत्रु न प्रभावहीन कर दिया। एक दिन मल्हारराव का एकमात्र पुत्र खाडेराव होल्कर[1] भोजन के उपरान्त दुर्भाग्य स आग की पक्ति म खडे तोपखानेके निकट पहुच गया तथा जाट जजैल स निकली एक गोली के लगने से वह गिर गया। बदले की भावना ने मराठा बाजुआ म हरकत पदा कर दी और जाटो को उसका अनुभव होने लगा। इस प्रकार तीन महीने व्यतीत हो गय और प्रत्येक दिन सूरजमल के लिए पहले दिन की अपेक्षा अधिक भारी पड रहा था। हिदुस्तान में इस समय कोई भी शक्ति ऐसी नही थी जो इतनी बहादुर हो कि वह खुलकर मराठाओं के विरोध म उसकी सहायता के लिए उगली भी उठा सके। राजपूताना उनक चरणो के नीचे लटा हुआ था हिदुस्तान का सम्राट उसक खिलाफ था। परन्तु शक्तिहीन था और यहा तक कि मित्र सफदरजग मराठा भाले स इतना भयभीत था कि वह अकेला उसका साथ नही दे सकता था। ऐसी स्थिति म सूरज मल का विनाश कुछ थोडे समय की ही बात प्रतीत होती थी। राजपूत की भाति जाट भी उस भयानक घडी की प्रतीक्षा शाति स करने लगा जब उसके रनिवास की महिलायें जौहर करेंगी और उनकी अग्नि स प्रज्वलित धुआ जब आसमान क। ओर जाने लगगा और उसस प्रेरणा लकर वह हाथ म तलवार लेकर एक सम्मानित मृत्यु की खोज मे रणभूमि म कूद पडेगा। यद्यपि जाटनी भी मृत्यु के प्रति उतनी ही उदासीन थी परतु राजपूत महिला की तुलना म अधिक मुक्त वातावरण मे पली होने के कारण ससार के सम्बन्ध म अधिक व्यापक दृष्टिकोण रखने के कारण तथा मानव चरित्र म अधिक गहरी पठ रखने के कारण वह अधिक

आशावादी और उपाय कुशल सिद्ध हुई। हंसिया[1] (सूरजमल की मुस्कराती हुई पत्नी) ने अपने पति के गिरते हुए मनोबल को ऊपर उठाया उससे कहा कि वह उसका विश्वास करे तथा अपने मस्तिष्क से निराशा की भावना को दूर करे। उसने जियाजी सिंधिया का नाम सुना था यह बताया गया था कि वह एक उदार, निष्कपट और विशाल हृदय व्यक्ति है जिसका उन अन्य सभी मराठा सरदारों की अपेक्षा अधिक विश्वास किया जा सकता है जिनकी घूस लेने की आदत से वह अपरिचित नहीं थी। शत्रु के खेमे में फूट डालने के उद्देश्य से उसने एक सेवक रूपराम के पुत्र तेजराम को सूरजमल के पत्र और पगडी के साथ जियाजी सिंधिया के पास भेजा और उससे प्रार्थना की कि वह उसे सुरक्षा प्रदान करे तथा सिर की पोशाक के विनिमय के द्वारा उसकी मंत्री को स्वीकार करे जियाजी ने उसका उत्कृष्ट प्रत्युत्तर दिया उसने सूरजमल के सकल्प को स्वीकार किया तथा बदले में उसने एक उत्साहवर्धक पत्र के साथ अपनी पगडी उसके पास भेजी साथ ही उसने अपने कुल-देवता बेल भंडार को प्रतिदिन अर्पित किए जाने वाले बेल पत्रों में से एक पवित्र बेल पत्र भी भेजा जिससे वह उसकी ईमानदारी के सम्बन्ध में पूर्ण रूप से आश्वस्त रह सके। इस घटना की सूचना सब जगह फैल गई और होल्कर निराश हो गया[2]।

स्वयं सूरजमल अपनी उत्साही पत्नी से प्रेरित होकर सम्राट और वजीर इन्तिजामुद्दौला के साथ षड्यन्त्र रचने लगा इन्हें गाजी उद्-दीन और मराठाओं के सम्बन्ध में अनेक आशकाएं थी भीरु सम्राट गाजी उद्-दीन की तानाशाही से उतना ही भयभीत था जितना भय उसे सफदरजंग से था। एक शक्तिशाली दुरात्मा का आह्वान किया गया—ऐसी आत्मा का जो बुलाने वाले की गर्दन को भी तोड़ने में सक्षम थी। उसने सम्राट और नये वजीर दोनों को पत्र लिखे जिनमें उसने लिखा कि मराठों के साथ मंत्री करके गाजी-उद् दीन साम्राज्य का विनाश की ओर ले जा रहा है। यदि उसकी महत्वाकांक्षाओं पर अभी कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया और उसके अनयकारी कार्यों पर कोई रोक नहीं लगाई गई तो उस समय कौन उसके रास्ते में खड़ा होगा जब वह अपने वृद्ध चाचा को वजारत से धक्का देकर हटा देगा अथवा बादशाह सलामत के साथ दुर्व्यवहार करेगा? गाजी उद्-दीन ने दिल्ली के किले से कुछ भारी तोपें मंगवाई थी। इन्तिजाम-उद्दौला ने जो अपने भतीजे की सफलता नहीं चाहता था सम्राट को उन्हें न भेजने का परामर्श दिया। उसने कहा कि यदि मराठाओं के युद्ध ससाधन सूरजमल से जीती हुई विशाल धन-दौलत और शक्तिशाली दुर्ग तथा शाही तोपखाना दुर्दान्त एव अजातिक गाजी उद्दीन के हाथों में पड़ गए तो उसकी महत्वाकांक्षा कल्पना की सभी सीमाओं का उल्लंघन कर जायगी।

सूरजमल और इन्तिजामुद्दौला मराठाओं और गाजी-उद्-दीन के चारों ओर

कूटनीति का ताना-बाना बुनने में व्यस्त थे। स्वयं सम्राट भी इस षड्यंत्र में शामिल था। शाही सील के साथ जयपुर के महाराजा माधोसिंह, मारवाड़ के राजा और सफदर जंग को पत्र भेजे गये—जिन्होंने मराठाओं के अत्याचार सहे थे—जिनमें उनसे कहा गया था कि वे शाही झण्डे के नीचे संगठित होकर एकता कायम करें तथा दक्षिण के इन कोड़ मराठों से हिंदुस्तान को मुक्त करें। इन सबसे आश्वासन प्राप्त करने के उपरान्त प्रस्तावित आक्रमण की वास्तविक योजना को तैयार करने का काम सूरजमल को सौंपा गया। उसने सुझाव दिया कि सम्राट शिकार खेलने तथा दोआब में शाही भूमि को देखने के बहाने कोल (अलीगढ़) पहुंचे और वहां तब तक रुके जब तक नवाब सफदरजंग उसके पास न पहुंच जाए। अवध की सेना के आ जाने के उपरान्त वह जल्दी से आगरा के नगर की ओर कूच करे जहां कछवाहा और राठौर राजा अपनी-अपनी सेनाओं के साथ उससे मिलें। योजना यह थी कि चम्बल के ऊपर घेरा डाल दिया जाय ताकि शत्रु बचकर न निकल पाये। यदि मराठा कुम्हेर का घेरा उठा ले और आगरा की ओर प्रस्थान कर दें तो उस स्थिति में सूरजमल उनके पीछे-पीछे चला आये और सम्राट की सेना के साथ मिल जाये।

सम्राट अपनी सेना दरबार और हरम के साथ धीरे-धीरे सिकन्दरा के पड़ोस में पहुंचा। नवाब सफदर जंग भी गंगा के किनारे मेंहदी घाट पर पहुंच गया और वहां अपने सम्राट की प्रतीक्षा में अपना डेरा डाल दिया। परन्तु सम्राट कोल जाने की ओर वहां के मजबूत दुर्ग में शरण लेने की बजाय, सिकन्दरा में रुका रहा और नये सैनिकों की भरती करता रहा। इस बीच मल्हार राव कुम्हेर के किले पर घेरा डालने वाले खेमे से चुपचाप ५००० घुड़सवारों के साथ चला गया उसका मंशा शाही शिकार पर तेजी से झपट्टा मारने तथा अकेले उसके लाभ को हथियाने की थी। शाही खेमा यह देखकर भौचक्का रह गया, उसका खजाना और सामग्री, तथा उसके हरम की कुछ स्त्रियां तथा समूचा तोपखाना मराठाओं के हाथों में आ गया। अल्पबुद्धि सम्राट और उसका कायर मंत्री भेष बदलकर भाग गए। मराठाओं ने उनका दिल्ली की ओर पीछा किया तथा उन्होंने राजधानी का घेरा डाल दिया। इन्तिजामुद्दौला ने नगर की प्रतिरक्षा का कुछ प्रबन्ध किया, तथा उसे यह मूर्खतापूर्ण आशा थी कि राजपूत राजे सफदरजंग और सूरजमल उसकी सहायता को आयेंगे। गाजी उद्दीन ने कुम्हेर के घेरे से अपनी सेना हटा ली और वह भी मराठाओं के साथ शामिल हो गया। उसे अभी भी आशंका थी कि कहीं उसके शत्रु फिर से न मिल जायें इसलिए उसने रुहेला सरदार नजीबुद्दौला को सहायता देने के लिए आमन्त्रित किया तथा उसे उसने उच्च पद और सहायता के रूप में एक बड़ी धन राशि देने का वायदा किया।

किले पर कब्जा कर लिया गया तथा सम्राट उसकी मां और अन्य सम्बन्धियों

को गिरफ्तार कर लिया गया। इन्तिजामुदाला को पदच्युत कर दिया गया तथा गाजा उद् दीन के आदेश स सम्राट को अधा कर दिया गया। वह स्वय वजीर बन गया तथा उसन अजीजुद्दीन को आलमगीर द्वितीय के नाम से तख्त पर बठा दिया (१० शबन ११६७ हि०—रविवार २ जून १७५४) [वाका, ६१] अब सूरजमल के लिए स्थिति को सुधारने के लिए काफी समय बीत चुका था। सूरजमल के ऊपर गाजीउद्दीन के मित्र नजीबुद्दौला की निगरानी थी। राजपूताने के राजा भी यथावत बठ रहे वे देख रहे थ कि योजना विफल हो चुकी ह। बादशाह के बदनसीब के लिए सूरजमल को उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता वस्तुत स्वय बादशाह अपनी लापरवाही और विवेकशून्यता के कारण इसके लिए उत्तरदायी था। यदि वह कोल समय स पहुच जाता तथा उसकी शक्तिशाली दीवारो के भीतर उसने अपना पडाव डाल दिया होता ता उस स्थिति म अप्रत्याशित आक्रमण की कोई सम्भावना ही नही रहती तथा सफदरजग के साथ उसकी सना का मिलन जो महदीघाट पर उसकी प्रतीक्षा कर रहा था सुगमता पूवक हो जाता। शाही खेम म लापरवाही और अनुशासनहीनता इस सीमा तक थी कि जब मल्हार राव न शत्रु की नब्ज की पहचान करन के लिए कुछ गोले फासने स फेंके तो वहा स कोई भी टोह लगान के लिए बाहर नही निकला। इसस भी बुरी बात यह थी कि वही बठ-बठ उन्होंने यह अन्दाज लगा लिया कि गाजीउद्दीन के एक लेफ्टिनेन्ट अकीबत महमूद न किसी गाव म आग लगा दी होगी। व सन्तुष्ट होकर आराम करन चल गय परन्तु थोडी देर म चार घुस आय और बहादुर सामन्तो और राजाओ को आमन सामन की लडाई के लिए बाध्य होना पडा। जो भी हो सूरजमल की तात्कालिक कूटनीति का उद्देश्य कुम्हेर क किल स मराठाओ को हटाया था और इसम उस पूण सफलता प्राप्त हो गई। इस अप्रत्याशित विजय न मराठाओ क सम्मुख आक्रमण क वह दृश्य उपस्थित किए जिनस उनक मनोबल को बढावा मिल सकता था। महान् मुगल क सिंहासन के पीछ खडे होकर मराठा राष्ट्र क हृदय म एक उत्कृष्ट भावना धडकन लगी और सुदूर सिन्धु नदी की चमकीली लहरा पर उनकी निगाह पडन लगी। जब मल्हार राव और गाजी उद्दीन न अपनी सनाए सिकन्दरा की ओर रवाना कर दी थी घेरा व्यावहारिक दृष्टि स हट चुका था। मराठा सना पडास क देहात की सभी खाद्य-सामग्री निबटा चुकी थी अन अब घिर हुए लोगो की अपक्षा अभाव घेरन वालो को अधिक सता रहा था। व छोट छोटे झुण्ड बनाकर वहा स बिखर गय तथा जियाजी अप्पा सिन्धिया को कुम्हेर पर छोड गय। मल्हार राव और गाजीउद्दीन क समक्ष इतनी कठिनाइया थी कि व अपनी पुरानी शत्रुता को भूल गय और उन्होन सूरज मल जस अटल मित्र और दुर्जेय प्रतिपक्षी का अपनी ओर मिलान का प्रयत्न किया। सिन्धिया की मध्यस्थता स एक सन्धि की गई जिसम यह शत रखी गई कि जाट

राजा ६० लाख रुपय का हरजाना दगा। मराठाओ न जाट प्रदेश खाली कर दिया रघुनाथ राव अपने घर की आर रवाना हो गया और जियाजी सिंधिया मारवाड चला गया।[१]

सदभ

१ उगन होडल स मथुरा के बीच का २२ कोस का फासला एक दिन म तय किया। (१५ रबी ११ ११६७ हिजरी—फरवरी १७५४) देखिए वाका पृ० ८५

२ उसकी आयु उस समय लगभग ३० वष थी। वाका की एक प्रविष्टि के अनुसार उसकी मत्यु ४ जमाद १ ११६७—बुधवार फरवरी २७ १७५४ को हुई थी। भाऊ बक्खर क अनुसार घरा आरम्भ होन क डेढ महीन बाद उसकी मत्यु हुई थी। यह दोनो विधिया एक दूसरे स मल खाती ह।

३ भाऊ बक्खर के सम्पादक न इस नाम का सस्कृतिकरण करक उस अनसूया बताया है तथा अनावश्यक रूप स उसके साथ भाषा वज्ञानिक विवेचना जोडी है। एक जाट लडकी क लिए यह बहुत अधिक पाडित्य पूण और काव्यात्मक नाम है—एसा नाम जो हिन्दुस्तान क लोगो क लिए बोधगम्य नही ह।

४ भाऊ बक्खर पृ० ६

५ गाजी उद्दीन क विरुद्ध इस प्रति षडयन्त्र तथा दोनो पक्षो की तिकडमो का सबस अच्छा वणन तारीख-ए मुज्जफरी म मिलता ह (हस्त लिपि—८४ ८४) आर वह सियार स काफी भिन्न ह। (मूल पाठ II पृ० ८८ ८८) भाऊ बक्खर पृ० १० सधि म उल्लिखित धन राशि अदा की गई थी। यह बात सन्देहास्पद ह। इस बात का उल्लख एशियाई इतिहासकारो आर फ्रेंच हस्तलखो म नही ह।

छठा अध्याय

जाटो के विरुद्ध अहमदशाह दुर्रानी का अभियान

११६६ हिजरी (नवम्बर १७५६—अप्रल १७५७)
अब्दाली के साथ सूरजमल का युद्ध

दिल्ली की नई सरकार ने सूरजमल के साथ लगभग एक वर्ष तक कोई छेडखानी नही की, क्योकि इस समय गाजीउद्दीन और मराठा पजाब मे व्यस्त थे। अफगानो को सिन्धु नदी के उस पार भगा दिया गया था और यह प्रान्त पुन साम्राज्य का एक भाग बन चुका था। थोडे दिना बाद वजीर गाजीउददीन और नजीबुद्दौला (अमीर उल उमरा) के बीच सघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई थी क्योकि नजीबुददौला को वजीर की तानाशाही मे शिकायत थी। चूकि बादशाह आलमगीर द्वितीय एक नगण्य व्यक्ति था अत उसकी गतिविधिया उसके रक्षक के द्वारा सचालित होती थी। ऐसी स्थिति मे शाही खेमे मे दो समान रूप से महत्त्वाकाक्षा और शक्तिशाली अभिमानी व्यक्तियो के लिए कोई स्थान नही था। नजीबुददौला को मराठाओ और गाजीउद्दीन के गठबन्धन से खतरा था क्योकि किसी भी क्षण गाजीउददीन मराठाओ की सहायता से उसके मसूबो को मिट्टी मे मिला सकता था। उसने दुर्रानी शाह की ओर सरक्षण के लिए देखा तथा उसके साथ विश्वासघाती बातचीत आरम्भ कर दी। गाजीउद्दीन ने रुहेला सरदार के अलगाव को निष्फल बनाने की दृष्टि से राजा सूरजमल के साथ मैत्री कर ली। आलमगीर के शासनकाल के दूसरे वर्ष मे अहमदशाह दुर्रानी ने दूसरी बार सिन्धु नदी को पार किया (रबी १ ११६६ हि०—नवम्बर १७५६) और उसने बडी द्रुतगति के साथ गाजीउद्दीन को दण्डित करने के लिए राजधानी की ओर प्रस्थान किया। अन्ताजी मनकेश्वर तथा अन्य मराठाओ ने जो वजीर की सेवा मे थे अफगान लुटेरो का पूर्वानुमान करके पूरने किले तथा राजधानी के बाहर स्थित स्थानो को खूब लूटा और फिर वे आधी रात के करीब भाग गए। स्वय गाजीउद्दीन ने नरेला मे शाह के सम्मुख

अपना आत्म-समर्पण कर दिया। दिल्ली आने पर उसको इटकर लूटा गया, उसे एक करोड़ रुपया देना पड़ा और अपना वजीर का पद छोड़ना पड़ा। अहमदशाह दिल्ली के तख्त पर बैठ गया तथा उसने अपने नाम के सिक्के चलवाए (८ जमादi, शनिवार २६ जनवरी १७५७)। चूंकि विद्रोही सरदारों में राजा सूरजमल सबसे निकट था, इसलिए शाह का क्रोध अपने रुके हुए समूचे जोश के साथ उनके ऊपर उबल उठा। सूरजमल का पुत्र जवाहरसिंह वल्लभगढ़ से अफगान सेना की गतिविधियां देख रहा था। उसने अफगानों की लूटमार करने वाली एक सैनिक टुकड़ी को जो फरीदाबाद की ओर गई थी काट डाला। शाह क्रोध से आग-बबूला हो गया और उसी रात उसने अब्दुस समद खां को निर्देश दिया कि वह काफिरों को प्रलोभन देकर एक झाड़ी में फंसा ले। जाट राजकुमार शत्रु के घुड़सवारों का उनके छिपने के ठिकानों तक पीछा करते करते शत्रु के जाल में लगभग फंस गया था। परन्तु अपने कुछ साथियों तथा लूट के कुछ माल को खोकर वह वहां से बच निकलने में सफल हो गया। अफगानों ने कुछ गांव लूटे और वे जितने लोगों को पकड़ सके, उन सबके सिरों को उन्होंने उनके धड़ से अलग कर दिया। (२२ जमाद I—शनिवार १२ फरवरी १७५७) को अहमदशाह दिल्ली से जाटों के विरुद्ध अभियान पर डीग कुम्हेर और भरतपुर को जीतने के दृढ़ संकल्प के साथ रवाना हुआ। जहान खां (दुर्रानी सेनापति) और नजीबुद्दौला के नेतृत्व में सेना की एक शक्तिशाली डिवीजन इस निर्देश के साथ भेजी गई अभिशप्त जाट की सीमाओं में प्रवेश करो और उसके अधीन प्रत्येक नगर और जिले में लोगों का कत्ल करो और लूटो। मथुरा का नगर हिन्दुओं का पवित्र नगर है और मैंने सुना है कि सूरजमल वहां है उस पूरे नगर को तलवार के घाट उतार दो। अपनी समूची शक्ति के साथ उस राज्य और देश में कुछ भी मत छोड़ो। अकबराबाद (आगरा) तक कुछ भी खड़ा मत छोड़ो। अपने सेनापतियों को दिए गए इस निर्देश से सन्तुष्ट न होकर शाह ने अपने दंडधारियों को यह निर्देश दिया कि वे सेना को यह सामान्य आदेश दें कि वह जहां पहुंचे वहां लूट मार करें तथा लोगों की हत्या करें। इस प्रकार लूटा हुआ माल उन्हें मुफ्त में इनाम के तौर पर दे दिया जाएगा। जो भी व्यक्ति किसी काफिर का सिर काटकर लाए वह उसे मुख्यमंत्री के खेमे के सामने फेंक दे जिससे एक ऊंची मीनार बनाई जा सके। एक खाता बनाया जाएगा और पांच रुपया प्रति हिसाब से सरकारी खजाने से उन लोगों को दिया जाएगा जो सिर काटकर लायेंगे। वस्तुतः यह कोई युद्ध नहीं था यह तो बड़े पैमाने पर खोपड़ी जमा करने का अभियान था जो किसी रेड इण्डियन सरदार को शोभा दे सकता था।

अभियान वल्लभगढ़ के घेरे के साथ आरम्भ हुआ क्योंकि जवाहरसिंह ने दो मराठा सरदारों शमशेर बहादुर और अन्ताजी मनकेश्वर के साथ वहां की चौकी संभाल ली थी। दो दिन तक उन्होंने बहादुरी के साथ किले की रक्षा की। तीसरी रात को

सूरजमल का पुत्र और मराठा सरदार भेष बदलकर वहा मे चल गय, जो कुछ थोडे से लोग किले म लडाई का मुखौटा बनाए रखने के लिए छोडे गये उन्ह अफगानो ने मौत के घाट उतार दिया। १२ हजार रुपय कुछ घोडे और कुछ ऊट विजेताओ के हाथ लगे। अहमदशाह न बचकर जान वालो की तलाश के लिए तत्काल समीपस्थ स्थानो पर दल भेज दिए। परन्तु जवाहरसिंह और मराठा नेताआ न फारसी पोशाक पहनी हुई थी उन्होंने एक भूमिगत प्रकोष्ठ क माध्यम से किले की खाई मे प्रवश पा लिया था शाह की मनाआ के बीच म स अपनी राह बनाने के बाद व जमुना की खादर मे पहुच गए थे। दो दिन और दो रात वे नदी से पानी पीने क लिए भी बाहर निकलकर नही आए।

शाह वहा दो दिन तक रुका और उसने कत्लेआम और लूट का आदेश दिया। एक प्रत्यक्षदर्शी सयद ने जो अफगान खेमे म था इन हमलो का वणन इस प्रकार किया है— मध्य रात्रि म खेम के लोग हमला करने के लिए गए। इसका प्रबन्ध इस प्रकार किया गया था एक घुडसवार घोडे पर बठता था और वह दस से लेकर बीस आदमियो को घोडे की पूछ स बाधकर ले आता था। जिस प्रकार ऊटो को रस्सी से बाधकर लाया ले जाया जाता है। जब सूर्योदय के बाद का एक घण्टा बीत चुका था मैंने उन्हे वापस आते देखा। प्रत्यक घुडसवार ने अपने-अपने घोडो को लूटे हुए माल से भर रखा था और उसके ऊपर उनके साथ बन्दी लडकिया और दास भी थे। कटे हुए सिर कपडो म ऐसे रखे गये थे जस वे अनाज की गठरिया हो और उन्हें बन्दियो के सिरो पर रखा गया था और इस प्रकार व खमे को वापस लौटे।

इस प्रकार हत्याआ और लूट का यह कायक्रम चलता रहा। ये हत्याए और इस प्रकार बन्दी बनाने का यह सिलसिला निस्सन्देह अद्भुत था जो कयामत के दिन तक चला। वे सारे सिर जो धडो से अलग कर दिए गए थे उन्ह खम्भो मे चिन दिया गया और उन लोगो से जिनके सिरो पर खून स लथपथ गठरिया लाई गई थी उनस अनाज पिसवाया गया और फिर आखिरी दिन उनके भी सिर काट दिए गये। ये काम अकबराबाद के शहर तक पूरे रास्ते चलते रहे और इस इलाके के किसी भी भाग को बख्शा नही गया। (एक फारसी हस्तलिपि का इरविन द्वारा किया गया अनुवाद—इण्डियन एन्टीकरी खडXXXVI,प० ६०)

जहान खा न भी अपन स्वामी के निर्देशो का अक्षरश पालन किया था। होली के दो दिन बाद २८ फरवरी १७५७ को वह एकाएक मथुरा के अभिशप्त नगर के सम्मुख उपस्थित हुआ। नगरवासियो को बसन्त के हष एव उल्लास के बीच किसी भयानक दुर्भाग्यपूण अनहोनी की लेषमात्र भी आशका नही थी। मथुरा के नगर की कोई किलेबन्दी भी नही हुई थी न तो उसके चारो ओर दीवारें थीं और न खाइया, सब तरफ स सुगमतापूवक वहा पहुचा जा सकता था। सूरजमल

ने वहा दुर्रानी सनापतियो से नगर की रक्षा के लिए पाच हजार सनिक छोड रखे थे। यद्यपि यह आक्रमण अप्रत्याशित था, परन्तु इन सैनिको न अपन अदम्य शौय का परिचय दिया। एक कठिन युद्ध के उपरान्त जिसमे तीन हजार जाटो न नगर की रक्षा मे अपने प्राण न्यौछावर किए, इस पवित्र नगर पर अफ़ग़ानो का अधिकार हो गया और उसके बाद भयकर रक्तपात आरम्भ हुआ। शाह की सनाओ की एक टुकडी न मथुरा के दक्षिण मे स्थित गोकुल पर आक्रमण कर दिया। चार हजार नागा सयासी जो अपन धम की रक्षा के लिए प्राणो सग क लिए हमेशा तत्पर रहते हैं वहा एकत्रित हुए और उनम स दो हजार अफगानो को मारकर युद्ध म खेत रहे। गोकुल की रक्षा हो गई। जगजू हिन्दू कट्टरवाद स आतकित होकर मुसलमान भाग गये। परन्तु वन्दावन म उन्हे किसी प्रतिरोध का सामना नही करना पडा जो एक स्त्रैण सम्प्रदाय तथा ब्रह्मचारियो की आश्रयस्थली थी। अपेक्षाकृत अधिक दृढ विश्वास वाले सम्प्रदाय के सदस्यो के द्वारा उनको कठोर यातनाए दी गइ।

उस वष दुर्रानियो न हिन्दुओ के सिरो स जो रक्त की होली खेली उससे मथुरा का समूचा नगर ऐसी उत्सवाग्नि स जल उठा जसी किसी चादनी रात मे होली के अवसर पर कभी नही जलाई गई थी। बलात्कार स अपमानित स्त्रियो की चीख-पुकार उन माताओ का क्रन्दन जिनके बच्चो को शतान सनिक हत्या करने के लिए ले गये थे इन सबकी प्रतिध्वनि जलते हुए नगर की गलियो म गूजती रही। कवि की कल्पना म निहित यमुना की नीलीधारा सात दिन तक खून स लाल रही और इसके बाद के सात दिनो म वह पीली रही। पतित वष्णव धम के अनुयायियो को जो नदी के किनारे लता-कुजो मे निवास करत थ जो दवी गोपाल के आमोद प्रमोद के स्वप्न देखत थे तथा जो उसकी मत्र मुग्ध करन वाली बासुरी के श्रवण की कल्पना करके आनन्द विभोर हो उठते थे उन्हे अपनी नपसकता का उचित प्रतिफल मिल गया। विनम्र बाबाजिओ के गले उसी प्रकार काट दिए गए जिस प्रकार मुसलमान उन्ह अपन देश मे काटत हैं।[3] प्रत्येक झोपडी मे एक बरागी का धड स अलग किया हुआ सिर पडा था और उसके मुह से एक गाय का सिर लगा दिया गया था जिसे एक रस्सी के द्वारा उसके गले मे लटकाकर उसके सिर से बाध दिया गया था। (इण्डियन एन्टीकेरी खड ३६ पृ० ६२)।

नगर के मुसलमान निवासियो को भी अपन सहधर्मियो स अच्छा सलूक नहीं मिला। उनके सिर तो बच गए परन्तु वे अपना सम्मान और सम्पत्ति नही बचा सके। शाह के सनिकों ने इतनी कर्तव्यनिष्ठा के साथ उसके आदेशों का पालन किया कि जिन्होने अपने को मुसलमान घोषित किया उन्हें अपने को नगा करना होता था और यह दिखाना होता था कि उनका खतना हो चुका है इसके बाद ही उन्हें छोडा जाता था। हत्याकांड के १४ दिन बाद एक बिल्कुल नग धडग व्यक्ति

खन्डहरों में एक ढेर में निकला और मीर साहब के सम्मुख खड़ा हो गया। उसने खाने के लिए थोड़े से भोजन की याचना की और अपना यह डरावना बयान लिखकर दिया। मैं एक मुसलमान हूं, मैं सोने चांदी का व्यापार करता हूं, मेरी बहुत बड़ी दुकान थी। हत्याकांड के एक दिन—एक घुड़सवार हाथ में तलवार लिये मेरे पास आया और उसने मुझे मारने का प्रयास किया। मैंने उसे बताया कि मैं मुसलमान हूं। उसने मुझे कपड़े उतारने को कहा। मैंने कपड़े उतार दिए। उसने कहा जो कुछ नगदी तुम्हारे पास है वह मुझे दे दो ताकि मैं तुम्हारी जान बख्श सकूं। मैंने उसे चार हजार रुपये दे दिए। एक दूसरा व्यक्ति आया और उसने तलवार से मेरे पेट पर प्रहार किया। मैं भागकर एक कोने में छिप गया। (उपरोक्त पृ० ६२) वृन्दावन को तो इससे भी बड़ी बदकिस्मती का सामना करना पड़ा जैसा मीर साहब के वर्णन से स्पष्ट है। जहां भी निगाह पड़ती थी लाशों के अम्बार दिखाई पड़ते थे। बड़ी संख्या में लाशों के पड़े होने तथा बड़ी मात्रा में खून के बिखरे हुए होने के कारण रास्ता निकालना कठिन कार्य था। एक स्थान पर हमने लगभग दो सौ मृत बच्चों का ढेर देखा। इन मृतकों में से किसी के सिर नहीं था। हवा में दुर्गन्ध इतनी तेज थी कि मुंह खोलना अथवा सांस लेना कष्टदायक था। हरेक ने अपनी नाक बन्द कर रखी थी और बोलते समय वह अपने मुंह को रूमाल से बन्द कर लेता था। (उपरोक्त पृ० ६२)

मार्च के मध्य में अहमदशाह मथुरा पहुंचा और अपने सेनापतियों द्वारा किए गए कामों को देखकर वह बहुत सन्तुष्ट हुआ। नजीबुद्दौला और जहान खां को खिल्लत व इनाम के द्वारा सम्मानित किया गया और उन्हें आदेश दिया गया कि वे अकबराबाद की ओर आगे बढ़ें जहां बहुत से सम्पन्न लोग हैं जो जाटों की प्रजा थे। आगरा का नगर भी कत्लआम के द्वारा उजाड़ हो गया किला घेर लिया गया। भाग्य से शाह की सेना में एक महामारी फैल गई जिसके फलस्वरूप १५० लोग प्रतिदिन मरने लगे। एक सेर इमली को खरीदने के लिए १०० रुपये की आवश्यकता थी। शाह ने अपने देश को वापस जाने का निर्णय लिया। जहान खां को आगरा के किले के घेरे से वापस बुला लिया गया। २७ मार्च को प्रत्यावर्तन आरम्भ हुआ और २९ मार्च तक जाट प्रदेश शत्रुओं से खाली हो गया। इण्डियन एंटीक्वेरी खंड XXXVI पृ० ६४ ६५) सैनिक दृष्टि से अहमदशाह का अभियान असफल रहा महाराज सूरजमल की शक्ति लगभग अक्षत ही रही। डीग और भरतपुर पर उसका अधिकार नहीं हो सका और न उनके गर्वीले स्वामी का वह झुकाने में सफल हो सका। केवल दो या तीन अरक्षित नगरों को वह अपने कब्जे में ले पाया तथा वहां के अभागे नागरिकों का उसने नरसंहार कर दिया। वह सूरजमल को बाहर निकालने में तथा उसे लड़ने के लिए बाध्य करने में असफल रहा। सूरजमल की रणनीति यह थी कि उस समय

तक प्रतीक्षा करा जब तक हि दुस्तान क मदाना की गरमी म परशान होकर अब्दाली यह इलाका छोडकर चला जाए आर या मराठा वहा उपस्थित हो जाए, जो उस समय तक नमदा क तट तक आ चुके थ। जब शाह न मथुरा से कुम्हेर की ओर कूच करन की धमकी दी तो उसन उस एक करोड रुपया इस शत पर पेशकश के तौर पर दन का प्रस्ताव किया कि वह अपनी कूच को स्थगित कर द। शाह की मुसीबतो न सूरजमल क हौसला को बुल द कर दिया। कुछ दिन बाद रूपराम कटारी क परामश से उसन उस स्पष्ट शब्दा म लिखा, मैं पशकश के तौर पर दस लाख से अधिक नही द सकता। आप इस स्वीकार कर ल और हमारे और आपके बाच शाति और सदभावना स्थापित हो जाएगी अयथा युद्ध की स्थिति बनी रहेगी। शाह न इस छोटी रकम को भी स्वीकार कर लिया क्योकि उसके सनिक सकडो की सख्या म प्रतिदिन मर रहे थ। दस लाख रुपये देन का एक लिखित समझौता सूरजमल न कर लिया आर दुर्रानी का सना दिल्ली वापस चली गई। परन्तु इस रकम म से जाट राजा न एक पसा भी नही दिया।

गाजीउद्दीन और मराठो के साथ महाराज सूरजमल की मत्री

उत्तरी तूफान का क्रोध मुश्किल स ही शान्त हो पाया था कि दक्षिण स एक जल प्रलय आ गइ जिसने समूचे हिन्दुस्तान को अपनी लपेट म ले लिया। इस जल प्रलय का अन्त हिमालय के चरणो आर सिधु तट पर जाकर ही हुआ उसन कुछ समय के लिए दुर्रानी विजय क समस्त अवशषो को बहा दिया तथा उसम उत्तरी भारत के सभी मुस्लिम राज्य डूब गए। शाह की विजय गाजीउददीन के प्रतिद्वन्द्वी रुहेला सरदार नजीबुददौला की विजय थी जिस विजेता अपना डिप्टी बनाकर यहा छोड गया था और जो नाममात्र के सम्राट आलमगीर द्वितीय तथा शाही नगर की देख रेख का काम उसकी ओर से सपादित करना था। वजीर का पद उससे ले लिया गया था और वह उसके षडयन्त्रकारी चाचा इतजामुददौला को सौंप दिया गया था। गाजीउददीन सम्राट वजीर और अमीर उल उमरा के विरुद्ध बदले की आग से जल रहा था और उस आग को सन्तुष्ट करने के लिए उसने मराठो को पुन आमन्त्रित किया। रघुनाथ राव दूसरी बार हिन्दुस्तान आया। (नवम्बर १८५६ अक्टूबर १७५७) और उसने निराश मराठा सरदारों मे एक नये जीवन का सचार किया। दिल्ली पर फिर से अधिकार कर लिया गया तथा गाजीउद्दीन की पुन वजीर के पद पर नियुक्ति कर दी गई। नजीबुद्दौला अपने विजयी प्रतिद्वन्द्वी के भयानक प्रतिशोध से बचन के लिए भागकर मल्हार राव होल्कर की शरण म चला गया जिसे वह अपना धम पिता कहने लगा था। रघुनाथ न पजाब को फिर से जीत लिया उसन दुर्रानी क सेनापति जहान खा को तथा

—मके पुत्र तैमूर शाह को पराजित किया तथा उन्हें सिन्धु के उस पार भगा दिया। इस प्रकार समूचे उत्तर भारत में वस्तुतः मराठा आधिपत्य स्थापित हो गया।

राजा सूरजमल बड़ी सावधानी के साथ इस राजनीतिक वातावरण से गुजर रहे थे। उनको अब्दाली और मराठाओं के बीच में चुनाव करना था एक ओर उनके धर्म का शत्रु था और दूसरी ओर उनके अनैतिक सहधर्मी। उसका अखिल हिन्दू-आदर्श उनको मराठों का साथ देने के लिए प्रेरित करता था परन्तु उनका आचरण ऐसा नहीं था जो उनमें विश्वास रखने की प्रेरणा देता। किन्तु वह इतने बुद्धिमान थे कि उन्होंने उनके आक्रामक अभियानों में शामिल होकर अपने समाधनों को नष्ट नहीं किया तथा अपने मुस्लिम पड़ोसियों को अपना शत्रु नहीं बनाया। यह जाट मराठा मैत्री केवल अनौपचारिक थी और वह विदेशी अफगान आक्रमणकारियों के विरुद्ध रक्षात्मक सन्धि थी। इस महान् जाट सरदार द्वारा अनेक अवसरों पर अभिव्यक्त राजनीतिक विचार प्रशंसनीय हैं और यदि मराठा सरकार ने उन पर आचरण किया होता तो हिन्दुस्तान में उनकी वास्तविक प्रभुसत्ता बहुत समय तक बनी रहती। सूरजमल सर्वप्रथम गद्दार नजीबुद्दौला को समाप्त करना चाहते थे तथा इसके पहले दुर्रानी उनकी सहायता के लिए यहां आने का समय निकाल पाता वह रुहेला अफगानों व उपनिवेशों का पूर्ण रूप से दमन करना भी चाहते थे संक्षेप में वह देश के भीतर के गद्दारों द्वारा अफगानिस्तान से आने वाले आक्रमणकारियों को दी जाने वाली समस्त सहायता को काट देना चाहते थे। रघुनाथ राव और दत्ताजी सिंधिया भी इसी विचार के थे और उन्होंने नजीबुद्दौला को मार भी दिया होता किन्तु मल्हारराव होल्कर के अविवेकी एवं निजी स्वार्थमूलक हस्तक्षेप के कारण ऐसा न हो सका। द्वितीय, सूरजमल गाजीउद्दीन के स्थान पर नवाब शुजा उद्दौला को वजीर बनवाना चाहते थे। इस इच्छा के मूल में उनके कोई निजी पूर्वाग्रह काम नहीं कर रहे थे। गाजी उद्दीन उत्तरी भारत में एक प्रभावहीन व्यक्ति था न तो उसका कोई प्रादेशिक प्रभाव था और न पारिवारिक उसकी स्थिति अत्यन्त दुर्बल थी। दूसरी तरफ नवाब शुजाउद्दौला व्यावहारिक रूप में एक बड़े और सम्पन्न राज्य का स्वतंत्र एवं वंश परम्परा से शासक था। इससे वजारत के सम्मान को कायम रखने के लिए अपेक्षित शक्ति स्वतः प्राप्त हो जाती तथा इसके लिए उसे मराठाओं पर आश्रित रहने की आवश्यकता भी न होती। चूंकि उसका परिवार फारस से सम्बन्ध रखता था और वह शिया मत का अनुयायी था इसलिए रुहेला अफगानों की भांति अब्दाली के साथ किसी भी प्रकार का जातीय लगाव भी नहीं था जिससे उसे नजीब खां की भांति खतरनाक और दुर्जेय माना जाता।

अवश्यम्भावी धमाका दो वर्ष बाद हुआ। नजीब-उद्दौला एक वर्ष तक शुक्रताल पर घिरे रहने के बाद भी अपराजित रहा। ऐसा इसलिए हो सका क्योंकि

होल्कर तथा अन्य मराठा नेताओं के बीच शत्रुता थी और जिस पर अब कोई पर्दा नहीं रह गया था। हफीज रहमत खा और दुन्दी खा तथा अन्य रुहेला नेताओं की नजीब उद्दौला और अब्दाली के साथ अफगानीय होने के नाते सहानुभूति थी। परन्तु वे अभी तक नवाब शुजा-उद-दौला के भय के कारण कुछ भी कर नही सके थे। अब अवध के विरुद्ध होल्कर के मनसूबे सर्वविदित हो चुके थे। फलतः नवाब अत्यधिक भयभीत था और उसे नजीब-उद-दौला के साथ मैत्री करने के लिए विवश होना पड़ा हालांकि उसे काबुल से शाह को आमंत्रित करने के प्रस्ताव से सख्त विरोध था। दुखी सम्राट आलमगीर द्वितीय को अपने पूर्वजो का सिंहासन गाजीउद्दीन की अपमानजनक तानाशाही के अधीन, नरम-से-नरम कुर्सी की तुलना में भी बुरा लग रहा था। उसने अब्दाली के पास इस आशय के गुप्त पत्र भेजे कि वह उसके क्रूर वजीर के बन्धनो से मुक्त कराये तथा उसके सर्वश्रेष्ठ जेलर नजीबउद्दौला को पुनः वजीर नियुक्त कराए। अपने पुराने अपमान को धो डालने तथा अपने पुत्र और सेनापतियों की पराजय का बदला लेने के लिए शाह ने चौथी बार सिन्धु नदी पार की। (बृहस्पतिवार २५ नवम्बर १७५९)। वजीर ने अपने चाचा इन्तिजामुद्दौला और सम्राट को मरवा डाला क्योंकि उनके ऊपर आक्रमणकारी के साथ गुप्त सम्बन्ध रखने का सन्देह था उसने दूसरे राजकुमार को शाह जहां द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा दिया (८ रबी २ ११७३ हि०) शाह सन्तुलित रूप से नजीब खा के प्रदेश की ओर बढ़ता रहा जहां रुहेला सरदारों तथा नवाब शुजाउद्दौला की सेनाएं उसके साथ मिल गयी। परन्तु मराठा खेमे में मतैक्य का अभाव था। उन्हें अनेक छोटी छोटी मुठभेड़ों में पराजय का सामना करना पड़ा फलतः उनमें घबराहट फैल गई। दत्ता जी सिंधिया ने शुक्रताल का घेरा ११ दिसम्बर १७५९ को उठा लिया और वह दिल्ली आ गया। सब जगह बेचैनी और निराशा फैल रही थी शाही राजधानी उजाड़ लग रही थी। जिनके पास खोने के लिए कुछ भी था—सम्मान अथवा धन वे दक्षिण की ओर जाटों के प्रदेश में भाग गए—जो हिन्दू और मुसलमान दोनो प्रकार के भगोड़ो के लिए आतिथ्य प्रदान करने वाली शरणस्थली बन गया था। मराठा सरदार ने भी अपनी स्त्रियां तथा बच्चो को सूरजमल के संरक्षण में भेज दिया और उनके साथ ही हिन्दुस्तान के वजीर का हरम भी वहां आ पहुंचा जिसे अपने उदार शत्रु सूरजमल के संरक्षण में अपनी स्त्रियों के सम्मान को सुपुर्द करने में कोई संकोच नहीं था। जब मराठाओं का भाग्य बुलन्दी पर था सूरजमल सन्देहात्मक अलगाव का रवैया अपनाता रहा था परन्तु इस संकट के अवसर पर वह अब्दाली से भयभीत होकर मराठाओं के साथ आगे बढ़ने उनकी मदद में उनके साथ खड़े होने से हटने वाला भी नहीं था। कुम्हेर के घेरे के समय जयाजी अप्पा सिंधिया ने उसके लिए जो अच्छा काम किया था उसे जाट राजा भूला नहीं था, और ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में था

सम्मान के लिए पर्याप्त व्यवस्था की और उसके साथ ऐसा वर्ताव किया जसे वह स्वामी हो और जो अपने नौकर के घर आया हो। इस बीच शाह ने अपने को राजधानी का स्वामी बना लिया था उसने सूरजमल से, उसके निष्ठाहीन आचरण के लिए, एक करोड रुपया जुरमाने के तौर पर देने की माग की। जाट राजा इतना बुद्धिमान था कि एक भारी रकम देकर अपने शत्रु को युद्ध-सचालन करने की अधिक ताकत देने के पक्ष में नही था। उनको मालूम था कि उसकी अगली माग भागकर शरण मे आये मराठा तथा मुस्लिम सरदारों के समर्पण की होगी। उसने विश्वासघाती आक्रमणकारी के साथ सन्धि करने का विचार ही अपने मस्तिष्क से निकाल दिया था और यह निश्चय कर लिया कि वह इस राशि को रक्षात्मक युद्ध के सचालन में प्रयुक्त करेगा। समूचा भारत मराठाओं के पतन से प्रसन्न था और इस प्रसन्नता में सहभागी हिन्दू भी थे क्योंकि मुसलमानो की अपेक्षा उनको मराठाओ ने अधिक लूटा था। उनके चरित्र एव आचरण ने उत्तर भारत के लोगों में उनके प्रति विश्वास की भावना को नही जगाया था। उन्होंने सबके विरुद्ध अपने हाथो को प्रयुक्त किया था और अब उसके हाथ उनके विरुद्ध उठ रहे थे। उनके हाथो राजपूताने ने इतना सहा था कि आमेर के माधोसिंह और मारवाड के विजयसिंह जसे राजाओ ने अब्दाली की विजय का उतना ही स्वागत किया था, जितना उनके अभाग उत्तराधिकारियो ने ४० वर्ष बाद उसी मूलवश के लोगो पर लार्ड लेक की विजय पर प्रसन्नता व्यक्त की थी।[८]

परन्तु राजा सूरजमल ने स्थिति का अवलोकन दूसरे प्रकार से किया, यद्यपि मराठाओं के हाथ उन्होने भी इतना ही सहा था, जितना अन्य लोगो ने। फलत उच्चतर राजनीतिक लक्ष्यो की प्राप्ति के लिए उसने अधिक दूरदृष्टि से काम किया। इस सकट-काल में उनके आचरण को निर्धारित करने मे केवल जियाजी अप्पा सिंधिया के प्रति कृतज्ञता की भावना की ही भूमिका नही थी। उसकी दृष्टि मे मराठाओ के हर वर्ष होने वाले हमले एक नये वश—दुर्रानी की अधीनता मे एक शक्तिशाली मुस्लिम-साम्राज्य के उदय की अपेक्षा बुराई मे कम थे। राजा सूरजमल उत्तर भारत में मराठाओ की उपस्थिति को राजनीतिक आवश्यकता समझते थे क्योंकि उसके माध्यम से विदेशी आक्रमणकारियो को देश से बाहर रखा जा सकता था तथा हिन्दू और मुसलमान शक्तियो के बीच सन्तुलन कायम रखा जा सकता था। वह एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ थे। भाऊ की तरह अदूरदर्शी नही जो एक अपवर्जक एव असहिष्णु हिन्दू-स्वराज की कल्पना मे सदा डूबा रहा। मुगल साम्राज्य के सिंहासन की गरिमा को बनाये रखने के सम्बन्ध मे महाराजा सूरजमल से अधिक कोई दूसरा व्यक्ति जागरूक नही था जसा इसके बाद और भी अधिक स्पष्ट हो जाएगा। वह उस नवोदित हिन्दू एव मुस्लिम राज्यो के बीच एकता का एकमात्र साधन मानते थे। जहा तक अपने पडोसी राज्यों के सम्बन्ध में उनकी

सातवां अध्याय

सूरजमल की महान् निराशा

पानीपत की प्रस्तावना

वर्ष १७६० के अन्तिम छ महीनों में भारत कष्टदायक असमंजस में अपनी सांस रोके रहा। जिन दो शक्तिशाली युद्ध के बादलों ने राजनीतिक क्षितिज को अभी तक काला किया हुआ था वे अब अपेक्षाकृत अधिक बड़ा आघात पहुंचाने के लिए सवेग एकत्रित कर रहे थे। उत्तर भारत में प्रभाव स्थापित करने के लिए विदेशी अफगान आक्रमणकारी तथा मराठाओं के बीच संघर्ष को दुर्रानी और पेशवा ने महान साम्प्रदायिक और धार्मिक युद्ध का रूप दे रखा था। अफगान शासक का दावा था कि उस आक्रामक हिन्दू प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध सभी मुसलमानों का समर्थन प्राप्त है क्योंकि वह ह्रासोन्मुख इस्लाम का हिमायती है इसके विपरीत मराठा नेता ने यह घोषणा की थी कि उसका उद्देश्य दमनकारी मुस्लिम शासन के अन्तर्गत वर्षों से चली आ रही दासता से अपने समान धर्मावलम्बियों को मुक्त कराना था। पेशवा के दूत राजपूताना के प्रत्येक हिन्दू शासक के दरबार में गए थे परन्तु उन्हें वहां अभीष्ट सत्कार प्राप्त नहीं हुआ और उत्तर भी ऐसे मिले जिन्हें टालू कहा जा सकता है। इन नरेशों का तर्क था कि यदि मुगल सिंहासन की छाया में मराठाओं की आवर्ती मरें उनके लिए विनाश और कष्ट का कारण बन सकती थी तो अब्दाली के भय से मुक्त इन दक्षिण-वासियों की निर्विरोध प्रभुसत्ता के अन्तर्गत उनके भाग्य का क्या भविष्य होगा? किसी भी राजपूत नरेश ने पेशवा की अपील का वांछित प्रत्युत्तर नहीं दिया। उनमें उनके हिन्दू मित्रों की इतनी कम आस्था थी कि राजा सूरजमल को भाऊ के खेमे में जाने की उस समय तक हिम्मत नहीं हुई जब तक कि होल्कर और सिंधिया ने उसकी सुरक्षा का दायित्व अपने ऊपर नहीं ले लिया। पेशवा नानाजी बाजीराव ने अपने चाचाजात भाई सदाशिव भाऊ और अपने पुत्र विश्वासराव को एक लाख सैनिकों के साथ भारत पर अधिकार

स्थापित करने के लिए भेजा था। वस्तुत इतनी बड़ी और सुसज्जित सना न इसके पूव नमदा नदी को कभी पार नही किया था। अपने चाचा के पुत्र से चलते समय उसने कहा था "अपने इस भतीजे को अपन साथ हिन्दुस्तान ले जाओ तथा साम्राज्य के सभी गैर-अफगान सामन्तो को अपने पक्ष मे मिला लो। मैं एक दूसरी शक्तिशाली सना के साथ जल्द तुम्हारे पीछे आऊगा भगवानजी के आशीर्वाद से मैं कन्धार को सभी जीवित प्राणियो स रहित कर दगा तथा पृथ्वी पर अफगान जाति का बीज भी नही रहन दूगा। इसके बाद भुगतन के लिए केवल एक या दो मुसलमान बचेंगे जसे शुजा उद्-दौला और जफर अली खा (बगाल का मीर जाफर)। यदि वे शत्रुता प्रदर्शित करेंगे, तो उनका अस्तित्व भी मिटा दिया जाएगा यदि वे आत्म-समपण कर देंगे तो हम उन्ह पख विहीन कबूतरो की भाति रखेंगे। इसके उपरान्त विश्वास राव को दिल्ली के तख्त पर बिठाकर मैं तीर्थयात्रा पर चला जाऊगा।" (इमाद, ७८) य लम्बी चौडी तथा ऊची आशायें किस सीमा तक पूरी हो सकी यह भारत के इतिहास के कुख्यात तथ्य हैं।

चम्बल के तट पर आने के बाद, भाऊ ने एक पत्र लच्छेदार भाषा म राजा सूरजमल को लिखा जिसम उसने सूरजमल स अनुरोध किया था कि वह अविलम्ब मराठा खेमे म आ जाय और उनस मिल जाए। (इमाद ७८, १७८)। मल्हार राव होल्कर और सिन्धिया न उसे आगरा मे भाऊ स मिलने क लिए राजी कर लिया सूरजमल मराठा खेमे में गया। भाऊ एव अन्य मराठा सनापतियो न सम्मानपूवक उसका सत्कार किया। आगरा स व मथुरा की ओर रवाना हुए जहा अब्दुल-नबी की मस्जिद को देखकर भाऊ का क्रोध भडक उठा। सूरजमल की ओर मुडकर उसने कहा तुम अपने को हिन्दू कहत हो परन्तु इस मस्जिद को तुमन इतने समय तक कसे खडा रखा ह? सूरजमल का विनम्र उत्तर था, पिछले कुछ समय स हिन्दुस्तान की शाही किस्मत वेश्या क अनुग्रह की भाति ढुलमुल-सी रही है आज वह एक व्यक्ति की गोद म है और दूसरे दिन किसी दूसरे क बाहुपाश मे है। यदि मैं इस सम्बन्ध मे आश्वस्त होता कि मैं जीवनपयन्त इन प्रदेशो पर शासन करूगा तो मैं इस मस्जिद का जमीन से मिला देता। परन्तु इसका क्या लाभ होगा कि मैं इस मस्जिद को नष्ट कर दू और कल को जब मुसलमान यहां आयें और वे महान् मस्जिद को नष्ट हुआ देख करके इस एक मस्जिद के स्थान पर चार मस्जिदें खडी कर दें। चूकि अब महामहिम आप इस प्रदेश म आये हैं इसलिए यह निणय अब आपके हाथ मे है। भाऊ का प्रत्युत्तर था 'अफगानो को परास्त करन क बाद मैं प्रत्यक मस्जिद के खडहर पर एक मन्दिर का निर्माण करूगा। परन्तु दिल्ली को जीतन के बाद यमुना म एक पवित्र स्नान कर लेन पर उसका क्रोध ठडा हो गया जामा मस्जिद के फकीरों ने ब्राह्मणो के साथ उसकी दानवीरता म अपना हिस्सा बटाया। (वाका, १७८)

कुछ समय तक मामला कुछ ठीक ठाक चलता रहा मराठाओं और जाटों के बीच प्रेम और सद्भाव का सर्वत्र अवलोकन किया जा सकता था। परन्तु अब्दाली के विरुद्ध अभियान की योजना के सम्बन्ध में मतभेद होने के कारण इस प्रेम में शीघ्र ही ठंडापन आने लगा। मराठा सेनाध्यक्ष ने आगरा में एक युद्ध-परिषद का आयोजन किया जहां उसने सूरजमल से कहा कि आगामी अभियान को चलाने का समुचित तरीका क्या होना चाहिए? इस सम्बन्ध में वह अपनी राय बताए। जाट सरदार ने उत्तर दिया मैं तो केवल जमींदार हूं और महामहिम आप बड़े राजा हैं। हरेक अपनी क्षमता के अनुसार अपनी योजना तैयार करता है। जो मेरी राय में वांछनीय है उसे मैं निवेदित करता हूं यह एक महान सम्राट के विरुद्ध संघर्ष है जिसे सभी इस्लाम के सरदारों का समर्थन प्राप्त है। यद्यपि शहंशाह हिंदुस्तान में केवल प्रवासी हैं परन्तु उसके अनुयायी इसी देश के रहने वाले हैं और वे बड़ी रियासतों के स्वामी हैं। यदि आप चतुर हैं तो शत्रु आपसे भी अधिक चतुर है—निस्सन्देह आपके लिए यही उचित है कि आप इस युद्ध के संचालन में अधिक सावधानी और विचार से काम लें। यदि विजय की हवा गाय की पूंछ पर (आपका ध्वज) अपना प्रभाव डालती है तो आप समझें कि उस भाग्य ने अपनी कलम से आपके शुभ मस्तिष्क पर लिखा है। परन्तु युद्ध तो विस्मत का खेल है जिसमें केवल दो विकल्प होते हैं। —बुद्धिमानी का तकाजा यह है कि इस सम्बन्ध में बहुत अधिक आशंका न रहा जाए और न बहुत अधिक शान्ति से आराम किया जाए। यह उचित होगा कि आप अपनी महिलाओं अनावश्यक सामान और बड़ी-बड़ी तोपों को जिनकी युद्ध में बहुत कम उपयोगिता है, उन्हें चम्बल के पार झांसी या ग्वालियर के किले में भेज दें और आप स्वयं हल्के हथियारों से सुसज्जित सेना के साथ शाह का सामना करें। यदि विजयश्री आपके हाथ लगती है तो हम लूट की सामग्री प्रचुर मात्रा में मिलेगी और यदि युद्ध का रुख उल्टा होता है तो उस स्थिति में हमारी टांगें (स्त्रियों तथा अन्य रुकावटों से बंधी न होकर) हम निर्बाध रूप से भागने में सक्षम रहेंगी। यदि आप उन्हें बहुत दूर भेजने के विरुद्ध हैं अथवा उसे अव्यावहारिक मानते हैं तो मैं अपना कोई भी एक मजबूत दुर्ग जिसे आप उचित समझते हैं खाली कर दूंगा जहां आप अपनी स्त्रियों और सामान को रख सकते हैं जहां सभी प्रकार की सामग्री और रसद रखी जा सकती है जिससे निर्णायक कार्यवाही के समय आपके दिल पर कोई बोझा न रहे और आपके हाथ आपकी महिलाओं के सम्मान की रक्षा की चिन्ता से मुक्त रह सकें और इस दुर्भिक्ष के समय में अनाज की पूर्ति का मार्ग खुला रहे ताकि अनाज का अभाव सेना के लिए किसी कठिनाई का कारण न बन सके। मैं अपने सैनिकों के साथ रकाब पर प्रतीक्षा करूंगा और चूंकि मेरा देश शत्रु की लूटमार से मुक्त रहा है इसलिए वहां से सामग्री प्राप्त की जा सकती है —यह बुद्धिसंगत होगा कि शाह के विरुद्ध हल्की

अश्व-सेना के साथ, अनियमित युद्ध लडा जाए (जग-ए-काजकाना) और राजाओं तथा सम्राटो की भांति जमकर लडाइया न लडी जाए (जग-ए-सुल्तानी)। जब वर्षा ऋतु आएगी तो दोनो पक्ष अपने-अपने स्थानो से हटने म असमथ हो जाएगे और फिर आखिर म शाह की स्थिति हमारी तुलना म अधिक असुविधाजनक हो जाएगी अत फिर वह परेशान होकर स्वदेश लौट जाएगा। इस प्रकार अफगानों का जब मनोबल गिर जाएगा तब वह आपकी शक्ति के आगे झुक जाएगे। (इमाद-१७६-१८०) भाऊ को परामश देते हुए आपने आगे कहा कि सेना की एक डिवीजन को पूव की ओर भेजा जाए और दूसरी को लाहौर की तरफ, ताकि इन क्षेत्रो को तहस-नहस किया जा सके और दुर्रानी की सेना को प्राप्त होने वाली रसद को रोका जा सके।[1] इस समय राजा सूरजमल तथा मराठाओ का अब्दाली के प्रबल शत्रु सिखो और बनारस के राजा बलवत सिंह के साथ पत्र-व्यवहार चल रहा था। राजा बलवतसिंह की अब्दाली के मित्र शुजा-उद्दौला के साथ शत्रुता थी। स्पष्टत इस पत्र-व्यवहार का प्रयोजन अवध और पजाब से अब्दाली की सेना को प्राप्त होने वाली रसद को रोकना था तथा आक्रमणकारी की सेना के पिछले तथा बायें बाजू के भाग म विपरयन उत्पन्न करना था।

सब मराठा सरदारो ने इस योजना की प्रशसा की तथा एक स्वर स कहा कि यह उनकी भी राय है। 'हम स्वय कजाक हैं इसलिए युद्ध के इस तरीके को अपनाने से हमारे ऊपर कोई दोष नही आता। हमारी कुशलता भागने म है, यानी पराजय स बचने म है। यदि शत्रु को छलबल स पराजित नही किया जा सकता, तो यह विवेकपूण बात नही होगी कि हम अपने आपको कठिन परिस्थिति मे फसा लें और अपने को विनष्ट होने दें। परन्तु घमडी भाऊ को युद्ध करने का यह तरीका उस जैसे राजा के लिए अनुपयुक्त प्रतीत हुआ आखिर वह पेशवा का चचाजात भाई था जिसके नौकरो और एजेंटो ने हिन्दुस्तान म गौरवपूण उपलब्धिया हासिल की थी उसने इस परामश को होल्कर तथा अन्य वृद्ध सरदारो के सठियायेपन और जाट की मूखता का फल माना—जाट जिसे कुछ दिन पूव ही गौरवपूण स्थिति प्राप्त हुई थी। इस प्रकार सभी सरदार निराश और अपमानित होकर यह कहते हुए बाहर चले गए कि कोई बडी पराजय से ही इस जोशीले और उतावले नेता मे अक्ल आएगी और उसके बाद ही वह अपने सहायको के परामर्श पर ध्यान देना आरम्भ करेगा (इमाद १८० १८१)। अपने मराठा मित्रों के सम्बन्ध मे राजा सूरजमल का उत्साह एक सीमा तक ठडा पड गया और यदि उनके बीच कोई घातक गलतफहमी पदा नही हुई तो उसका कारण दूसरे मराठा सरदारो का व्यवहार-कौशल था। उन्होने भाऊ को समझाया कि उसे जाट सरदार के प्रति अधिक विचारशील होना चाहिए क्योंकि इस युद्ध म सफलता के लिए उसका उनके साथ बना रहना बहुत अधिक महत्त्वपूण है।

गाजी-उद्दीन के साथ मिलकर राजा सूरजमल ८००० जाटो के साथ भाऊ की सेना म शामिल हो गया।' जुलाई १७६० म यह मित्र सेना दिल्ली पहुची और उसन नगर का घेरा डाल दिया। स्वय गाजी-उद्-दीन अपनी विशिष्ट कम शक्ति एव साधन-सम्पन्नता के साथ नगर पर अधिकार स्थापित करन क काम म जुट गया। जब शाही राजधानी का पतन हो गया, उसने अब्दालियो स पूरा प्रतिशोध लिया तथा मराठाओ ने खुलकर लूटमार की इस प्रकार उनक हाथो म लूट का इतना माल आया कि उनम स कोई निधन नही रहा (सरदसाई, पानीपत पृ० १६२)। गाजी-उद्-दीन ने शाही अन्त पुर से एक राजकुमार निकालकर उसे गद्दी पर बठा दिया नगर मे व्यवस्था स्थापित की और कुछ दिन तक वजीर की हसियत से काम किया जो लोगो के विश्वास क अनुसार स्वाभाविक रूप स उसके पास आ गया था। परन्तु अचानक भाऊ ने उस वजीर क रूप म मान्यता प्रदान करने मे अपनी अनिच्छा व्यक्त की उसन नारोशकर को राजाबहादुर का खिताब दिया उस राजधानी का गवनर तथा किले का कमाडेंट बनाया तथा आपचारिक रूप स उस वजीर का पद भी दे दिया। इस प्रकार राजा सूरजमल द्वारा दिए गए वचन की अवहेलना कर दी गई उसने जोरदार शब्दो मे भाऊ स कहा कि नई नियुक्ति अन्यायपूण और अविवेकपूण है। उसन गाजी उद्-दीन की पुनर्नियुक्ति की प्रायना की। होल्कर और सिधिया न राजा की बात का समथन किया। परन्तु घमडी भाऊ को उसकी जिद से कोई भी विचलित नही कर सका इन निराश सरदारो ने गभीर चिन्ता व्यक्त करत हुए कहा हिन्दुस्तान मे हमारी प्रतिष्ठा का अन्त हो चुका है। अब यह सब कुछ हम कहा ले जाएगा? सूरजमल अपने गुरु पुरोहित एव *राजनीतिज्ञ रूपराम कटारी के पास आया और उसस कहा कि भाऊ न उनके* सयुक्त ज्ञापन की पूण रूप से उपेक्षा की है और गाजी-उद-दीन को वजीर के पद पर पुन नियुक्त करने से इकार कर दिया है। यहा ठहरे रहना उचित नही ह कोई भी दुघटना हो सकती है। बुद्धिमानी की बात यह होगी कि हम प्रत्येक सम्भव तरीके से अपने आपको इस स्थिति म से निकाल ल। परन्तु होल्कर और सिधिया के खेमे बहुत नजदीक थ उनके निकलने का कोई रास्ता नही था। इस चिन्ता स उसका मस्तिष्क बहुत परेशान रहा।

भाऊ की *मूखता और मस्तिष्क की विकृतता का यहीं* अन्त नहीं हुआ। दीवान ए आम की छत पर चाँदी के पटाव ने जिस पर हीरे जवाहरात जड हुए थ, इस गवार दक्षिण भारतीय की लालची आखो को अपनी ओर आकर्षित किया। अपने मन मे उसने सोचा यहा यह छतगीरी है मैं इस उतार दूगा और उस जला कर अपन सनिकों को वेतन दे दूगा और उसक स्थान पर मैं लकडी की छतगीरी बनवा दूगा। इस प्रकार पहल निणय करने के उपरान्त उसन सिधिया होल्कर और सूरजमल को इस सम्बध म उनकी राय जानन क लिए बुलाया। राजा

सूरजमल के हृदय की विशालता को समझने के लिए उसके द्वारा भाऊ से शाही वैभव के इस अन्तिम अवशेष की रक्षा करने की अपील से अधिक श्रेष्ठ कोई दूसरा उदाहरण नही है। उसने कहा, भाऊ साहब ! सम्राट के सिंहासन का यह कमरा सम्मान और आदर का स्थान है। नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली ने भी जिन्होंने इस महल की अनेक बहुमूल्य वस्तुओं को अपने अधिकार में ले लिया था इस छतगीरी पर हाथ नही लगाया था। सम्राट और अमीर अब आपके हाथों में हैं। हम अपनी आखो से उसे कुरूप होते नही देखेंगे। उससे हमें कोई श्रेय नही मिलेगा केवल निष्ठाहीनता की बदनामी ही मिलेगी।[1] आज मैंने आपसे जो विनम्र प्रार्थना की है उस पर कृपा करके ध्यान दें। यदि आपके पास धन की कमी है आप मुझे आदेश दें। मैं छतगीरी पर हाथ न लगाने के लिए आपको पाच लाख रुपया देने को तैयार हूं। भाऊ ने इन शब्दों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया उसका विचार था कि छतगीरी को गलाकर उसे अधिक धन प्राप्त हो जाएगा। लूट के हृदयहीन कार्य को उसके आदेश के अधीन निष्पादित किया गया छतगीरी गिरा दी गई और उसे तौला गया परन्तु उसे यह जानकर बड़ी निराशा हुई कि चादी का मूल्य कुल तीन लाख रुपया था। राजा सूरजमल अब अपने आपको रोक नही सका वह भाऊ के पास गया तथा अपने वास्तविक क्रोध को व्यक्त करते हुए उसने कहा भाऊ साहब आपने सिंहासन की पवित्रता को उस समय नष्ट किया है जब मैं यहा उपस्थित हू और इस प्रकार इस कुकृत्य में मुझे भी साझीदार बनाया है। जब जब मैंने आपसे किसी मामले मे प्रार्थना की है आपने उसकी उपेक्षा की है। हम दिल से अपने को हिन्दू होने का दावा करते हैं। क्या आप यमुना के जल को उतना महत्त्व देते हैं जितना स्पर्श आपने मेरे साथ मैत्री का एक पवित्र प्रमाण बताया था।

अक्तूबर १७६० में भाऊ ने कुजपुरा (दिल्ली से ७८ मील उत्तर में स्थित) के नवाब के विरुद्ध कूच करने का निश्चय किया। (नवाब जमुना तट पर स्थित एक किले का स्वामी था।) कूच करने से पूर्व उसने परामर्श के लिए अपने सरदारों—होल्कर सिंधिया सूरजमल तथा अन्य को बुलाया। सूरजमल ने इस अवसर पर अपनी कटु भावनाओं को बड़े स्पष्ट शब्दों मे व्यक्त किया 'आपने हमारी इच्छा के विरुद्ध चादी की छतगीरी को निकाला है। उसे उसके पुराने स्थान पर पहुचाइए। गाजी-उद्दीन को वजीर का पद फिर से दीजिए जो न्यायपूर्ण तरीके से उसी का है। सिंधिया होल्कर और मुझे सभी को इस कारण परेशानी हुई है तथा इससे हमारे सम्मान और अच्छे नाम पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। आज से आगे आप हमारी छोटी-छोटी प्रार्थनाओं पर कुछ अधिक ध्यान देने की कृपा करें। उस स्थिति में आप मुझे और मेरे सभी संसाधनों को जैसे चाहें प्रयुक्त करें। मैं पहले की ही भांति आपकी सहायता करता रहूंगा और आपको रसद भिजवाने

की व्यवस्था न रता रहूगा। आप दिल्ली न छोड यहीं से आप अपनी योजनाओ को पूरा रे। मजपुरा के मामला म फसना उचित नही है। परामश के य हितकारी परन्तु अप्रिय शब्द उमक कानो म इस प्रकार पडे जिस प्रकार घी की बूदे सुलगती हुई आग पर पडती है। भाऊ न अपनी गवपूण घृणा क साथ कहा क्या मैं दक्षिण मे तुम्हारी शक्ति पर भरोसा रखकर आया हू। मैं वह करू गा जो मैं चाहता हू। तुम चाहो यहा ठहरो और या अपन स्थान पर वापस चले आओ। अब्दाली को पराजित करन क बाद मै तुमस निपट लूगा। इन कठोर शब्दो को सुनन के बाद सिंधिया और होल्कर घबराकर निस्तब्ध एव गूगे से बठे रहे।

महाराजा सूरजमल न निराश और अपमानित होकर बठक छोड दी और वह अपन स्थान पर वापस आ गए वह बराबर मराठा खेमे म शामिल होन की अपनी मूखता को कोसत रह। यथाथ म इस समय वह एक बन्दी के रूप मे थे और वह एक खतरनाक स्थिति मे होकर भी गुजर रह थे। सिंधिया और होल्कर न उस सुरक्षा का वचन दिया था और उन्ही की निष्ठा पर उसे निकल भागन का रास्ता मिल सकता था। इन दोनों सरदारो को अब बडी चिन्ता थी वे गुप्त तरीके से मिले और उन्होंने आपस म विचार विमश किया, 'हम जाट को अपना वचन देकर यहा लाये हैं भाऊ की नीयत बहुत खराब है। बलवत राव और भाऊ न गुप्त रूप से राजा सूरजमल को गिरफ्तार करन की योजना बनाई ह उसे कैद म डालकर वे उसके खेमे को लूटना चाहत हैं। राजा सूरजमल को अब किसी प्रकार से सुरक्षा के साथ भेज देना चाहिए ताकि निष्ठाहीनता के आरोप स हम मुक्त रह सकें। इस काम के लिए स्वामी हम जो चाहे दड दें। इस प्रकार विचार करने के उपरान्त उन्होंने जाटा के वकील रूपराम कटारी को बुलाया और उसे यह परामश दिया इस स्थान स किसी भी प्रकार आज रात्रि म भाग जाओ। भाऊ का खेमा कुछ फासल पर है उसके बिना जाने यहाँ से चुपचाप खिसक जाओ। इस प्रकार हमारे और तुम्हारे बीच म जो प्रतिज्ञायें हुई थीं उनसे हम मुक्त हो जायेंगे और इसके बाद तुम हमस एक भी शब्द न कहना।' इन शब्दो को कहने के बाद इन दोनो सरदारो ने पश्चाताप म अपने कान पकडकर खीचे और मूक रूप से यह शपथ ली कि वे अपन सम्मान के साथ कभी समझौता नहीं करेंगे तथा ऐसे अभिमानी और विश्वासघाती स्वामी के लिए फिर कभी अपन को कठिन परिस्थितियो मे नहीं फसने देंगे।

रूपराम कटारी जाट खम म वापस आ गया और उसन अपने स्वामी को पूरी स्थिति से अवगत कराया। राजा सूरजमल इस समय बडे असमजस में थे एक तरफ भाऊ था और दूसरी तरफ दुर्रानी। उसन रूपराम से कहा 'यदि भाग्य से आज रात हम भाग निकलते हैं तो हम भाऊ से शत्रुता लेनी पडेगी। यदि किस्मत

मे वह दुर्रानी को परास्त करने म सफल होता ह, तो मरा विनाश अवश्यम्भावी ह। यदि मैं यहा भविष्य के डर स बना रहता हू ता मैं बन्दी बन जाऊगा। दोनो विकल्प कठिनाइयो स भरे पडे हैं। मुझ अब क्या करना चाहिए? रूपराम न उत्तर दिया आपको यह कहावत मालूम ह—जन्मपत्री के एक बुरे नक्षत्र के सयोजन स बच निकलन का अथ ह जिन्दगी म बारह वर्षों की बढत। भाऊ और दुर्रानी दोनो समान रूप स शक्तिशाली ह और दोना समान रूप स कठोर शत्रु। किसे मालूम ह कि इन दोना म स कौन विजयी होगा? तब तक हम अपन स्थान पर साम रोक कर चुपचाप बठ रहग। आप अपन आपको भविष्य की चिन्ता स (जो अनिश्चित ह) क्या परेशान करते हैं? जो भी बाद म होगा वह होता रहेगा। हम आज रात भाग जाना चाहिए। रूपराम के ठण्डे मस्तिष्क और सुस्पष्ट दृष्टिकोण न राजा सूरजमल का माग निश्चित कर दिया क्योकि उसकी अनिश्चितता इस सकट की घडी म उसक सिर पर बहुत बडी विपत्ति ला सकती थी।

जब रात के केवल तीन घट शेष रह गय थ। जाटो न अपन तम्बू उखाडे अपना समान बाधा तथा सिधिया और होल्कर के गुप्त सहयोग स दिल्ली से २२ मील दक्षिण म स्थित निकटतम जाटबहुल स्थान बल्लभगढ की ओर प्रस्थान किया। जब सूरजमल न चार कोस का फासला तय कर लिया तो मल्हार राव न जिसकी नीति एक ही साथ खरगोश के साथ दौडन और शिकारी कुत्तो के साथ शिकार खलन की थी। अपन दीवान गगोबा तातिया को भाऊ के पास भेजकर उसे सूचित किया कि सूरजमल किसी को बताय बिना चला गया है तथा उसन अपने सैनिक उसका पीछा करन के लिए भेजे हैं और वह भी अपन सनिक उसे पकडन के लिए भेज दे। सूरजमल वल्लभगढ सुरक्षित रूप म पहुच गया जो मराठा सैनिक उसका पीछा करन क लिए गये थे कुछ बाजारो को लूटकर वापिस आ गए। भाऊ न गुस्से म अपन होठ काटते हुए सावजनिक रूप मे यह कहा भगवान न चाहा यदि दुर्रानी पराजित हो जाता है तो क्या जाट का मामला उससे भी अधिक भारी हो सकता ह। "

पानीपत और उसकी उत्तरकथा

पानीपत म मराठो की पराजय कोई आकस्मिक घटना नही थी परन्तु वह एक सुनिश्चित निष्कर्ष था। पानीपत म शस्त्र-परीक्षा के कई महीने पहले शाह उन्हें कूटनीति की लडाई म परास्त कर चुका था। गर अफगान मुस्लिम सामन्तो को अपनी ओर मिलान की बात तो दूर जसा निर्देश उस पेशवा न दिया था, भाऊ ने उस एकमात्र शक्तिशाली हिन्दू राजा को भी अपना शत्रु बना लिया जो निष्ठा के साथ उसकी सेवा करने के लिए आया था और जिसने अपन समस्त ससाधन

मराठाओं के द्वारा प्रयुक्त करने के लिए समर्पित कर दिए थे। सूरजमल को अपने साथ रखने का मूल्य भाऊ ने शायद ही समझा हो परन्तु जाट राजा से एक दिन की शत्रुता ने उसकी अक्ल ठिकाने लगा दी। राजा सूरजमल गाजी उद दीन इमाद उल मुल्क के साथ तुगलकाबाद चला आया दिल्ली में अनाज बहुत महंगा हो गया और दूसरे दिन मराठा इमाद उल मुल्क और सूरजमल से समझौता करने और उन्हें प्रसन्न करने के लिए गए। दिल्ली के इर्द गिर्द का एक बड़ा भाग निरन्तर होने वाली लूटमारों से इतना तहस नहस हो चुका था कि दुर्रानी को अपनी सेना के लिए रसद पानी के लिए रुहेलाओं के राज्य पर निर्भर होना पड़ रहा था और मराठा अपनी रसद सूरजमल के राज्य से पा रहे थे। भाऊ की मूर्खता और विश्वासघात ने उसे इस स्रोत से वंचित कर दिया था। अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी कि मराठाओं को भूखे पेट पानीपत में युद्ध करना पड़ा।

राजा सूरजमल की स्थिति इतनी विशिष्ट थी और उसका दृष्टिकोण इतना महत्त्वपूर्ण था कि दोनों पक्ष उसकी तटस्थता को भी मूल्यवान समझते थे। उसे मराठाओं के खेमे में दुबारा जाने के लिए राजी नहीं किया जा सकता था। उसने अपने भाग्य और अपने पुरोहित रूपराम कटारी की बुद्धि को अपने हाल में बच निकलने के लिए धन्यवाद दिया। जागरूक अब्दाली ने इस अवसर का लाभ उठा कर सूरजमल को अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया। वह जानता था कि उसके लिए मराठा सेना को परास्त करना अधिक सुगम है परन्तु जाट दुर्गों को जीतना आसान नहीं है तथा वह अपने शत्रुओं को निर्णायक रूप से तब तक पराजित नहीं कर सकता जब तक वह उन्हें सूरजमल के राज्य जैसे अमोघ आधार के प्रयोग से वंचित नहीं करता। उसने पहले भी अनेक बार जाट राजा को मराठाओं से अलग करने का प्रयास किया था। उसने नवाब शुजा उद्-दौला के माध्यम से जाट राजा के साथ नये सिरे से बातचीत आरम्भ की। राजा देवीदत्त अलीबेग (ज्योतिषी का) तथा अन्य शुजा-उद्-दौला की ओर से जाट राजा के पास समझौते की शर्तों पर बात करने के लिए आये। जाट राजा समझौता करने को राजी हो गया उसने शुजा-उद्-दौला और शाह द्वारा भेजे गए 'खिलत' को पहन लिया तथा शपथों का विनिमय हुआ।' इस सन्धि का व्यावहारिक प्रयोजन महाराज सूरजमल की तटस्थता को पुख्ता कराना था अफगानों की तरफ से उसकी सक्रिय सहायता प्राप्त करना नहीं। भाऊ के दुर्व्यवहार के बावजूद सूरजमल की सहानुभूति मराठाओं के साथ थी। उसने अब्दाली के साथ यह सन्धि संकट के समय के लिए कुछ व्यवस्था करने की खातिर की थी तथा इसलिए भी क्योंकि तत्कालीन भारत में जो राजनीतिक परिस्थिति पाई जाती थी उसमें किसी भी राज्य के लिए पूर्ण रूप से पृथक्ता अत्यधिक जोखिम पूर्ण थी।

सूरजमल ने पानीपत के मराठा शरणार्थियो को शरण दी

पानीपत म शानदार मराठा-सना के भयानक पराभव (१४ मई १७६१) के उपरान्त, युद्ध मे बचे हुए लाग दक्षिण की आर भागे। उनके दुर्भाग्य की इस घडी में किसानो न उनके हथियार धन और कपडे छीन लिए। निवस्त्र असहाय मराठा सनिक जब जाटो के दश म पहुचे ता उनके लिए उन्हान अपने अतिथि-सत्कार के दरवाजे खोल दिए तथा उनकी महायता के लिए उन्होंने औषधि, वस्त्र और भोजन की व्यवस्था की। यदि महाराज सूरजमल न मराठाओ द्वारा उसके साथ किए गए दुर्व्यवहार को न भुलाया होता और इस विपत्ति के समय उनके साथ मित्रता का व्यवहार न किया होता तो उनम से बहुत थाडे नमदा पार करके पेशवा को अपनी दुखपूर्ण कहानी सुना पाते और यह काम उसन अब्दाली की आसन्न शत्रुता का जोखिम उठाकर किया उसन इस काम को करने के लिए अपन जीवन एव भाग्य को बाजी पर लगा दिया वस्तुत यह काम एक पवित्र एव श्रेष्ठ भावना के आवेश म किया गया था—ऐसी भावना जिसकी प्रेरणा राजपूताना के लोगो को उसके शौर्यपूर्ण दिनो म सम्मान प्रदान कर सकती थी। समस्त मुस्लिम लेखको ने सूरजमल की उदारता की प्रशसा की है मराठा इतिहासकारो ने उसको स्वीकार किया है मथुरा मे उन्होंन जाटो के प्रदेश मे प्रवेश किया। हिन्दू धार्मिक भावना से प्रेरित होकर सूरजमल न उनकी रक्षा के लिए अपने सनिक भेजे तथा प्रतिदिन उनम भोजन और वस्त्र बाटकर हर प्रकार से उनके कष्ट का निवारण किया। जाट रानी ने जो भरतपुर मे थी भागकर आये सनिको के प्रति अत्यधिक उदारता का परिचय दिया। ३० से ४० हजार आदमियो को आठ दिन तक भोजन कराया गया ब्राह्मणो को दूध पडा और अन्य प्रकार के मिष्टान खिलाए गए। आठ दिन तक सभी का आराम के साथ आतिथ्य सत्कार किया गया। एक मुनादी की गई कि सभी नागरिक भागकर आये हुए लोगो के लिए अपनी सुविधा के अनुसार आवास और भोजन की व्यवस्था करें। किसी को किसी भी प्रकार का कष्ट न होने दें। इस प्रकार जाट राजा ने कुल दस लाख रुपय खच कर दिए। बहुत से लोगों की इस प्रकार जीवन रक्षा हो गई। शमशेर बहादुर* कुम्हेर के किले मे घायल होकर आया राजा सूरजमल न बहुत सावधानी के साथ उसकी देखभाल की परन्तु वह भाऊ के शोक मे मर गया। (सरदेसाई पानीपत प्रकरण २०५)। उसकी कठिनाई को दूर करके तथा उनके हृदयो को सन्तुष्ट करके सूरजमल ने प्रत्यक साधारण सिपाही को एक रुपया नकद, एक कपडे का टुकडा और एक सेर अनाज दिया तथा उन्हे ग्वालियर भेज दिया। (बयान हस्तलिपि २६३)

क्या सूरजमल ने नोरो शकर को लूटा था ?

सम्भवत मुनालाल के आधार पर फ्रैंकलिन ने इस मामले का पूर्णत गलत विवरण दिया है जो मिथ्यापवाद है 'यह कहा जाता है कि उस (मराठा गवनर नोरो शकर को) सूरजमल के आदेश से रास्ते मे रोक लिया गया, उसे उस धन से वचित कर दिया गया जिसे उसने गलत तरीके से कमाया था तथा उसे परेशानी और भय के माहौल मे अकबराबाद जाने दिया गया। (शाह आलम, २३) यह सुनी-सुनाई बात सत्य के बिलकुल विपरीत है जैसा हम नोरो शकर के साथ भाग कर जाते हुए एक मराठा सनिक के पत्र से विदित होता है नोरो शकर और बालाजी पलान ४ हजार सैनिकों के साथ दिल्ली से पहले ही भाग आये थे। रास्ते में उन्हे मल्हारराव होल्कर मिला उसके पास आठ या दस हजार सनिक थे। हम अब ग्वालियर मे होल्कर के साथ ठहरे थे। भरतपुर मे सूरजमल ने हमारी सुरक्षा और आराम का पूरा ध्यान रखा। हम वहा १५ या २० दिन ठहरे। उसने हमे बडा सम्मान दिया और हाथ जोडकर यह कहा मैं आपके अपने परिवार का हू आपका चाकर हू, यह राज्य आपका है और ऐसे ही अन्य शब्द। अफसोस उस जैसे लोग बहुत कम हैं। उसने ग्वालियर तक हमे पहुचाने के लिए सनिक भेजे (सरदेसाई पानीपत, पृ० १६३)। एक दूसरे पत्र मे नाना फडनवीस ने लिखा 'सूरजमल के आचरण से पेशवा के हृदय को बहुत सान्त्वना मिली' (उपरोक्त) जाट शासक की स्मृति पर लगाये गये इस अन्यायपूर्ण कलक को धो डालने के लिए इन तथ्यों के उल्लेख से अधिक किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नही है। मराठाओ के इस सवसम्मत दृढकथन की उपस्थिति मे फ्रैंकलिन का विश्वास करना ऐतिहासिक साक्ष्य के नियमो के प्रतिकूल आचरण करना है।

पानीपत मे विजय प्राप्त करने के उपरान्त अहमदशाह ने विजयोल्लास के साथ दिल्ली मे प्रवेश किया तथा उसने सूरजमल के विरुद्ध अभियान करने के सम्बन्ध मे विचार किया क्योंकि उसने मराठाओं को शरण दी थी। अब्दाली के क्रोध को ठडा करने के लिए जाट राजा ने नागरमल को उसके पास भेजा तथा उसकी अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा। सूरजमल को अच्छी तरह मालूम था कि युद्ध से थके हुए अफगान भारत मे दूसरी ग्रीष्म ऋतु व्यतीत करने के लिए तैयार नही होंगे। अत वह शाति को प्राप्त करने के लिए बहुत अधिक त्याग करने को तयार नही था। बातचीत मार्च १७६१ से मई १७६१ तक लम्बी खिंची। परन्तु इस बीच पानीपत के विजता की दिल्ली मे उपस्थिति की उपेक्षा करके वह साम्राज्य की दूसरी राजधानी आगरा को मुसलमानों से छीनने के प्रयास मे लगा रहा। बीस दिन के घेरे के उपरान्त नगर पर अधिकार कर लिया गया। सूरजमल ने नगर की लूट से ५० लाख रुपया प्राप्त किया (वेंडेल हस्तलिपि,

४६ ४७)। दिल्ली स शाह के प्रस्थान क पाच दिन पूव समाचार प्राप्त हुआ कि सूरजमल । अकबराबाद के किलेदार को किला खाली करन पर विवश कर दिया है और किले म प्रवश पा चुका है। २२ शावाल, ११७४—१६ मई १७६१, वाका, १८५)। शाह की सन्तुष्टि के लिए उसन उसे एक लाख रुपया दिया तथा पांच लाख रुपया बाद मे देने का वायदा किया, जो कभी नही दिए गए। १७५७ मे सूरजमल न जो पाच लाख रुपया देने का वायदा किया था, उसका वादा चुपचाप छोड दिया गया। वर्षा ऋतु आ पहुची थी तथा पृष्ठभाग म सिखो न अपना सिर उठाना आरम्भ कर दिया था, शाह हठी जाट से इतना भर पाकर प्रसन्न था। १६ शावाल (२१ मई १७६१) को वह शालीमार बाग (दिल्ली क बाहर) स अपन देश के लिए रवाना हुआ अब सूरजमल आक्रमण की अपनी महत्वाकाक्षी योजनाओ को दण्ड की सभावना रहित वातावरण म कार्यान्वित कर सकता था।

सदभ

१ बयाना-ओ-वाका के लेखक अब्दुल करीम कश्मीरी न इसकी पुष्टि की है।

२ तारीख-ए मुज्जफरी (हस्तलिपि, प० १८०) म यह तिथि ६ जिहिजा ११७३ हि०-बुधवार २३ जुलाई बताई गई है वाका के अनुसार यह तिथि १० जिहिजा है (पृ० १७८)

३ सूरजमल यद्यपि आवश्यकतावश एक स्वाभाविक विद्रोही था तथापि अपने समय के अय वास्तविक रूप से स्वतत्र शासको की भाति अपन आपको मुगल सम्राट की प्रजा मानता था।

४ ये रोचक एव पूणत सही विवरण "भाओ साहिब ची बखर (मराठा पृ०पृ० ११४—१२१) म से लिये गए हैं उपरोक्त चित्रण उसका स्वतत्र अनुवाद है। विद्वान मराठा इतिहासकार सरदेसाई न काशीराव के आधार पर जाटो के अपसरण के चार कारण बताए हैं—(i) मराठा परिवारो को ग्वालियर नही भेजा गया (ii) मीर शिहाबुद्दीन (यानी गाजी उद्-दीन) को वजीर का पद नही दिया गया, (iii) दरबार क कक्ष म चादी की छतगीरी जो हटा दी गई तथा (iv) दिल्ली का प्रबन्ध उन्हे नही दिया गया। (पानीपत प्रकरण, पृ० १६६)। पहला कारण निर्विवाद रूप से सही है। दूसरे कारण का उल्लेख स्पष्ट रूप से केवल मराठा इतिहासो मे है परन्तु फारसी के इतिहासों मे नही है उनम कुछ विवरण अवश्य ऐसे हैं जिनसे इसकी पुष्टि होती है। हम इसका उल्लेख आगे करेंगे। जहा तक तीसरे कारण का सम्बन्ध है सियार' के लेखक ने लिखा है 'जाट राजा को जिस बात से सबसे अधिक कष्ट था वह यह थी—मराठाओं

ने शाही दरबार की छतगीरी को जो चांदी की थी और जिसे सुरुचिपूर्ण तरीके से लगाया गया था उसे उतारकर टकसाल म भेज दिया था तथा उन वस्तुओ के प्रति बिना कोई आदर दिखाये जिन्हे लोग पवित्र मानत है उन्होंने अपने गन्दे हाथ उन सोने और चादी के बतनो पर भी लगाए थे जिन्हें सन्त निजाम-उद्दीन के पवित्र चरणो को समर्पित कर दिया गया था उन्होंने मौहम्मद शाह के मकबरे को भी नही बख्शा था, जहा म उन्होंने सोने के धूप-बत्तीदान झाड़ फन्नूस, लैम्प तथा बतनो को उठाकर टकसाल भेज दिया।" (सियार III पृ० ३८५ ३८६)। अन्तिम कारण के सम्बन्ध म सरदेसाई न किसी प्रामाणिक अधिकारी का हवाला नही दिया है तथा भाऊ के विश्वासघात पर मौन साध लिया है, जिसका फारसी एव मराठा इतिहासकारो ने उल्लेख किया है। सियार म लिखा है कि भाऊ ने सूरजमल से २ करोड रुपये मागे थे तथा उस पर निगरानी रखनी आरम्भ कर दी थी तथा जाट राजा मल्हार राव की सहायता से मुक्ति पा सका था।

५ इस तिथि के सम्बन्ध में अनिश्चितता है। वह सफर १४ और रवी I १५, ११७४ हि० यानी सितम्बर २५ अक्तूबर २५ १७६० के बीच म है।

६ इमाद, बयाना-ओ-वाका (हस्तलिपि) पृ० २६३

७ वह पेशवा बाजी राव I का एक मुस्लिम रखल से पुत्र था, वह इस्लाम को मानता था। इमाद के लेखक ने बताया है कि सूरजमल ने उसका कब्र पर एक मस्जिद और घर बनवाया था (फारसी पाठ पृ० २०)

८ शालीमार दिल्ली स ६ मील उत्तर-पश्चिम म बादली के निकट है।

आठवाँ अध्याय

सूरजमल का शासन

सूरजमल की हरियाणा विजय

पानीपत के युद्ध के बाद, देश म कुछ समय के लिए अपेक्षाकृत रूप से शान्ति का वातावरण बना रहा यह शान्ति उसी प्रकार की थी जिसकी इच्छा लोग थकने के उपरान्त करते हैं, उत्तर भारत कम-से-कम कुछ समय के लिए अफगानो और मराठाओ के बीच की रण-स्थली अब नही रह गया था। द्रुतगति से उदित होने वाला सिख राज्य अब्दाली आक्रमण के विरुद्ध तरंग रोध की भूमिका अदा कर रहा था और दक्षिण म हैदर अली और निजाम मराठाओ को फसाये हुए थे। साम्राज्य मे इस समय यदि अराजकता नही थी तो वह स्थिति अवश्य थी जो एक सम्प्रभु के निधन और दूसरे के सिंहासनारोहण क बीच पाई जाती है। दिल्ली मे नजीबुद्दौला एक रिक्त सिंहासन और विधवा राजधानी की चौकीदारी कर रहा था। सम्राट शाह आलम द्वितीय अपने ही राज्य मे निर्वासित का जीवन व्यतीत कर रहा था वह शुजाउद्दौला का आश्रित था, अपने जीवन-यापन के लिए वह उससे पेंशन पा रहा था। अवध के शासक की निगाह बिहार के सूबे पर थी और वह बगाल के नवाब मीर कासिम के साथ जो अंग्रेज़ी शासन के जुए को उतार फेंकने की तयारी कर रहा था षडयन्त्र रचने म व्यस्त था। विजयी मुस्लिम गठबन्धन शुजाउद्दौला और अफगान सरदारो की कभी शात न होने वाली शत्रुता के कारण टूटने लगा था। पानीपत मे केवल मराठाओ के उच्छ्रखल स्वप्न को तोडा था परन्तु उससे इस्लाम का स्थायी शान्ति की प्राप्ति नही हुई थी। जसे ही मराठाओ का पराभव हुआ जाटसत्ता का प्रवेश प्रारम्भ हो गया उसने विजेता को चुनौती दी और वह थकान से चकनाचूर होकर सघर्ष स अलग हो गया तथा सिंध के पार चला गया था। दृढ जाट साहस ने नीचे लेटे हुए हिन्दू मस्तिष्क म विश्वास का सचार किया और इस्लाम को पुन प्रतिरक्षात्मक स्थिति पर आने के लिए बाध्य

होना पडा।

महाराजा सूरजमल अपने शत्रुओ के विश्राम के इन चन्द क्षणो को अपने दो उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए जिन्हे वह लम्बे समय से सजोए हुए था प्रयोग में लाना चाहता था—प्रथम एक ठोस जाट—परिसघ की स्थापना जिसका विस्तार रावी से यमुना तक हो और जो अब्दाली और रुहेलाओं के प्रदेशो के बीच मे स्थित हो द्वितीय नजीबउद्दौला का दिल्ली से निष्कासन तथा अपने आश्रित भूतपूर्व वजीर गाजीउद्दीन को उसकी पुरानी स्थिति एव शक्ति वापस दिलाना ताकि उसके माध्यम से वह साम्राज्य की नीतियो को नियन्त्रित कर सके। साथ ही, उसने दिल्ली पर पहले आक्रमण न करने का निश्चय किया परन्तु उसने अपने सुविचारित अभियान के दौरान उसे आच्छादित अवश्य किया। सिख राज्य और उसके अपने राज्य के बीच हरियाणा का क्षेत्र था जिस पर शक्तिशाली मुस्लिम जागीरदारो का प्रभुत्व था यह क्षेत्र एक खतरनाक रिक्तता को व्यक्त करता था। दक्षिण और पश्चिम मे राजपूतो की प्रधानता उसकी शक्ति को मर्यादित करती थी और पूर्व मे रुहेला शक्ति।[1] अत उसने अपने राज्य के विस्तार के लिए दिल्ली के इर्द गिर्द के जिलों और इस क्षेत्र को चुना जिसमे मुख्यत जाटो की बहुलता थी।

यह कदम अनेक कारणो से उचित ठहराया जा सकता था। यमुना तट के जाट पाच नदियो के जाटो की ओर मूलवशी नैसर्गिक वृत्ति के द्वारा आकर्षित थे। एक शक्तिशाली धारा की दो शाखाए जो सिन्ध मे पुरातन काल के अन्धकार मे एक दूसरे से अलग हो गई थी अब वे पुन रक्त सम्बन्धो की समानता और साथ ही मे समान राजनीतिक एव धार्मिक हितो से प्रेरित होकर एक दूसरे से मिल रही थी। दिल्ली मे रुहेला प्रभुत्व के शक्तिशाली होने मे जो खतरा निहित था जाट शासक उससे भलीभाति अवगत था उसे यह भी मालूम था कि उसके फलस्वरूप उसके उत्तर मे स्थित मेवात मे दूसरे रुहेलखड का उदय हो जाएगा और जो उसके अपने प्रान्तीय सीमान्तो और सिख प्रदेश के बीच एक खतरनाक दरार पैदा करेगा। इस क्षेत्र पर आधिपत्य स्थापित होने के बाद जाट और सिख विश्वास के साथ अब्दाली और रुहेलाओ के विरुद्ध युद्ध कर सकेंगे उस स्थिति मे दोनो ही की पीठ एक दूसरे से सटी रहेगी। सूरजमल ने अपने ज्येष्ठ पुत्र जवाहर सिंह को हरियाणा की विजय के लिए भेजा तथा एक दूसरी सेना अपने सबसे छोटे पुत्र नाहरसिंह के नेतृत्व मे दो आब मे अपनी सत्ता को स्थापित करने तथा पूर्व के रुहेला सरदारों की गतिविधियो पर निगरानी रखने के लिए भेजी। जवाहरसिंह ने फरुखनगर पर आक्रमण किया जिस पर उस समय शक्तिशाली बलूच मस्सर मुसावी खां का आधिपत्य था। परन्तु जब वह उसे जीतने मे सफल न हो सका तो सूरजमल स्वय अपने [illegible] और बड़े तोपखाने के साथ आया और उसने वहां घेरा डाल दिया। दो माह गुजर गए और मुसावी खां ने परेशान होकर इस शर्त पर समर्पण

करना स्वीकार कर लिया कि "सूरजमल गंगाजल की शपथ खायेगा कि वह उसके वहां से चलने को अवरोधित नहीं करेगा।" परन्तु इस अवसर पर जाट राजा ने गंगा की पवित्रता का उसी प्रकार से बेईमानी के साथ प्रयोग किया जैसा कुछ मुस्लिम शासकों ने कुरान के सन्दर्भ में किया था।

बलोच सरदार को बन्दी बनाकर भरतपुर भेज दिया गया। कुछ समय तक पाप इसलिए फलता फूलता रहा ताकि बदले को अधिक भयानक और हृदय दहलाने वाला बनाने के लिए मार्ग प्रशस्त हो सके। रेवाड़ी, गढ़ी हरसारू और रोहतक सूरजमल के अधिकार में पहले ही आ चुके थे।[1] अब उसने दिल्ली से १२ कोस दक्षिण में स्थित बहादुरगढ़ के विरुद्ध अपने हथियार उठाये, यह स्थान एक दूसरे शक्तिशाली बलोच सरदार बहादुर खान के अधिकार में था। अपने संकट के समय में बलोच सरदार ने नजीबुद्दौला से सहायता की याचना की परन्तु उसने अब्दाली के आगमन के पूर्व सूरजमल से लड़ाई मोल लेना अनुपयुक्त समझा।

सूरजमल की मृत्यु

परन्तु सूरजमल और नजीबुउद्दौला के बीच टकराव अवश्यम्भावी था। इसी समय सूरजमल के सबसे छोटे पुत्र नाहरसिंह बलराम तथा अन्य प्रख्यात सेनापतियों के नेतृत्व में एक दूसरी जाट डिवीजन दो-आब में युद्ध कर रही थी और उसने मुगल शासन से अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों को छीन लिया। अपनी सफलता की सम्भावनाओं को अधिक जानकर सूरजमल नजीबुद्दौला के साथ टक्कर लेने के लिए लालायित था जबकि नजीबुद्दौला की नीति यह थी कि वह मामले को उस समय तक टाले जब तक अब्दाली उसकी सहायता को न आ जाये। रुहेला सरदार पाखंड करने लगा, उसने विनम्रता का ढोंग रचा परन्तु चतुर जाट इस अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहता था, उसने निश्चय किया कि वह अपने शत्रु पर उसकी दुर्बलता के क्षण में ही प्रहार करेगा। नजीबुद्दौला के सावधानी पूर्ण आचरण से जाट राजा ने यह अनुमान लगाया कि वह युद्ध से भयभीत है अतः वह अधिक साहसी हो गया और उसने मांग की कि गिर्द अथवा सरकिट (राजधानी के इर्द गिर्द के जिलों) की उसे गवर्नरी दे दी जाय (सियार, IV पृ० ३०)।

नजीब उद्-दौला को इस मांग का अर्थ मालूम था यह तो एक वैसी ही मांग थी कि शत्रु को किसी बाहरी चौकी को समर्पित कर दी जाय। यदि राजधानी के चारों ओर की पेशी पर सूरजमल का आधिपत्य स्थापित हो गया तो दिल्ली उसके लिए और तैमूर के वंशजों के लिए एक विशाल बन्दीगृह बन जाएगा।[2]

अफगान सरदार इस समय मामले को इस सीमा तक बढ़ने के लिए तैयार नहीं था कि बात ही टूट जाए। अतः उसने याकूब अली खां (अहमद शाह अब्दाली के

वजीर शाहवली खां के भाई) को दूत बनाकर उसके पास भेजा ताकि विनम्र शब्दों के द्वारा मामले को शान्त किया जा सके और अशान्ति तथा युद्ध के बीजो को नष्ट किया जा सके।' वह अपने साथ उपहार के रूप में दो सुन्दर मुल्तानी छींट के टुकड़े भी ले गया था जो पीले और गुलाबी रंगों में रंगी हुई थी। यदि हम 'सियार' के लेखक का विश्वास करें तो शान्ति के सन्देश की अपेक्षा उपहार अपेक्षाकृत अधिक स्वीकारणीय सिद्ध हुआ।[१] याकूब अली १० वी जामादा II को जाट के पास गया था, परन्तु चार दिन की अनुपस्थिति के उपरान्त असफल लौट आया (१७ जमाद II ११७७ हि०—२३ दिसम्बर १७६३) (वाका पृ० १६६)

जाट राजा की अन्यायपूर्ण मांगों से विवश होकर नजीबुद्दौला को शत्रुता के लिए तैयार होना पड़ा, फलत उसने दस हजार घुड़सवार और पैदल सेना के साथ जिसमें उसके दो पुत्र अफजल खां, जबीता खां तथा महमूद खां वगैरा जैसे कुछ अन्य प्रसिद्ध रुहेला सरदार शामिल थे, जमुना नदी को घमंडी हिन्दू के साथ लड़ाई लड़ने के लिए पार किया। सूरजमल कुछ समय पूर्व विजित प्रदेशों की देखभाल के लिए अपने पुत्र जवाहरसिंह को फर्रुखनगर में छोड़कर यमुना पहले ही पार कर चुका था। अब दोनों सेनायें हिण्डन के किनारे पर (यमुना की एक सहायक नदी दिल्ली से ७ कोस पूर्व) एक दूसरे के सामने खड़ी थी। जाट सेना ने हिण्डन के पूर्वी तट पर अपनी स्थिति सम्भाल ली और अपनी तोपों को खड़ा किया। दिन के आरम्भ में अनेक छोटी मोटी झड़पें हुई जिनमें जाटों का पलड़ा भारी रहा। दिन के अन्त में सूरजमल ने हिण्डन पार की तथा मुस्लिम पंक्तियों पर आक्रमण किया। जो लड़ाई हुई उसमें एक हजार सैनिक मारे गए। युद्ध जब अपनी चरम-सीमा पर था सूरजमल जाट तीस घुड़सवारों के साथ मुगलों और बलूचों के बीच में कूद पड़ा और वह मारा गया। रविवार १६ जामादा II ११००—दिसम्बर २५ १७६३ वाका पृ० १६६)

जाट सेना का अनुशासन इतना प्रशंसनीय था कि यद्यपि सैनिकों को सूरजमल की मृत्यु का पता लग चुका था तथापि एक भी सैनिक अपने स्थान से नहीं हिला। वे अपनी अपनी स्थिति पर बस ही डटे रहे जैसे कुछ हुआ ही नहीं था जबकि मुस्लिम सेना टूट गई और उसने अपने खेमे में जाकर शरण ली। उसके उपरान्त जाट सेना ने विजेता के आधिपत्य के साथ रण क्षेत्र छोड़ दिया (सियार IV ३२)। यह एक ऐसी घटना थी जिसका शत्रु के लिए विश्वास करना भी कठिन था। उसका शव उनके हाथ में नहीं लगा। उस समय की मृत्यु की पुष्टि भी नहीं की गई। नजीबखां अपनी सेना की सुरक्षा के लिए रात भर वहां खड़ा रहा। आधी रात्रि को जाट सेना ने हिण्डन के दूसरे तट से पीछे हटना आरम्भ किया। जब वहां एक भी जाट सैनिक नहीं रहा तभी सूरजमल के निधन के समाचार पर विश्वास लाया जा सका।[१] नजीब खां राजधानी को लौट गया (बयान हस्तलिखित पृ ३ ३)।

जाट जाति की आखें और उसकी चमकती हुई रोशनी, पिछले १५ वर्षों म हिन्दुस्तान का सबसे अधिक दुर्जेय राजा" सूरजमल इस प्रकार रगमच स अपन काम को अधूरा छोड कर चला गया। उसका व्यक्तित्व बुलन्द था और उसकी प्रतिभा अनुभवातीत और जिसको १८वी शताब्दी के प्रत्यक इतिहासकार न अपनी श्रद्धाजलि अर्पित की है। पादर वेन्डल ने लिखा है वह एक शब्द म बुद्धिमान, नीतिकुशल, बहादुर और महान् था वह अपन जन्म स ऊपर था, तथा विदेशी जहां उसकी प्रशसा करत थे, वे उसस डरत भी थे।

परिशिष्ट

सूरजमल की मृत्यु का ब्योरा

अभिलेख एव परम्परा सूरजमल की मृत्यु के सम्बन्ध म एक मत नहीं हैं। फादर वेन्डेल न जिन्होंने घटना के पाच वर्ष के भीतर लिखा है, यह कहत हैं 'उन्होंने सूरजमल को यह समाचार प्राप्त हुआ कि शत्रु बडी सख्या म नाहरसिंह (उसका पुत्र और भावी उत्तराधिकारी) के ऊपर जो उस अभियान म था आक्रमण करने वाला है। यह सुनकर वह कुछ हजार घुडसवारो के साथ उसकी सहायता के लिए गया। दुर्भाग्य स हिण्डन नदी द्वारा छोडे गए एक नाले को पार करत समय, रुहेला पैदल सैना ने जो पहले से वहा घात लगाये बठी थी—उसे दोनों तरफ स घेर लिया। उन्होने जाटों पर जो अभी तक अव्यवस्थित थ—अपनी बन्दूकों स भयकर गोली-बारी की उन्होंने सूरजमल को उसके अनुचरो के साथ नीचे गिरा दिया, जो वहा मदान म या तो मृत और घायल की स्थिति म नीचे पड थे। (कैंथ हुक्मसिंह, ५०)। सूरजमल की मृत्यु २५ दिसम्बर १७६३ को हुई और उसके दो दिन बाद यानी मगलवार को उसका उल्लेख वाका मे कर दिया गया। पूना पाण्ड में उद्धृत लोगों के अतिरिक्त उसमे निम्नलिखित ब्योरा दिया हुआ है, सय्यद मुहम्मद खां बलोच न जाट के शरीर स उसका सिर और एक हाथ काट लिया तथा उन्हें दो दिन तक अपन पास रखा। उसके पश्चात् उन्हे नवाब नजीब उद्-दौला की उपस्थिति म ले जाया गया। तब जाकर उसे यह विश्वास हुआ कि सूरजमल की मृत्यु हो चुकी है।' (उपरोक्त) सियार म घटना का निम्न विवरण है वह रणक्षेत्र की जाच करन के लिए घोडे पर ऊपर स नीचे और नीचे स ऊपर आ रहा था कुछ समय बाद वह विचार करने के लिए रुक गया। जब वह इस प्रकार खडा हुआ था, अफजल खां के कुछ सनिक उधर स निकले जो सूरजमल के हिरावल

दस्त के कमाण्डर म सीराम जाट स परास्त होकर भाग रहे थे। जो थोडे से लाग सूरजमल के साथ थ उन्होंने उसस कहा कि शत्रु स मित्रो के साथ शत्रु के इतना निकट खडे रहना उचित नही है, और कलीमुल्लाह और मिर्जा सफुल्लाह ने आदर पूर्वक उनसे वापस लौटने का आग्रह किया। उसने उन बातो पर जो उन्होंने कही थी, कोई ध्यान नही दिया वह केवल शत्रु की गतिविधियो पर ही विचार करत रहे। वे दोना अपना आग्रह दुहराते रहे और उसन कोई उत्तर नही दिया परन्तु उसने दूसरा घोडा मगवाया और उस पर चढ़कर उसी स्थान पर खडा हो गया। जब वह घोडे पर चढ रहा था ऐसा हुआ कि सैयद मोहम्मद खा बलोच जो सयदा के नाम स अधिक जाना जाता था ४० या ५० सनिको के साथ वहा स भागता हुआ निकला उस समय उनम स एक न सूरजमल को पीछे मुडकर उसकी आकृति को याद किया और सयदा के पास आकर उसस चिल्लाकर कहा ठाकुर साहब (सूरजमल) वहा खडा है। सयदो ने यह सुनकर पीछे मुडा और उसने सूरजमल पर आक्रमण कर दिया और उसके आदमियो म स एक न जाट राजा पर अपन भाले स जोरदार प्रहार किया और उसकी एक बाह काट दी जो सयोग स अशक्त और उलची हुई थी। जब बाह नीचे गिर रही थी तो दो अन्य आदमी एक साथ उसके ऊपर झपटे और उन्होने उस मिर्जा सफुल्लाह तथा राजा अमर सिंह को मार डाला जो शेप बचे वे अपने ही लोगो की तरफ भागे। परन्तु सयदो के एक सनिक ने कटी हुई बाह को उठाकर अपने भाले पर टाग लिया और वह उसे नजीब-उद-दौला के पास ले गया। नजीब उद-दौला को यह विश्वास नहीं हुआ कि वह बाह सूरजमल की है और वह पूरे दो दिन तक उस पर अविश्वास करता रहा। परन्तु जाट सेना म यह बात सन्देह स परे थी, जो पूरी दुर्जेय मुखाकृति के साथ पीछे हट गई थी। दूसरे दिन (?) जब याकूब खां ने नजीब उद-दौला स भेट की और उसन वह बाह उसे दिखाई तो उसन उसे न केवल उसकी अशक्त प्रकटन स बल्कि उसकी आस्तीन स जो उसके ऊपर थी उसे पहचान लिया यह आस्तीन मुल्तान के उसी कपडे की थी जिसे सूरजमल ने उसकी उपस्थिति म पहना था। इसके पश्चात् उसकी मृत्यु के समाचार की पुष्टि हो गई और उसे सावजनिक रूप स मृत घोषित कर दिया गया। (पृ० ३२)।

कर्नल टाड ने अपने राजस्थान म पृष्ठ १२२३ पर इस सम्बन्ध म एक पारम्परिक किम्वदन्ती का उल्लेख किया है जिस पर ग्राउजन कुछ सुधार किया है। किम्वदन्ती यह है कि सूरजमल को नजीब खा के सनिको न उस समय घर लिया जब वह शाहदरा के निकट शाही शिकारगाह म निषधाज्ञा का उल्लघन करके शिकार खेल रहा था। यह किम्वदन्ती मध्य युग के शौयगाथाओ स परिपूर्ण गीतों के लिए अधिक उपयुक्त है गम्भीर एव सच्चे इतिहास के लिए नही।

सत्य के निकट पहुचने के लिए यह उचित होगा कि उपरोक्त सभी विवरणो

की जाच की जाए। इस सम्बन्ध म वाका क उल्लेख से अधिक कोई दूसरा अभिलेख अधिक समकालीन नही हो सकता परन्तु उसका कुछ विवरण सामान्य बुद्धि पर आधारित आलोचना की कसौटी पर खरा नही उतरता सयद मोहम्मद बलोच अपनी ट्रॉफी—सूरजमल का सिर और हाथ—का मूल्य अच्छी तरह जानता होगा, अत यह विश्वास नही किया जा सकता कि उसन इसे निरथक रूप स दो दिन तक अपन पास रखा होगा। उसन उसका सिर नही काटा जिसस इस सन्देह का पूर्ण रूप स निवारण हो जाता, उसने केवल एक हाथ काटा जिसकी पहचान सम्भवत दो दिन बाद याकूब अली खा न की।

क्या जसा फादर वेन्डेल न कहा है सूरजमल घात टुकडी के जाल म फस गया था? यह बहुत सम्भव है कि नजीब खा के पीछे हटने वाले सनिको न सूरजमल के टोह लगाने वाले दल का अप्रत्याशित उपस्थिति को घात मान लिया हो। परन्तु 'फादर वेन्डेल' और 'सियार' क लेखक के विवरण बयान और वाका-ए शाह आलम सानी के विवरणो म मल नही खाते। बयान म लिखा है कि सूरजमल ने ६ हजार सनिको के साथ आक्रमण किया, और वाका म लिखा है कि दोनो तरफ स एक हजार आदमी मारे गए और सूरजमल की मृत्यु शत्रु के मध्य म उसके अविचारी आक्रमण के कारण हुई। 'सियार' क विवरण की अपेक्षा यह विवरण अधिक विश्वसनीय प्रतीत होता है और इसलिए न्यायपूर्ण ढग से उसे ठुकराया नही जा सकता। मूल-पाठ का विवरण सत्य के सबसे अधिक समीप प्रतीत होता है।

सदर्भ

१ पूर्व म सूरजमल के राज्य की प्रादेशिक सीमाए रुहेलाओ के प्रदेश, कोल (अलीगढ) क जिले को स्पर्श करती थी। जलेसर और एटा उसके राज्य के भाग थे। जमुना के इस ओर दिल्ली के दरवाजे से लेकर चम्बल तक उसके शासन के अतिरिक्त कोई दूसरा शासन नहीं था, तथा गगा की तरफ भी स्थिति ऐसी ही थी। आगरा के किले को जीतन के उपरान्त उस दक्षिण म अपने राज्य का विस्तार करन के लिए और कुछ करना शेष नही रह गया था। उसने तब दिल्ली के पश्चिम की ओर निगाह डाली। उसन यह भी सोचा कि वह उस देश म (हरियाणा) अपने पुत्र जवाहर सिंह का राज्य बनायेगा।" (वेन्डेल पृ० ४७ ४८)

२ वेन्डल पृ० ४६ और वाका पृ० ११८ म उल्लेख है कि नजीब खा मुसावी खा की सहायता के लिए आ रहा था। परन्तु १९वीं जमाद I ११७७ हि० (नवम्बर २५, १७६३ को सादर जग म यह समाचार प्राप्त हुआ कि सूरजमल जाट न

धोखे स मुसावी खा बलोच को गिरफ्तार कर लिया है तथा फर्रुखनगर पर वहा की गरजिन से उसे खाली कराके आधिपत्य स्थापित कर लिया है। इसका अथ यह हुआ कि मुसावी खा दुग के विजित होने के पूव ही बन्दी बना लिया गया था।

३ ये सभी स्थान इस परिवार के अधिकार म उस समय तक रहे जब तक उन्हे मिर्जा नजफ खान ने सम्राट शाह आलम द्वितीय के लिए राजा नवल सिंह जाट को परास्त करके दुबारा जीत नहीं लिया। यह कहा जाता है कि गढी हरसारू पर आक्रमण के समय सूरजमल का हाथी दुग के एक लकडी के दरवाजे को तोडने म असफल रहा उसने थककर उसकी ओर स पीठ मोड ली। जब जाट नायक सरदार सीताराम न यह देखा तो उसने आगे बढकर अपनी कुल्हाडी से बडी कुशलता के साथ इस दरवाजे को काट डाला। उसके उत्तराधिकारी जो अभी भी कोटमान क ध्वस्त किले म रह रहे हैं उसकी शक्ति से सम्बन्धित अनक प्रसगो म से इस एक प्रसग का स्मरण करत हैं।

४ बयान ओ वाका के लखक अब्दुल करीम कश्मीरी ने लिखा है 'मुसावी खा तथा अन्य बलोच सरदारों को गिरफ्तार करने और उन्हे डीग भेजने क बाद उसने नजीबु उद्दौला के पास सन्देश भेजा कि वह राजधानी से चला जाय और मुख्य दो आब उसे दे दे। यद्यपि आवश्यकता से बाध्य होकर नजीबुद्दौल उसे सिकन्दरा तथा अन्य परगने देने को तयार हो गया लेकिन इसस राजा सूरजमल सन्तुष्ट नही हुआ।
(बयान हस्तलिपि पृ० ३०२)

५ सियार के अनुसार अपने आगमन के ठीक दिन सहसा याकूब अली को बर्खास्त कर दिया गया। 'यह कहा गया था कि वह सिर्फ सुलह के लिए आया है तो अच्छा होता वह न आता। (सियार ४ ३१) इसमे कोई सत्य नही है क्योकि यह वाका की निश्चित तथा प्रामाणिक प्रवृष्टि स सिद्ध होती है। फिर भी इसमे कोई सदेह नही है कि नजीबुद्दौला की तरफ सूरजमल का व्यवहार सख्त तथा अटल था और उसकी मांग अधिक थीं (फादर वेंडल का सक्षेप मे कथन है— लेकिन सूरजमल ने युद्ध माग लिया' (आरमन ४६)

६ नजीब खां की सावधानी सम्भवत देहात म प्रचलित इस लोकोक्ति के द्वारा उचित ठहरती ह 'जाट को मरा हुआ तब तक न मानो जब तक उसकी तरहवीं न हो जाए।

नवां अध्याय

सूरजमल की विरासत

राजा सूरजमल और उनका परिवार

अपनी मृत्यु के समय सूरजमल की आयु ५५ वर्ष की थी। बदन सिंह के पूर्व और बाद में राज्य का प्रबन्ध लगभग २० वर्ष तक उन्हीं के द्वारा सम्पादित होता रहा। अपनी चार पत्नियों से उनके पांच पुत्र थे—जवाहर सिंह, रतन सिंह, नवल सिंह, रणजीत सिंह और नाहर सिंह। पहले दो पुत्र एक उस महिला से हुए थे जो राजपूतानी कही जाती थी, सम्भवत वह गोरुआ जाति की थी। तीसरा पुत्र एक मालिनी से पैदा हुआ था और अन्तिम दो का जन्म उसी के जाति की महिलाओं से हुआ था।[1] परन्तु वृद्ध राजा का सर्वाधिक प्रेम उस पत्नी के प्रति था जिससे उसके कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई और जो रानी किशोरी के नाम से अथवा रानी हंसिया के नाम से प्रख्यात थी। जवाहर अपने को इस महिला के द्वारा गोद लिए जाने के कारण अपने को भाग्यशाली समझ सकता था क्योंकि उसके प्रभाव और स्नेह के कारण इस उद्दण्ड युवक की अपने पिता के क्रोध एवं प्रभाव से रक्षा होती रही। मुगल दरबार में उस और उसके भाई को ऊंचा मन्सब प्राप्त हुआ। परन्तु रतनसिंह को अपनी युवावस्था के प्रारम्भ में ही कुछ व्यसनों की लत पड़ गई थी, फलत बड़े होने पर वह एक एयाश का जीवन व्यतीत करने लगा, शक्ति अथवा सैनिक-ख्याति उपार्जित करने की उसमें कोई चाह नहीं थी। नवल सिंह और रणजीत सिंह औसत दर्जे की क्षमताओं वाले युवक थे और उनके पिता के जीवन-काल में उनके विषय में कभी कुछ अधिक नहीं सुना गया। सबसे छोटा पुत्र नाहर सिंह जिसे सूरजमल अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था और जिसे जाट सरदार ने राज-काज में प्रशिक्षित करना भी आरम्भ कर दिया था, एक सुस्त और सकीर्ण दृष्टिकोण तथा दुर्बल बुद्धि का युवक था। उसका नाम था नाहर यानी शेर परन्तु उसका चरित्र मेमने जैसा था और वह अपने बड़े भाई से स्वभाव में

आशाएं बुलन्द हो गई थी वह नौकरशाही को तोड़ना और आक्रमणपूर्ण नीति का प्रदर्शन भी करने लगा था। सूरजमल ने अनेक अभियानों में उसके सैनिक गुणों का प्रयुक्त किया था जिनमें उसने अत्यधिक ख्याति अर्जित की थी। उसने अपने पुत्र को डीग का कमाण्डेन्ट इस आशा के साथ नियुक्त किया था कि उससे वह सन्तुष्ट हो जाएगा परन्तु जो हुआ वह इस आशा के विपरीत था। उसके इर्द गिर्द एक ऐसी मंडली एकत्रित हो गई जो उसके पिता के दरबार के प्रभावशाली सरदार बलराम, मोहन राम आदि के विरुद्ध थी और इस मंडली के प्रभाव में आकर वह यह समझने लगा कि बलराम का गुट उसके पिता को उसके विरुद्ध भड़का रहा है। राजा सूरजमल ने ऐसे दुष्ट परामर्शदाताओं से मार्ग-दर्शन लेने के लिए अपने पुत्र को डांट लगाई और उससे कहा कि यह उसके हित में है कि वह उन्हें पदच्युत कर दे। परन्तु पिता के इन उलाहनों की उसने नाममात्र भी चिन्ता नहीं की। इससे भी बुरी बात यह थी कि उसने सशस्त्र विद्रोह की तैयारी कर दी।

जवाहरसिंह ने यह निश्चय किया कि वह डीग में एक स्वतन्त्र शासक के रूप में काम करेगा तथा अपनी इस स्थिति को वह अपने पिता के विरुद्ध आखिरी दम तक रक्षा करेगा। अपने निराशोन्मत्त सहकर्मियों की सहायता से उसने नगर पर अधिकार कर लिया तथा वह काम किए जो वास्तव में युद्ध जैसे थे। अपने काम पर लौटाने के जब सूरजमल के सभी प्रयास निष्फल हो गए तो उसके पास इसके अतिरिक्त कोई दूसरा विकल्प नहीं था कि वह स्वयं जाकर अपने पुत्र के विरुद्ध घेरा डाले। अपने पुत्र के साथ झगड़े को शीघ्रता से निपटाने के लिए उसने उसके अनुचरों की पत्नियों और बच्चों के विरुद्ध सख्ती बरतने की धमकी दी। जवाहरसिंह ने बड़ा प्रतिरोध किया। अपने पिता के प्रयत्नों के विरुद्ध डीग की रक्षामात्र से सन्तुष्ट न होकर उसने मैदान में आकर विवाद को निपटाने का निश्चय किया। उसने बाहर आकर अपने पिता की सेना पर आक्रमण किया किले की दीवाल के नीचे घमासान लड़ाई हुई। कुछ समय के बाद विद्रोही पीठ दिखाने के लिए बाध्य हो गए परन्तु उनका नेता यथावत लड़ता रहा। जवाहर उस स्थान पर कूद पड़ा जहां बहुत तीव्र संघर्ष हो रहा था वह बहुत बड़ी बहादुरी और साहस के साथ लड़ा जो किसी अच्छे कार्य के लिए किए जाने वाले युद्ध के लिए उपयुक्त होता। अन्त में घायल अवस्था में उसे नीचे गिरा दिया गया— उसके एक घाव तलवार से हुआ था एक भाले से और एक बन्दूक से। सूरजमल जो अपने पुत्र को खोने की अपेक्षा डीग को खोना अधिक पसन्द करता एकदम घटना स्थल पर उसे उन लोगों से बचाने का गया जो पिता के मना करने और चीखने पुकारने के बावजूद उसे जान से मारने पर आमादा थे। उसका जीवन बच गया, परन्तु तीन घावों के कारण उसकी दाहिनी भुजा कमजोर हो गई और बाद के जीवन में वह और अधिक अशक्त हो गई (वेन्डेल पृ० ३४ ३६)।[1]

महाराज सूरजमल के मस्तिष्क पर एक काला बादल छाया हुआ था। उनको आशंका थी कि उसके निधन के उपरान्त परिवार की फूट के कारण कहीं दूसरा गृहयुद्ध न छिड़ जाय। इसके कारण उसने अपने जीवन के अन्तिम दिन अत्यन्त दुख मे काटे। उसने बड़ी घबराहट के साथ बलराम, मोहनराम तथा अन्य शक्तिशाली सरदारो के नेतृत्व मे गठित एक मजबूत पार्टी के उदय को देखा था जो जवाहरसिंह के राज्यारोहण का विरोध करने के लिए आवश्यकता पड़ने पर हथियारो के प्रयोग के लिए भी तैयार थे। वह अपने लोगो के चरित्र से अवगत था जिसकी उसके पुत्र को कोई जानकारी नही थी और न वह उसे जानना चाहता था। जवाहर को अपने कुलीन होने का नाज था और वह अपने निकटतम भाई-बन्धुओ और सम्बन्धियो को यह जताने से कभी नही चूकता था कि वह उनसे श्रेष्ठ है तथा जन्म के आधार पर उसे उन पर शासन करने का अधिकार है। जाट के लिए इससे अधिक अपमानजनक कोई दूसरी बात नही हो सकती थी वह अपमान की ही भाति किसी भी इस प्रकार का दावा करने वाले से उसके मुह पर बिना किसी भय के यह कह सकता था तुम क्या हो जो मैं नही हू? तुम क्या बन सकते हो जो मैं नही बन सकता? इसके अतिरिक्त राजकुमार का चरित्र भी लोगो मे उसके प्रति विश्वास पैदा नही कर सकता था। वह कठोर, निर्दयी, प्रतिशोधी तथा एक सीमा तक कपटी था। एक सहानुभूतिपूर्ण पर्यवेक्षक उसे दूसरे मिहिर कुल से अधिक नही बता सका यानी ऐसा आदमी जिसे सबसे अधिक सन्तोष उस समय मिलता है जब वह किसी के विरुद्ध युद्ध कर रहा हो यानी जब वह दूसरो को दुखी कर रहा हो तथा अपनी आखो के सामने मनुष्य के खून की नदिया बहा रहा हो। (वेंडेल हस्तलिपि ३४)। उसने किसी चोट अथवा अपमान को कभी क्षमा नही किया और कभी बदला लेने मे चूका भी नही। जितने भी पुराने सरदार थे वे सब उसके शासनकाल मे अपने पदो, सम्पत्ति तथा जीवन के सम्बन्ध मे आशंकित थे। जवाहरसिंह के सिंहासनारोहण के मार्ग को सुगम बनाने के लिए अपने मन्त्रिमडल तथा रणक्षेत्र के शक्तिशाली सहयोगियो के दमन का अर्थ सूरजमल के लिए यह था कि वह अपने सम्पूर्ण जीवन के कार्य पर पानी फेर दे। अत उसने निश्चय किया कि वह अपने पुत्र को उसके जन्म सिद्ध अधिकार से वंचित रखेगा वह जाट शक्ति को नष्ट नही होने देगा हालांकि वह मौन रूप से जवाहरसिंह की दृढ निश्चितता तथा वीरता का आदर करते थे और उसे अवस्था को ही उसके पश्चात् राज्यारोहण के लिए सबसे अधिक उपयुक्त मानते थे।

परन्तु जवाहरसिंह से यह आशा करना व्यर्थ था कि वह चुपचाप बैठा रहेगा तथा खामोशी से इस अन्याय के समक्ष झुक जायगा और उत्तराधिकार से वंचित हो जायगा। अत राजा सूरजमल ने अपने वंशगत राज्य से बाहर उसके लिए एक दूसरे राज्य की स्थापना का प्रस्ताव रखा अपने पारिवारिक प्रदेश के लिए उसने

अ सुयोग्य पुत्र जवाहरसिंह को चुना। हरियाणा की विजय तथा एक अनन्य राज्य की स्थापना की योजना जहां जवाहरसिंह की प्रचुर उर्जा और सनिक प्रतिभा को रुहेलाओं और अब्दाली के बीच अपने अधीन राज्य को कायम रख सके वस्तुत इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तयार की गई थी। निस्सन्देह यह एक विवेकपूर्ण नीति थी और इस सुविचारित राज्य के लिए जो स्थान चुना गया था वह बहुत उपयुक्त था। हरियाणा मूलवंशीय दृष्टि से पहले भी और अभी भी एक जाट प्रदेश है उसने बड़ी तत्परता के साथ महाराजा सूरजमल के शासन को स्वीकार कर लिया था तथा मुस्लिम-सनिक कुलीनतंत्र के अनियंत्रित अत्याचारों से छुटकारा मानकर उसका स्वागत किया था।

महाराज सूरजमल की मत्यु के समय जाटों के अधिकार में आगरा धौलपुर मनपुरी हाथरस अलीगढ एटा मेरठ रोहतक फरुखनगर मेवात रेवाड़ी गुड़गांव और मथुरा के जिले थे—भरतपुर का मूल राज्य इनके अतिरिक्त था। गंगा का दाहिना तट उसके (जाट राज्य के) पूर्वी सीमान्तों की रचना करता है तथा चम्बल दक्षिणी सीमान्तों की जयपुर नरेश की प्रादेशिक सीमाओं में शामिल आगरा का सूबा उसके पश्चिम में स्थित है तथा दिल्ली का सूबा उसके उत्तर में पूर्व से पश्चिम तक वह १०० कोस लम्बा है तथा उत्तर से दक्षिण तक उसकी लम्बाई ७० कोस है (ला नॅवाब रेने मडेक सेवगन ४५)। जहां तक राज्य की वित्तीय
१ स्थिति का सम्बन्ध है फादर वेडेल ने लिखा है 'सूरजमल ने अपने उत्तराधिकारी के लिए कितना खजाना और सम्पत्ति विरासत में छोड़ी इस प्रश्न पर मतैक्य नहीं है। कुछ ने ६ करोड़ रुपये का अन्दाज लगाया है और कुछ ने कम का। मैंने उसकी वार्षिक आय और व्यय के सम्बन्ध में उन लोगों से जानकारी प्राप्त की जो उनका प्रबन्ध करते थे तो अधिक विश्वसनीय जानकारी मैं हासिल कर सका कि उसका वार्षिक व्यय ६५ लाख से अधिक और ६० लाख से कम कभी नहीं हुआ तथा अपने शासनकाल के कम से-कम अन्तिम ५ अथवा ६ वर्षों में उसकी वार्षिक आय १७५ लाख से कम कभी नहीं हुई। उसने अपने पूर्वजों के कोष में ५ अथवा ६ करोड़ की चांदी की वृद्धि की। आज (जवाहर सिंह के राज्यारोहण के पश्चात) जाटों के खजाने में १० करोड़ रुपये हैं बहुत-सा धन गड़ा हुआ है—यह पता नहीं कहां। सूरजमल ने डीग में बदन सिंह के खजाने का पता लगाने के लिए एक बड़े भूभाग में निष्फल खुदाई करवाई। इससे नगर को एक सरोवर प्राप्त हो गया तथा नागरिकों को जल की सुविधा मिल गई।' जाटों के खजाने के सम्बन्ध में जन-साधारण की राय के बावजूद मैंने हमेशा यह विश्वास किया है कि उनके हाथों में बहुत अधिक धन नहीं है। (वेंडेल ५१ ५२) वर्षों के बीत जाने के बाद भी भरतपुर के राज परिवार की अपार धन-सम्पत्ति के सम्बन्ध में जन-साधारण के विश्वास पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है—इसके विपरीत उसमें वृद्धि ही हुई है। उसके खजाने के गुप्त

तहखाना में कहा जाता है कि वह सारा लूट का धन था जो दिल्ली और आगरा से लूट में लाया गया वह माल है जिसका वजन की आशा भी थोड़ा हो ताग कर सकते हैं।

कोष के अतिरिक्त सूरजमल ने अपने उत्तराधिकारी को ५००० घोड़े ६० हाथी १५००० घुड़सवार २५००० से भी अधिक पदल (उनके अतिरिक्त जो दुर्गों में स्थित थे) ३०० से भी अधिक तोप और उसी अनुपात में बारूद छोड़ा था (उपरोक्त ५५) सियार के लेखक ने लिखा है— उसके (सूरजमल के) अस्तबल में १२००० घोड़े और उतने ही घुड़सवार जिनको उसने स्वयं घोड़े की पीठ पर बठकर गोली चलाने तथा फिर चक्कर काटकर युद्ध की छाया में उसमें कारतूस भरने का प्रशिक्षण दिया था। ये लोग लगातार नित्य की प्रक्रिया से इतने फुर्तीले और खतरनाक निशानेबाज बन गये थे और इसके अतिरिक्त वे अपने काम में इतने विशेषज्ञ थे कि समूचे भारत में इस क्षेत्र में कोई भी सैनिक ऐसे नहीं थे जो उनके सानी होने का दम्भ कर सकें। ऐसे राजा के विरुद्ध लाभ की प्राप्ति के लिए युद्ध करना सम्भव माना जाता था। (सियार IV २८७ फ्रेंच फौजी कप्तन जीन लॉ[1] के संस्मरणों से ज्ञात होता है कि सूरजमल अपनी सेना की पदल रेजीमेन्टों को यूरोपियन अनुशासन में प्रशिक्षण देने के लिए यूरोपियन लोगों की तलाश में थे।[1] एम०लो के दल पर राजा दुर्जनसिंह (सूरजमल का सम्बन्धी) ने १००००घुड़सवारों के साथ २३ मार्च १७५८ को आक्रमण कर दिया उस समय वह कालिन्दी नदी के पूर्वी तट पर कैम्प में था। राजा दुर्जन सिंह इस समय दोआब में स्थित अतरौली के छोटे प्रान्त का कमाण्डेंट था। इस आक्रमण के पीछे दुर्जनसिंह का मंशा यूरोपियन लोगों को पकड़कर सूरजमल के पास बन्दी के रूप में भेजना था। जो लम्बे समय से इन लोगों को अपनी सेवा में रखना चाहता था। भाग्य से ये लोग बच निकले और सूरजमल की इच्छा पूरी नहीं हो सकी।

संदर्भ

१ वेन्डल ने उसके चार पुत्र बताए हैं परन्तु इतिहास का यह एक सामान्य तथ्य है जिसकी फारसी के इतिहासकारों ने पुष्टि की है कि राजा नवलसिंह के उपरान्त गद्दी पर बैठने वाला रणजीत सिंह भी सूरजमल का पुत्र था। इसमें उसके पुत्रों की संख्या ५ हो जाती है। वेन्डल का विवरण यद्यपि समकालीन होने के कारण अत्यधिक मूल्यवान है तथापि उसमें कुछ जाने पहचाने तथ्यों के बारे में अशुद्धियाँ पाई जाती हैं।

२ कर्नल टाड ने लिखा है कि जवाहरसिंह और रतन सिंह कुर्मी परिवार की एक पत्नी से उत्पन्न हुए थे। (यह जाति जाटों से नीची है।) परन्तु फादर वेन्डल

न जा जवाहरसिंह के दरबार म रहा था और उस निकट स जानता था, लिखा ह कि व कार जाति की पत्नी स पदा हुए थ यह जाति जाटा म कुछ ऊपर है तथा वह उन राजपूतो की ही एक किस्म है जा नीचे गिर गये थ। यह विवरण गौरा जाति से मिलता जुलता है जिन्हे ईलियट न राजपूतो की एक हीन जाति कहकर पुकारा है। इमाद उस सादात क लखक न जवाहर की मा को राजपूतनी बताया ह। यह कहा जाता ह कि मथुरा और गुडगाव जिलो के गौरा वह राजपूत हैं जो अपन बडे भाई की विधवा मे विवाह कर लेत हैं।

३ जवाहरसिंह के साथ न्याय करन के लिए फादर वन्डेल के निम्न कथन को उद्धत करना उचित होगा यद्यपि यह बात सत्य के अतिरिक्त और कुछ नही है कि इस गन्दे मामले म जवाहरसिंह आशिक रूप स स्वय अपने मनोभाव के कारण फसा था और आशिक रूप म उन लोगो के परामश के कारण जिन्हें उसन अपन इद गिद इक्टठा किया था—तथापि यह निश्चित है कि सूरजमल का उसके प्रति अलगाव तथा उसक पिता की कृपणता के कारण अथवा उन लोगो की दुष्टता के कारण जा उसके पिता के आदेश पर उमे उसके जीवनयापन के लिए धन की व्यवस्था करत थे वह दरिद्रता की स्थिति पर कभी कभी आ जाता था, इन कारणो न भी उम विद्रोह के लिए प्रेरित किया था। विद्रोह १७५५ म अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण के पूव हुआ था।

४ एटा-आगरा डिवीजन जो उत्तर म गगा नदी स मर्यादित है तथा दक्षिण मे मनपुरी जिले स उसके उत्तर म बदायू का जिला है और पश्चिम म आगरा जिले का जलेसर परगना।

५ 'इमाद उल-सादात' ही एक मात्र फारसी इतिहास है जिसमे सयोग से सूरजमल की दौलत का सकेत मिलता है। लेखक गुलामअली को सूचना प्रदान करने वाले राव राधा कृष्ण ने जा एक समय सूरजमल का विश्वासपात्र अनुचर था कहा है कि सूरजमल ने पानीपत की तीसरी लडाई के सम्बन्ध मे उससे भविष्यवाणी की थी और बातचीत के दौरान उसने कहा था कि मेरे पास इतने प्रदेश हैं जिनसे मुझे डेढ करोड की वार्षिक आय प्राप्त होती है तथा मेरे कोष म ५ या ६ करोड रुपय हैं। मुझे उससे (भाऊ से) अलग होने के लिए बाध्य होना पडा है (इमाद फारसी पाठ ७२)। यह मूलत सही अनुमान है।

६ देखिए ममोइर आजीन ला पृ० ३१२ ३१३ (सम्पादक एल्फ्रेड मार्टिनो) कालिन्दी गगा की एक सहायक नदी है वह अतरौली तहसील म बहती है। अतरौली अलीगढ से उत्तर-पूर्व म १६ मील दूर है।

दसवां अध्याय

महाराज सवाई जवाहर सिंह 'भारतेन्दु' १७६४-१७६८

जवाहर सिंह का सिंहासनारोहण

सूरजमल के देहान्त के पश्चात् रानी हंसिया के भाई बलराम के नेतृत्व में सामन्तों के दल ने स्वर्गीय राजा की इच्छानुसार नाहर सिंह को भरतपुर की गद्दी पर बिठाने का प्रयत्न किया। परन्तु जवाहर सिंह की नीति के एक वीरतापूर्ण और सुनिर्णीत कदम ने परिस्थिति में नाटकीय परिवर्तन उपस्थित कर दिया। उसने फर्रुखनगर से एक दूत अपने भाई और सामन्तों को एक कठोर चेतावनी के साथ भेजा जिसमें उसने उन पर कायर और लोभ के लिए अवांछनीय झगड़ा करने का आरोप लगाया। उसमें कहा गया कि यह अवसर उस महान् स्वर्गीय आत्मा का उत्तराधिकारी बनाने का नहीं है परन्तु उसके हत्यारे के खून में उसको सन्तुष्ट करने का है। उसने कहा कि इस समय वह अपने जन्म सिद्ध अधिकार का दावा प्रस्तुत नहीं करेगा परन्तु जो थोड़ी-सी सेना उसके पास है उसको लेकर वह शत्रु पर चढ़ाई करेगा और बाद में देखेगा कि उसके पिता का उत्तराधिकारी बनने के लिए कौन सबसे अधिक उपयुक्त है? इस धमकी ने सरदारों को भयभीत कर दिया और नाहर सिंह जो स्वभाव से ही भीरु और कायर था इतना घबड़ा गया कि वह दूसरी रात वहाँ से भाग गया। अपने परिवार और पक्षधरों के साथ वह धौलपुर चला गया। सूरजमल के समय में धौलपुर उसे गुजारे के लिए दिया गया था। जहाँ वह अपनी विरासत को प्राप्त करने के लिए अच्छे अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। बलराम सिंह ने सिंहासन पर नाहरसिंह के दावे का प्रतिरोध करने की समस्त आशाएं त्याग दीं और उसने यही बुद्धिमत्तापूर्ण बात समझी कि वह आत्म-समर्पण कर दे। जवाहर सिंह डीग वापस आ गया और वह जाट प्रदेश के स्वामी और सम्प्रभु के रूप में गद्दी पर बिठा दिया गया।

जवाहर की स्थिति की दुर्बलता

परन्तु उसकी स्थिति अभी भी खतरे और अनिश्चियता म थी। पुराने सरदारा का समपण उसके पद की अनिच्छुक मायता म अधिक कुछ नही था। वे अपनी जागीरो को वापस चल गय नयी सरकार क काम म भाग लेने की उनकी कोई इच्छा नही थी। सबस महत्त्वपूण सरदार अश्वारोही सना के जनरल तथा भरतपुर के गवनर (जहा राज्य का खजाना था) बलराम न राजा जवाहर सिंह के समक्ष किल का दरवाजा बद करा दिया तथा राजा सूरजमल के अय स्थानो पर स्थित खजानो की सूचना दने से इकार कर दिया। धौलपुर म नाहर सिंह अपन भाई को अपदस्थ करने के प्रत्यक पडयत्र म सहायता दने को तयार था और सूरजमल के भाई प्रताप सिंह का पुत्र बहादुर सिंह ने जो वर के किले का स्वामी था नय राजा की सत्ता को मानने स इकार कर दिया था और वह स्वय को स्वतत्रता का दावा करन की तयारी करा लगा था। कवल एक बडी सनिक सफलता ही लोगो की कल्पना शक्ति का प्रभावित कर सकती थी और वही राज्य मे विघटनकारी शक्तिया पर रोक लगा सकती थी तथा राजा जवाहर सिंह के शासन को पुख्ता बना सकती थी।

उसन कुछ समय क लिए यह दिखाया कि उसन अपन पिता के सामन्तो द्वारा उसके विरुद्ध किए गये कामो को अनदेखा कर दिया है तथा इस कारण उन्हे क्षमा कर दिया है कि उन्होंने उसके सिंहासनारोहण म सहायता की थी। भावुकता और स्वाथ दोनो ही यह माग करत थे कि सूरजमल की मौत का बदला लेन के लिए नजीबुद्दौला के विरुद्ध आक्रमण किया जाए। भूतपूर्व वजीर गाजी-उद्दीन जो १७६० स भरतपुर म जाटो के पेशनर के रूप म रह रहा था इस आशा के साथ जवाहर सिंह की क्रोधाग्नि को पखा दे रहा था कि दिल्ली म दूसरी क्रान्ति हो जाएगी और उसे वजीर का पद दुबारा मिल जाएगा। परन्तु किसी भी जाट सरदार न इसका अनुमोदन नही किया और उसे सामाय रूप स अस्वीकृत कर दिया गया। जवाहर सिंह अपन सामन्तो की सनिक शक्ति को बहुत अधिक मूल्य नही देता था उस आवश्यकता केवल धन की थी। उसके उपद्रवी एव कृतघ्न स्वभाव के बावजूद रानी हंसिया अपन दत्तक पुत्र जवाहर सिंह को कृपालु मा की भाति अपनी समस्त कोमलता और हार्दिकता के साथ प्यार करती थी। वह जवाहरसिंह के आग्रह का प्रत्युत्तर न दे यह सम्भव नही था उसन अपन भाई बलरामसिंह को बिना बताय आक्रमण के व्यय के लिए प्रचुर धन राशि की व्यवस्था की।

प्रतिशोध का युद्ध

अक्टूबर[1] १७६४ के अन्त मे दिल्ली के दरवाजे पर एक शक्तिशाली हिन्दू-सना उपस्थित हुई—ऐसा सना जो १७६० मे हिंदुस्तान पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए महाराष्ट्र द्वारा भेजी गई सेना के बाद महत्त्व म दूसरे स्थान पर आता थी। इस सना का प्रयोजन महाराज सूरजमल के खून का प्रतिशोध लेना था तथा पानीपत के युद्ध म मुस्लिम विजय के परिणामो को नष्ट करना था। जवाहर सिह इस युद्ध मे अपने साथ अपन ६० हजार सनिक और १०० तोपें लाया था, इसके अतिरिक्त उसने युद्ध मे तुरन्त विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से मल्हार राव होल्कर के २५ हजार मराठा सनिक तथा १५ हजार सिखो को भाडे के मित्रो के रूप मे अपनी सेना म शामिल कर लिया था। युद्ध के परिणामा के सम्बन्ध म सदिग्ध होते हुए भी बहादुर रुहेला सरदार अन्त तक लडने के लिए कृत-सकल्प था। उसन बुद्धिमत्ता के साथ अपन परिवार और खजान को सहारनपुर जिले म शुक्रताल[1] के मजबूत किले म पहले से ही भेज दिया था तथा दिल्ली के चारो ओर खाइया खुदवाकर एक लम्बे घेरे के लिए वह तयार हो गया। उसने अन्य रुहेला सरदारो को अपनी सहायता के लिए बुलवाया तथा अब्दाली के पास आवश्यक अनुरोध भेजा और उसे दिल्ली म वतमान खतरनाक स्थिति स अवगत कराया। दिल्ली उस समय सभी तरफ स घिरी हुई थी नगर के उत्तर मे मराठा थे दक्षिण-पश्चिम म सिख जबकि जवाहर सिंह ने नदी के पूर्वी तट पर अपनी सेना का कुछ भाग तनात कर रखा था तथा शेष दिल्ली और अजमेरी दरवाजों पर। जोशीले और अधीर जाट ने नजीब खा को बाहर आने के लिए ललकारा और कहा कि एक कोने म छिपने के बजाय उसे खुले म युद्ध करन के लिए आना चाहिए। उसने विशाल हृदयता का परिचय देत हुए अपनी सना को फरीदाबाद (दिल्ली स दक्षिण की ओर १६ मील क फासले पर स्थित) की ओर ५ या ६ कोस दूर तक हटा लिया ताकि अफगाना के साथ कोई छेडखानी न हो। क्रोध म आकर नजीब-उद्दौला बाहर आ गया तथा उसन जाटो के साथ युद्ध किया (१५ नवम्बर १७६४) परन्तु जाट अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुए उन्होने अफगानो को नगर की ओर पीछे धकेल दिया उभय पक्ष के घायल और मतको की सख्या लगभग एक हजार थी। होल्कर तथा अन्य सरदारो के साथ जवाहर सिह ने जमुना नदी को पार किया तथा शाहदरा को लूटा और जमुना क इस तरफ तोपें खडी की। शाहदरा की लूट के दूसरे दिन शत्रु की भारी गोलाबारी के कारण नजीब की सना किले के सामने पडी रेती को छोडकर किले के अन्दर चली गयी गोले नगर म पडने शुरू हो गए (१६ नवम्बर)।[1] तीन महीने इसी प्रकार मुसीबत और कठिनाइया म गुजर गय। घेरे को तोडने के अफगानो क सभी प्रयास विफल रहे। १२वी शबान ११७८

हि० (४ फरवरी १७६८) नजीब न जाटा और सिखो स दूसरी लडाई नखाम और सब्जी-मण्डी के निकट लडी। लडाई बन्दूको स छोडी गई भारी गोलीबारी के साथ आरम्भ हुई इसमे बहुत से लोग मारे गए और घायल हुए इस बार पुन अफगानो को पीछे हटना पडा। अब उनके सामने भुखमरी अथवा आत्म-समपण के अतिरिक्त और कोई दूसरा विकल्प नही था, दुकान बन्द हो गइ और सरकार के अधिकतम प्रबोधन के होते हुए भी लोगो को दिलासा नही मिली। अगले ही दिन पुराने और नये शहर के लोग जाट-खेमे म पहुच गए और वे भुखमरी से बचन के लिए अनाज की भीख मागने लगे। यह नगर का एक प्रकार का समपण था—नगर की रक्षा करने वाले किले के भीतर घुस गए। किसी भी स्रोत से सहायता के आने की कोई सम्भावना नहीं थी, सिख सहारनपुर तथा नजीब-उद्दौला के अय इलाका म लूट-मार मचाए हुए थे तथा अब्दाली के आने की कोई सूरत दिखाई नही पड रही थी।[४]

मल्हार राव का विश्वासघात

जब सफलता पकड के भीतर दष्टिगोचर होन लगी थी राजा जवाहरसिंह को अपने विश्वासघाती मित्र मल्हार राव के आचरण स जिसके सम्बन्ध म फादर वेन्डेल ने लिखा है कि उसने अपने आलस और नजीब खा के प्रति लगाव के कारण सारे मामले को बिगाड दिया। उसने सन्धि का प्रस्ताव उस समय रखा जबकि रुहेलाओ के लिए बिना शत समपण को टालना सम्भव नही था और आखिर म उसने जवाहर सिंह को उस पर सहमत होने के लिए वाध्य कर दिया (फ्रच हस्तलिपि, पृ० ५६)। नजीबखा ने शान्ति के लिए वात चलाई-- सुजान मित्र राजा चेतराम तथा रूपराम (भरतपुर राजा का कुल पुरोहित) का भतीजा मल्हारराव स शान्ति के सम्बन्ध म बात करने गए और लौट आए (१४वी शबान ६ फरवरी १७६५) सूर्यास्त से दो घडी पहले नवाबजबीता खा न जमुना तक जाना आरम्भ कर दिया वह अपन साथ गगाधर तातिया और रूपराम को नजीबुद्दौला के पास ले आया (वाका पृ० २०१)। दोनो पक्षो न स्पष्टत एक समझौता स्वीकार कर लिया परन्तु यह नही मालूम कि समझौत की शर्ते क्या था। १७वी शबान (७ फरवरी) को नजीबुद्दौला मल्हार राव के खेमे म उसस मिलन गया और उसक बाद व दोनो जाटो क खेमे म गए और सूर्यास्त के करीब वहा स अनाज म लद घोडो के साथ नगर को वापस लौट आय। (वाका पृ०२०१) २०वी शबान (१२ फरवरी) को जवाहरसिंह दिल्ली स ५ मील दूर ओखला को कूच कर गया। (वाका २०२) मल्हारराव को अपन मित्र के साथ विश्वासघात करन का पारितोषिक मिला। २१वी शबान (१३ फरवरी) को उसने नजीबुद्दौला ग भट की और उसन उस एक हाथी दो घोड और आभूषणो स भरी नौ प्लेटें तथा उसके साथियो को १२६ सम्मानपूण पोशाकें भट की (उपरोक्त,

२०२)। २२वीं शबान (१८ फरवरी) को जवाहरसिंह से मिलने के लिए नजीबाबाद आया और उसने युवराज जवा बख्त की तरफ से उसे एक हाथी और सम्मान प्रदर्शित करने के लिए एक पोशाक भेंट की।' उपरोक्त मामला यहीं समाप्त हो गया। वह इस समझौते से सन्तुष्ट नहीं था और वह उसके ऊपर अविश्वसनीय मराठा सरदार के द्वारा थोपा गया था, यह बात इस तथ्य से स्पष्ट हो जाती है कि वह राजधानी से नजीबुद्दौला से मिले बिना जैसे शिष्टता का तकाजा था, चला गया। वह मल्हारराव के विरुद्ध कटुता को लेकर डीग चला आया वह जानता था कि मल्हारराव के कारण १६० लाख रुपया खर्च करना पड़ा था और जिसके एवज में उसे कोई लाभ नहीं मिला था। जैसा फादर वेन्डल ने लिखा है इस अभियान से उसे कोई लाभ नहीं हुआ। सिवाय इसके कि सबके तथा सरदारों पर उसका प्रभुत्व स्थापित हो गया और अपनी प्रजा के बीच में उसका आदर बढ़ गया।[1] (फ्रेंच हस्तलिपि पृ० ५६)

जवाहरसिंह द्वारा विद्रोही सरदारों का दमन

दिल्ली के विरुद्ध अभियान से लौटने के पश्चात् (मार्च १७६५) राजा जवाहरसिंह ने यह उचित समझा कि वह बाहर विजय की बात सोचने के पूर्व अपने आपको अपने घर का स्वामी बनाये। उसे संदेह था तथा यह संदेह निराधार भी नहीं था कि उसके असन्तुष्ट सरदारों तथा मल्हारराव के बीच गुप्त सम्बन्ध है यथार्थ में यदि ये सरदार उसके साथ दिल्ली गए थे तो उन्होंने ऐसा अनमने रूप से भय एवं लज्जा के कारण किया था। दो पुराने सरदार अश्वसेना का कमाण्डर बलराम तथा तोपखाने का जनरल मोहन राम का राज्य में समूची शक्ति पर एकाधिकार था सूरजमल का खजाना और सेना उनके हाथों में थी तथा उनके सम्बन्धी राज्य में महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक पदों पर आसीन थे। इसके अतिरिक्त उनके मस्तिष्क में पुरानी शिकायतें भी थीं इन लोगों ने उन्हें उत्तराधिकार से वंचित रखने का षड्यंत्र रचा था फिर इन सबने का मुखियाओं को मारकर वह एकदम धनी हो सकता था कुख्यात ज्मन कप्टन समरू जिसने शुजाउद्दौला का साथ छोड़ दिया था अब भरतपुर के दरबार में सेवा करने तथा सुरक्षा प्राप्त करने के लिए आया था। (अप्रैल १७६५)। यह एक ऐसा आदमी था जो जवाहरसिंह के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता था वह एक योग्य सैनिक था तथा अन्तरात्मा नाम की कोई भी वस्तु उसके पास नहीं थी अतः वह बिना किसी संकोच के अपने वेतनदाता के कहने पर कोई भी कुकृत्य दक्षतापूर्वक सम्पूर्णता के साथ निष्पादित कर सकता था। भरतपुर की दौलत की ख्याति ने दिवालिया राजाओं की सेनाओं में फिरते हुए अनेक पुराने विदेशी भाड़े के सैनिकों को आकर्षित किया था। उसने फिरंगियों का एक शक्ति

शाली दल भरती कर लिया और जाटों की अपेक्षा वह इस दल पर अधिक भरोसा कर सकता था। इसके उपरान्त राजा जवाहरसिंह ने अपने विरोधी सरदारों के विरुद्ध कार्यवाही की प्रक्रिया आरम्भ की।

इन सहायकों को प्राप्त करने के पश्चात वह यह सोचने लगा कि इतना अधिक शक्तिशाली एवं सुरक्षित है कि वह उन लोगों से सन्तोष प्राप्त करने की मांग कर सकता है जिन्हें बन्दी बनाने की इच्छा को वह एक लम्बे समय से संजोए हुए है। सम्भवतः वह इसी योजना के साथ आगरा आया था, वहां उसने उन लोगों को बुलाया जिन्हें वह पकड़ना चाहता था उसने अपने विदेशी सैनिकों को सबको की अच्छी तरह से निगरानी करने का आदेश दिया उसने बलराम तथा अन्य लोगों को विभिन्न स्थानों से गिरफ्तार करवाया और उसी दिन उन लोगों को भी बन्दी बना लिया जो उनसे सम्बद्ध थे। बलराम तथा एक दूसरे सरदार ने जो कुछ उनके साथ हुआ था उससे घृणा और लज्जा से भरकर तथा सम्भवतः और अधिक लज्जित होने से बचने के लिए अपनी तलवारों से एक दूसरे के सामने अपना चेहरा काट के अपना गला काट लिया अन्य को बन्दी बना कर मजबूत पहरे में भरतपुर भेज दिया गया जहां उन्होंने राजा सूरजमल के हिसाब में से फिरौती की रकम देकर जो उनसे मांगी गई थी अपने को रिहा करवा लिया। कुछ सरदारों ने धन देने की बजाय अपने को मरवाना अधिक पसन्द किया हालांकि उनके सम्बन्ध में यह कहा जाता था कि उनके पास बहुत रुपया है और उन पर प्रशासन में भ्रष्ट आचरण का भी आरोप था। बलराम और उसकी सम्पन्नता की बात तो दूर है अकेले मोहन राम पर ८० लाख रुपया नगद बताया जाता था इसमें उसकी अन्य सम्पत्ति शामिल नहीं है—उसने अनेक यातनाओं और ज्यादतियों को सहने के पश्चात उन्हें अपना सिर काटने दिया लेकिन उसने अपनी सम्पत्ति में से जो उसके पास वास्तव में थी एक भाग भी देने से इन्कार कर दिया। (फ्रेंच हस्तलिपि पृ० ६१ ६२)
इस प्रकार जवाहरसिंह ने पिता के पुराने सरदारों से अपना बदला लिया। यह रक्त रंजित कार्य एक महान् गलती सिद्ध हुआ इसमें उसे सूरजमल के खजाने को प्राप्त करने में भी असफलता मिली। उसे बहुत गलत परामर्श दिया गया था। एक धीमा और सुहावना तरीका रुपया निकालने के लिए सम्भवतः अधिक उपयोगी सिद्ध होता। जवाहरसिंह को इस तरीके से केवल १५ या २० लाख रुपया प्राप्त हो सका। (उपरोक्त)। यह एक राजनीतिक भूल भी थी क्योंकि यह अन्ततोगत्वा भरतपुर के राजपरिवार के पतन का कारण बना। फादर वेंडल ने लिखा है कि जवाहरसिंह के इस काम से उसके सम्बन्धियों में रोष उत्पन्न हो गया था सामान्य रूप से सभी जाटों में निराशा की लहर दौड़ गई साथ ही उनके हृदय में कड़वाहट उत्पन्न हो गई तथा उसके [illegible] [illegible] हो गया।
और यद्यपि राज्य से सम्बद्ध अनेक कारणों से वह इस प्रकार का आचरण कर

में लिए योग्य था तथापि यह काम बहुत उतावलेपन में किया गया था और वह अविवेकपूर्ण भी था। (उपरोक्त ६२)

इसके बाद जवाहर सिंह के विद्रोही चाचाजात भाई बहादुरसिंह की बारी थी जिसके पास वर* में किले का आधिपत्य था उसके सम्बन्ध में फादर वेन्डल ने लिखा है कि वह इतना विनम्र मनुष्य था जिसकी उसके मूलवंश के अधिकांश लोगों में कल्पना भी नहीं की जा सकती। उसने अपने चाचा सूरजमल की बड़ी निष्ठा के साथ सेवा की थी और इसके लिए उसकी जागीर में अनेक बढ़ोतरियों के द्वारा उसे पुरस्कृत भी किया गया था। वह धनाढ्य और शक्तिशाली था उसके पास अच्छी और अनेक तोपें थी और वह एक बड़ी सेना का स्वामी था। महाराज सूरजमल की मृत्यु के उपरान्त बहादुरसिंह यह सोचने लगा कि जाटों के राज्य पर शासन करने का उसका अधिकार भी उतना ही है जितना सूरजमल अथवा जवाहरसिंह का। उसने अपने कामों और आचरण से यह प्रदर्शित भी कर दिया कि वह वर पर शासन एक स्वामी की तरह से करना चाहता है दूसरे के प्रसाद के आधार पर नहीं। और इसके बावजूद कि जवाहर सिंह ने उसे अपनी अप्रसन्नता का संकेत दे दिया था वह उन स्थानों को दुर्गीकृत करता रहा जो पहले से ही भली प्रकार दुर्गीकृत थे वह अपनी सेना युद्ध सामग्री तथा रसद में वृद्धि करता रहा तथा किसी भी आक्रमण के विरुद्ध अपनी प्रतिरक्षा के लिए अपने को तैयारी की स्थिति में रख लिया। जवाहरसिंह ने वर्षा ऋतु के मध्य में (अगस्त १७६५) वर के विरुद्ध आक्रमण के लिए कूच किया तथा उसे सब तरफ से घेर लिया। तीन महीने तक बहादुरसिंह ने बहादुरी के साथ अपनी रक्षा की, घेरा डालने वालों को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा क्योंकि उस वर्ष वर्षा बहुत अधिक हुई थी। कुछ तो झूठे शान्ति प्रस्तावों के कारण और कुछ किले के भीतर के सरदारों के विश्वासघात के कारण, किले पर अधिकार कर लिया गया तथा बहादुरसिंह को बन्दी बना कर भरतपुर ले जाया गया। (नवम्बर १७६५) जहां से उसे फरुखनगर के मुसावी खां के साथ सूरजमल के पौत्र के जन्म पर रिहा किया गया। परन्तु उन दोनों राजपूतों को जिन्होंने बहादुर सिंह को जवाहरसिंह के विरुद्ध युद्ध करने के लिए उकसाया था तथा जिन्होंने उसे समझौता न करने की सलाह दी थी, उन्हें जवाहर सिंह के आदेश के अन्तर्गत भरतपुर की सड़क पर फांसी से लटका दिया गया—जाटों द्वारा फांसी देने का यह तरीका अभी तक व्यवहार में नहीं लाया गया था। वस्तुतः यह दूसरों के लिए एक चेतावनी थी।" (वेंडेल फ्रेंच हस्तलिपि पृ० ६३ ६४)

इस अभियान में जवाहरसिंह को ३० लाख से अधिक रुपया व्यय करना पड़ा, यह राजकोष के ऊपर एक बड़ा बोझ था। परन्तु यह अन्तिम नहीं था।

सन्दर्भ

१ फारसी रिकार्ड । ३५२ यह सूचना दिल्ली से कलकत्ता १६ दिनों में (११ नव १७६४) को लाई गई ।
२ यह सालानी और गंगा नदियों के संगम पर स्थित है ।
३ युद्ध, लूट और गोलेबारी जमाद I ११७८ के पहले छब्बीस दिनों में बृहस्पतिवार, शनिवार और सोमवार को हुई (वाका १६८ १६६) ।
४ फारसी में पत्र-व्यवहार I ३७२ । ६ जनवरी १७६५ की तिथि स्पष्टत गलत है ।
५ अब्दाली ने सिंध अक्टूबर १७६५ में पार की थी, यानी नजीब खा और जवाहरसिंह के बीच संधि होने के सात महीने के बाद । अत यह रिपोर्ट कि जाटों ने उसके डर के कारण संधि कर ली, गलत है ।
६ उपरोक्त विवरण पादर वेंडल और मंका पर आधारित है । चहार गुलजार-ए शुजाई के लेखक हरचरन ने लिखा है कि नजीबखा ने आरम्भ में ही समझौते के लिए प्रस्ताव रखे थ, परन्तु जवाहर सिंह ने अपने पिता के खून से उत्पन्न शत्रुता को याद करके उन्हें ठुकरा दिया । इसके उपरान्त उसने मल्हार राव से सम्पर्क स्थापित किया और उसकी मध्यस्थता से संधि हो गई । नजीबखा ने जवाहरसिंह के खेमे में जाकर उससे क्षमा याचना की ।
७ *बैर भरतपुर की प्रादेशिक सीमाओं में है । वह बयाना से १२ मील उत्तर पश्चिम में स्थित है ।*
८ जिस पोते का उल्लेख है । वह जवाहरसिंह के छोटे भाई रतनसिंह का पुत्र खेरीसिंह है । जवाहरसिंह के चूंकि कोई पुत्र नहीं था और न होने की कोई आशा थी । इसलिए उसने उसे गोद ले लिया था । इसी मौके पर इन राजनीतिक बंदियों को छोड़ा गया था । खेरीसिंह के जन्म की सही तिथि अज्ञात है । वाका की एकप्रविष्टि के आधार पर इसको २३ जिवाद ११७९ (मई ५ १७६६) समझा जा सकता है । इसी दिन नजीब के पुत्र अफजल खा ने नवाब मुसावी खान के साथ भेंट की थी (वाका २०८) सम्भवत अपनी मुक्ति के बाद । इस प्रकार बालक पैदा हुआ और बंदी मुक्त हुए सभवत अप्रैल १७६६ में ।
९ मूल हस्तलिपि में वैर के घेरे और पतन का लम्बा विवरण है यहां उसे संक्षिप्त कर दिया गया है ।

ग्यारहवां अध्याय

राजा जवाहरसिंह का शासन

नाहरसिंह का विध्वंस

जब जवाहरसिंह बर के घर म (जुलाई-नवम्बर १७६५) व्यस्त था राजा सूरजमल का सबसे छोटा पुत्र नाहरसिंह धौलपुर म बैठा भरतपुर की गद्दी को हथियाने की तयारियां कर रहा था। यह स्पष्ट था कि यदि जवाहरसिंह को बहादुरसिंह का दमन करने म सफलता मिल गयी तो अगली बारी म उसका नाम भी आना सुनिश्चित था। इस समय मल्हार राव होल्कर चम्बल के दूसरे तट पर था और वह वहा से जाटों के दूसरे राज्य गोहद[1] के विरुद्ध शत्रुतापूर्ण कार्यों को सम्पादित कर रहा था। नाहरसिंह ने मराठा समथन प्राप्त करने के लिए होल्कर के साथ पत्र व्यवहार आरम्भ किया। राजा जवाहरसिंह और मल्हार राव के बीच १७६४ के दिल्ली अभियान के समय से ही मनमुटाव था। चालाक मराठा ने जाट से धन लेकर और साथ ही म उसके लक्ष्य को विफल करके उसको मूख बनाया था। परन्तु शीघ्र ही उसे इस चालाकी के लिए पश्चात्ताप करना पड़ा जवाहरसिंह कोई सन्त नहीं था उसने उसे पूर्व निश्चित २२ लाख रुपये की आधी राशि जिसका भुगतान अभी तक नहीं किया गया था देने से स्पष्ट शब्दों म यह कहकर इनकार कर दिया कि उसने उसके साथ विश्वासघात किया है। मल्हार राव ने अपने दावे को वसूल करने के लिए इस अवसर का लाभ उठाया तथा नाहरसिंह के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उसने नाहरसिंह को अपना धमपुत्र मान लिया क्योंकि वह अपने इस पितृसुलभ ढोंग के लिए अच्छी रकम देने की क्षमता रखता था।

मल्हार राव ने अपनी सेना को चम्बल के पार भेज दिया तथा नाहरसिंह के आदमियों के साथ मिलकर धौलपुर के किले म सेना तैनात कर दी। जवाहरसिंह ने अपनी सहायता के लिए पंजाब के अपने बन्धु सिखों को बुलाया तथा शत्रु के विरुद्ध युद्ध करने के लिए वह शीघ्र ही चम्बल के तट पर पहुंच गया।

(दिसम्बर १७६५) मराठा सेना की एक टुकडी जो जाट प्रदेश म घुस गयी थी घर ली गई और उस बन्दी बना लिया गया। इसके उपरान्त धौलपुर पर घेरा डाला गया और जब उस पर जवाहरसिंह का अधिकार हो गया तो अनेक मराठा सरदार जिन्होंने पीछे हटकर वहा शरण ले रखी थी युद्ध-बन्दी बना लिय गय। इस सफलता स उत्तेजित होकर जवाहर सिंह मल्हार राव का पीछा करना चाहता था तथा मालवा तक मराठो का सफाया करना चाहता था। परन्तु सिखो न एसा करने स इनकार कर दिया क्योंकि ग्रीष्म ऋतु आरम्भ हो चुकी थी और उन्ह असह्य गरमी तथा जल की कमी के कारण बहुत अधिक कठिनाई का सामना करना पड रहा था। 'नाहरसिंह को जो मल्हार राव की सना म पहले स ही शरण ले चुका था अपनी जागीर से हाथ धोना पडा बाद म मराठाओ न भी उसे छोड दिया जिनको वह अपना देश देना चाहता था उसन करौली से भी आग एक छोटे राजपूत राजा के धोलड म स्थित किले म शरण ली जहा उसन निराश होकर जहर खाकर अपने प्राणा का अन्त कर लिया। उसका परिवार जयपुर नरेश के सरक्षण म चला गया जहा वे अभी भी हैं (यानी १७६७) व अपने साथ अपना अधिकाश धन ल गये थे और सम्भवत उनके पास राजा सूरजमल क खजाने के अधिकाश भाग का पता भी था जो सूरजमल के भावी उत्तराधिकारी होने के नाते उस विश्वास म लेकर बताया गया होगा।'[1]

जवाहर सिंह और रघुनाथराव का युद्ध १७६७

राजा सूरजमल का एक सपना अधूरा रह गया था वह चम्बल म रावी तक क समूचे उत्तरी भारत म एक जाट-परिसघ की स्थापना करना चाहते थ। वह सपना लगभग पूरा हो चुका था—जवाहर सिंह और सिक्खो के बीच घनिष्ट सम्ब ध थ उनकी सयुक्त शक्ति ने होल्कर क नेतृत्व म गठित मराठा शक्ति के ऊपर कुछ ही दिन पूर्व विजय प्राप्त की थी तथा सिखो ने अब्दाली के विरुद्ध सफल प्रतिरोध किया था। इस सफलता ने जवाहर सिंह के लिए आक्रमण हेतु नय दृश्य प्रस्तुत कर दिए थ वह अब इस परिसघ क सीमान्तों को और आग तक बढान की बात सोचने लगा था ताकि उसम उत्तरी मालवा के जाट भी शामिल हो जाए और मराठा आक्रमण क विरुद्ध अधिक शक्तिशाली अवरोधक खडा किया जा सके। गोहद का वीर राणा छत्रपाल एक वर्ष से मराठाओ के विरुद्ध बहादुरी म सघर्ष कर रहा था। मालवा म भी जाट-भूमवश का दुस्साहस साहस और अजेय शौय पजाब अथवा भरतपुर म कम उन्नत नहीं था। परन्तु वे प्रतिदिन कुछ न-कुछ खो रहे थे बहादुर होने के बावजूद व दक्षिण की टिड्डियो की तुलना म सख्या म बहुत कम थ। जवाहर सिंह को बहुत अच्छी तरह पता था कि यदि गोहद के राजा को पराम्त

करने में मराठाओं को सफलता प्राप्त हो गई तो उनकी समूची शक्ति उसके विरुद्ध प्रयुक्त होगी। मल्हार के ऊपर विजय से अपने को गौरवान्वित समझकर जवाहर सिंह ने स्वयं यह निश्चय किया कि वह अपने जाट मित्र राणा छत्रपाल की सहायता करेगा और इस प्रकार वह चम्बल के पार तथा अपने देश के बाहर मराठाओं का सफाया करेगा। (वेन्डल, फ्रेंच हस्तलिपि पृ० ६५)

पेशवा माधवराव को इस अजेय गठबन्धन के उदय पर चिन्ता थी और उसने १७७६ की शरद ऋतु में हिन्दुस्तान में मराठा सेनाओं की प्रतिष्ठा को पुनः कायम करने के लिए भेजा। होल्कर की सेना को मिलाकर उसकी सेना में ६०,००० अश्व सैनिक और १०० से भी अधिक तोपें थीं। रघुनाथराव ने गोहद पर घेरा डाल दिया तथा जवाहरसिंह के समक्ष कुछ गर्वपूर्ण मांगें रखीं इस समय जवाहरसिंह एक खतरनाक बीमारी में पीड़ित था। जैसे ही वह बीमारी से चंगा हुआ उसने मराठाओं के खिलाफ नये सिरे से कूच किया यदि मराठाओं ने उसके विरुद्ध किए गये दावों को वापस न लिया होता तो उसका इरादा उन पर आक्रमण करने का था। परन्तु उसके खेमे में विश्वासघात झांकने लगा था जिसके कारण उसे अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफलता नहीं मिल सकी। रघुनाथराव ने उसके दो प्रमुख सरदारों—अनूप गिरि गोसाई तथा उमराव गिरि गोसाई (नागाओं के नेता) को जाट राजा के प्रति निष्ठा से हटा लिया था। गद्दारों ने यह वायदा किया था कि वे जवाहरसिंह को उसके खेमे में बन्दी बनाकर उसे मराठाओं को सौंप देंगे तथा इसके बदले में उन्हें कालपी की ओर स्थित कुछ प्रदेश पुरस्कार के रूप में दिए जाएंगे। जवाहरसिंह के गुप्तचरों ने अपने स्वामी को इस षड्यन्त्र की सूचना समय से दे दी थी। अर्धरात्रि को जवाहरसिंह ने अपने सैनिकों को तैयार किया तथा अचानक गोसाइयों के खेमे पर हमला बोल दिया। गद्दारों को कठिनाई के साथ बच निकलने में सफलता मिल गई परन्तु उनके अनुचर बड़ी संख्या में बन्दी बना लिये गये तथा उनके खेमे को अच्छी तरह लूटा गया। लगभग १८०० घोड़े, ६० हाथी, १०० तोपें तथा अन्य बहुमूल्य सामग्री जवाहरसिंह के हाथ लगी। इन दोनों गोसाइयों के आश्रितों तथा उनकी सम्पत्ति को जो आगरा, डीग और कुम्हेर में थे एक स्थान पर ले आया गया तथा उनको निगरानी में रखा गया। (चहार गुलजार-ए शुजाई हस्तलिपि)[1] इसी समय अहमदशाह अब्दाली को पंजाब में कुछ प्रगति करने में सफलता मिल गई और वह दिल्ली पर आक्रमण करने की धमकी दे रहा था। रघुनाथराव और जवाहरसिंह दोनों अब्दाली को हिन्दुस्तान से बाहर रखना चाहते थे इसलिए इस खतरे के सन्दर्भ में उन्होंने अपने झगड़े को निबटा लिया। उन्होंने मैत्रीपूर्ण वातावरण में एक-दूसरे से भेंट की तथा अपने दावों को समायोजित कर लिया। सन्धि की शर्तें निम्न प्रकार थीं—

१ भरतपुर में स्थित मराठा-बन्दियों को रिहा कर दिया जाएगा।

२ जवाहरसिंह मल्हारराव के प्रति १/ लाख रुपये के बकाया की देनदारी का अदा करने के लिए एक नया समझौता करेगा परन्तु इससे पूर्व मराठा मूल अनुबंध की शर्तों को पूरा करेंगे।

३ रघुनाथ राव ने राजा जवाहरसिंह के राज्य के समीप स्थित राजपूतो के प्रदेश का एक छोटा टुकड़ा ५ लाख रुपया वार्षिक किराये पर देना स्वीकार कर लिया। (फारसी पत्र-व्यवहार II ४७)

यह संधि केवल काम चलाऊ व्यवस्था थी। इसके उल्लंघन से, किसी बड़े लाभ मिलने की स्थिति म संधि से सम्बद्ध कोई भी पक्ष इसको सम्मान देने को तयार नही था। १७६७ के मध्य म अब्दाली का भय भी नही रहा था क्योंकि इस समय तक सिखो को अपने प्रदेश म अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा पुन प्राप्त हो चुकी थी। वर्षा ऋतु म जवाहरसिंह न एक अभियान की योजना बनाई। 'अटेट' और भात के राजा का प्रदेश पहले मराठाओ को खिराज दिया करता था। मराठाओ को कमजोर देखकर जवाहरसिंह न सोचा कि उसे भी इस प्राप्त करने का उतना ही अधिकार है जितना मराठाओ को ह। अत उसन केवल इसी कारण से प्रेरित होकर उसे जीतने का निश्चय किया। इस अभियान से उसे जो मिला वह उससे कही अधिक था जो उसने सोचा था। वह श्रेष्ठ सेना के साथ उस तरफ गया था, अत उसे वर्षा ऋतु म (जुलाई सितम्बर १७६७) मराठाओ के सभी प्रदेशों तथा कालपी तक सभी छोटी जमींदारियों पर अधिकार स्थापित करने म सफलता मिल गई। यदि उसम इन विजित प्रदेशों को अपने अधिकार म रखने की उतनी ही कुशलता होती जितनी उन्हें जीतने की थी तो इस अभियान के लिए उसकी प्रशंसा की जाती तथा उसके इस प्रयास को वैभवपूर्ण माना जाता परन्तु इसमे यानी बुद्धि और सहिष्णुता के मामले मे वह पूर्णत असफल रहा। (फ्रेंच हस्तलिपि ६६)

४ राजा जवाहर सिंह और अंग्रेज

इस बीच बंगाल म एक बड़े आकार की क्रांति सम्पन्न हुई थी यह क्रांति अंग्रेजों के रूप मे नई विदेशी शक्ति का उदय के माध्यम से व्याप्त हुई जो कालान्तर म उत्तरी भारत का सबसे अधिक शक्तिशाली कारक सिद्ध हुआ। घेरिया और उदय नाला के स्थान पर उन्होंने बंगाल के राज्य पर अधिकार रखने के लिए जिसे उन्हें प्लासी (१७५७) म उसके विश्वासघाती पुत्रों न भेंटकर दिया था अपना रक्त देकर उसकी अपेक्षित कीमत चुका दी थी। एक बहादुर एव योग्य शासक न अपने कर्तव्य का पालन करने का प्रयास किया था वह इंग्लिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारिक लालच का शिकार बन गया। मीर कासिम अपने खोए हुए राज्य से अवध भाग गया। उसके नये संरक्षक नवाब वजीर शुजा उद्दौला ने विजेताओ के विरुद्ध लूटे

हुए माल में हिस्सा बटाने के लिए रणक्षेत्र का सहारा लिया। बक्सर के युद्ध के दूसरे दिन ब्रिटिश व्यापारिक कम्पनी भारत के आश्चर्यचकित लोगों और शासकों के सम्मुख शाही राजदण्ड के साथ प्रस्तुत हुई। साम्राज्य का वजीर उसके समक्ष नतमस्तक हो गया तथा उस उसके खोये हुए प्रदेशों को वापस दे दिया गया तथा उसके उदार शत्रुओं ने उसे संरक्षण का आश्वासन भी दिया। गृहविहीन सम्राट ने उदीयमान शक्ति को मान्यता प्रदान कर दी तथा इलाहाबाद के किले में उसने एक निरानन्द दरबार की इस आशा से स्थापना कर ली कि वह कम्पनी से उधार लिये हुए प्रकाश में कुछ चमक सकेगा।

परन्तु बंगाल के नये शासक तब तक चैन से नहीं बैठ सकते थे जब तक मीर कासिम उनकी पहुँच से बाहर रहकर रुहेलों के बीच अपनी शरणस्थली से उनके विरुद्ध षडयन्त्र रचता रहेगा। उसने अहमदशाह अब्दाली के पास अपने वकील इस अनुरोध के साथ भेजे थे कि वह अंग्रेजों के विरुद्ध उसकी सहायता करे। इसी के साथ नजीबुद्दौला ने भी जो उस समय जाटों और सिक्खों के दो पाटों के बीच में पिस रहा था अब्दाली के पास सहायता के लिए अति आवश्यक प्रार्थना भेजी थी। बंगाल की सरकार को अपने विरुद्ध एक बड़े अब्दाली आक्रमण की आशंका थी जिसकी परिणति उनके प्रदेश के सीमान्तों पर दूसरे पानीपत के द्वारा होती। रुहेला अपने हितों तथा मूलवंशीय सहानुभूति के कारण अब्दाली से बंधे हुए थे। शुजाउद्दौला पर विश्वास नहीं किया जा सकता था क्योंकि अवध का शासक बंगाल में अंग्रेजी शक्ति के उन्मूलन से सबसे अधिक लाभान्वित होता। मराठा उससे भी अधिक अविश्वसनीय थे क्योंकि उनके लिए यूरोपियन सौदागरों की प्रादेशिक आकांक्षाएं उत्तर एवं दक्षिण दोनों जगह उनकी राष्ट्रीय महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा थीं। बंगाल की सरकार ने यह समझने में कोई गलती नहीं की कि हिन्दुस्तान में केवल एक ही सुसंगठित सरकार है जिसकी अपनी शक्तिशाली सेना है और वह सरकार भरतपुर के जाटों की है जो उनके पक्के मित्र बन सकते हैं क्योंकि इन दोनों शक्तियों की अवस्थिति जिस प्रकार की थी उसके अनुसार उनमें से किसी एक के नाश से दूसरे को लाभ मिलने वाला नहीं था इसके दूसरी ओर दोनों दुर्रानी और मराठाओं की शक्ति को मर्यादित करना चाहते थे। राजा जवाहरसिंह एक से अधिक तरीके से अंग्रेजों के लिए उपयोगी हो सकता था। प्रथम वह सिखों का समर्थन करके अब्दाली को पंजाब में फंसा रख सकता था। द्वितीय यदि आक्रमणकारी अंग्रेजों के विरुद्ध चढ़ाई करने की धमकी देता तो वह उसके पृष्ठ भाग को विचलित कर सकता था अथवा उसे जाट दुर्गों पर घेरा डालने के लिए आकर्षित कर सकता था और इस प्रकार अंग्रेजों को प्रतिरोध को संगठित करने का समय मिल सकता था। तृतीय वह अंग्रेजों की सहायता से शाह आलम को दिल्ली के सिंहासन पर बैठा सकता था मुगलों की राजधानी के सिंहासन

पर एक मित्र सम्राट का आरोहण और एक शक्तिशाली मित्र का इद गिर्द के इलाके पर आधिपत्य का अथ या समूचे साम्राज्य पर अग्रेजा का प्रभाव। यदि सम्राट ब्रिटिश सरक्षण को छोडकर अग्रेजा के विरुद्ध हो जाए तो उस स्थिति म राजा जवाहरसिंह उसके ब्रिटिश विरोधी मसूबो को अवरोधित कर सकता था। जाटों और अग्रेजो की मत्री से इन महान् सम्भावनाओ की अपेक्षा की जा सकती थी।

परन्तु अग्रेजा न जब इस मत्री का पहली बार प्रस्ताव प्रस्तुत किया तो जाट राजा न उसक प्रति कोई उत्साह प्रदर्शित नहीं किया। बगाल के गवनर ने राजा जवाहर-सिंह को एक पत्र लिखा जिसम उसमे यह अनुरोध किया गया कि वह कुख्यात समरू को जिसने उसके यहा शरण ले रखी थी तथा जो उसके यहा सवा कर रहा था पदच्युत कर दे इस शत के पूरे होने पर प्रतिरक्षात्मक सधि की सम्भावना का लालच दिखाया गया। (फारसी पत्र व्यवहार। प० ४२७)। राजा जवाहरसिंह ने जब समरू को अपन यहा शरण दी थी उस समय अग्रेजा के विरुद्ध काम करने का उसका कोई मशा नही था, उसन तो उस अपने यहा इसलिए रखा था क्योकि उस अपनी पदल सेना को प्रशिक्षित करने के लिए एक यूरोपियन कप्तान की आवश्यकता थी। उसे गवनर के पत्र म निहित आदेशात्मक सकेत पसन्द नही आया और चूकि उसके दरवाजे पर कोई शत्रु नही था इसलिए उसने उस पत्र को गम्भीरतापूवक भी नही लिया। क्लाइव ने अब्दाली और मराठाओ के विरुद्ध एक परिसघ को निर्मित करन की आवश्यकता का अनुभव किया था—एसा परिसघ जिसम जाटो और रहेलाओ को शामिल किया जाए तथा अग्रेजो के लिए लाभप्रद एक प्रतिरक्षात्मक सधि की रचना की जाए। उसन छपरा के सम्मेलन म इस योजना को प्रस्तुत किया था परन्तु बहुमत को यह योजना इसलिए मान्य नही थी क्योकि उससे बगाल की सरकार के ऊपर उत्तरदायित्वों का भारी बोझ आ पडता। १७६७ के आरम्भ म दुर्रानी राजा न सिखो क उन्मूलन और उसके पश्चात् मीर कासिम को बगाल क सिंहासन पर बठान के दढ सकल्प क साथ पजाब पर आक्रमण किया था। उसने सिखा को अनक लडाइया म पराजित किया वह सतलुज तक पजाब के भीतर घुस आया और दिल्ली पर चढाई करन की धमकी देने लगा। उसकी सना की प्रगति न सभी हिन्दुस्तानी शक्तियो के बीच खलबली पदा कर दी तथा इसस सबसे अधिक घबराहट बगाल की सरकार को हुई। क्लाइव ने जिस सकट को पहल स ही देख लिया था वह अब सामन था। उसके उत्तराधिकारी वेरेल्स्ट ने वजीर स जिसका अपने पिता क एक समय के मित्र जाटो पर कुछ प्रभाव था कहा कि वह उनके साथ नये सिर स बातचीत आरम्भ करे।[1]

इस समय राजा जवाहरसिंह भी अग्रजा क साथ मत्री का इच्छुक था क्योकि उसे इस समय यदि एक ओर अब्दाली स खतरा था तो दूसरी ओर रघुनाथ राव

से। अत उसने बड़ी तत्परता के साथ अब्दाली के विरुद्ध संयुक्त प्रतिरोध की योजना में शामिल होना स्वीकार कर लिया।

अंग्रेज के अपने वायदों के प्रति निष्ठा से प्रभावित होकर जवाहर सिंह ने इस रक्षात्मक संधि को और मजबूत बनाने के उद्देश्य से उनके साथ आक्रमणात्मक एवं प्रतिरक्षात्मक दोनों प्रकार की संधियों का प्रस्ताव किया। उसने मुहम्मद रजा खां के माध्यम से उनके साथ सम्पर्क स्थापित किया था तथा अपने एक आश्रित श्री कृष्ण के द्वारा उसके पास एक पत्र भेजा था जिसमें उससे यह प्रार्थना की गई थी कि 'वह कलकत्ता के भद्र पुरुषों पर अपना प्रभाव डालकर लेखक (जवाहर सिंह) के साथ गठबंधन एवं मैत्री को पुख्ता करें जिससे वह शाह के विरुद्ध युद्ध को सफलतापूर्वक लड़ सके और उसमें विजय प्राप्त कर सके तथा भगवान के लोगों को शांति की उपलब्धि करा सके तथा हिन्दुस्तान के मसलों को निबटा सके। (लेखक ने) यह कहा कि उसे अंग्रेजों के साथ अनिवार्य रूप से सम्बद्ध माना जाए वह उनके साथ एक ऐसी मैत्री करने के लिए कृत संकल्प है जो कभी भी असफलता का मुंह नहीं देखेगी। यदि यह उचित समझा गया तो लेखक शाह आलम को दिल्ली के सिंहासन पर बैठा देगा तथा गाजी-उद्-दीन खान को वजीर घोषित कर देगा लेखक पहले से ही एक प्रस्ताव प्रस्तुत कर रहा है कि रणथम्भौर का किला उसे दे दिया जाए।' (उपरोक्त पृ० ८७ पत्र संख्या २६६ १२ अप्रैल १७६७)। इसके उत्तर में बंगाल के गवर्नर ने खान को लिखा कि राजा जवाहर सिंह को सूचित किया जाए कि यदि वह अंग्रेजों के साथ मैत्री के सम्बन्ध में वास्तव में ईमानदार है तो वह अपना एक विश्वासपात्र वकील बनारस भेजे जहां लेखक (गवर्नर) जा रहा है और वहां मामले पर पूरी तरह से विचार कर लिया जाएगा। (उपरोक्त पृ० ९१ संख्या ३१५ २० अप्रैल १७६७)। अतः जवाहर सिंह ने डान पेड्रो डी सिल्वा को अपना वकील नियुक्त कर दिया। (उपरोक्त पृ० १२६)। वजीर ने गवर्नर को सूचित किया कि वह 'रुहेलाओं पर विश्वास नहीं करता परन्तु एक सीमा तक जवाहर सिंह का विश्वास किया जा सकता है। लेखक (वजीर) का विश्वास है कि वह (जवाहरसिंह) हमारे साथ मैत्री को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लेगा। यदि जवाहर सिंह संधि और अनुबंध के लिए तैयार है तथा इंग्लिश कम्पनी की सेवा के लिए अपनी तलवार उठाने की दृढ़ प्रतिज्ञा करता है तथा यदि लेखक और अंग्रेज उसके प्रदेश पर शाह के आक्रमण की स्थिति में उसे सहायता का आश्वासन देते हैं तो उसके इस काम का प्रत्युत्तर उसे किस प्रकार दिया जाएगा। आशा है कि गवर्नर इस प्रश्न पर विचार करेंगे तथा लेखक को अपनी भावनाओं से अवगत करायेंगे ताकि वह उनके अनुसार काम कर सके। (उपरोक्त प० ९९ पत्र संख्या ३४६ अप्रैल २५ १७६४)। जवाहरसिंह ने शाह के प्रति निष्ठा तथा उसके आदेश पालन की शपथ खाकर उसे प्रसन्न कर रखा था।

१७ फरवरी १७६७ उसका वकील शाह स मिला तथा राजा जवाहर सिंह के मुख्य मुशी याह्या खा के पुत्र करीमुल्ला उसके विशिष्ट दूत की हसियत स अनक प्रकार की भेंटो के साथ शाह के खेम म गया। (फारसी पत्र-व्यवहार II २६ ३२)। जाट राजा की ईमानदारी का इससे बडा कोई दूसरा प्रमाण नही हो सकता कि अग्रेजो के साथ मत्री की बात चलाने के बाद (१२ अप्रल) उसने शाह के साथ कोई पत्र व्यवहार नही किया जिसम उस पर बदनीयती का आरोप लगाया जा सके।

अब्दाली के विरुद्ध अग्रेजो की सहायता का आश्वासन पान के बाद जवाहर सिंह को मराठाओ स शत्रुता को भडकाने म सकोच नही हुआ। इस सधि के सम्पन्न होने के तुरन्त बाद उसन मराठाओ के अल्पकालिक अल्पसरण का लाभ उठाकर कुछ स्थानो पर आधिपत्य स्थापित कर लिया। गवनर न वजीर को लिखे एक पत्र म अपने नय मित्र के आचरण पर चिन्ता व्यक्त की और उससे कहा कि वह 'उन बेचन लागो (मराठाओ) की गतिविधियो पर निगाह रखे जब जवाहर सिंह उन जिलो पर अपन दावो को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करे जिन्होने एक समय मराठाओ की सत्ता को स्वीकार कर लिया था। (उपरोक्त प० १४५)

इसी समय दक्षिण मे अग्रेज सरकार और हैदरअली के बीच युद्ध छिड गया इस युद्ध म अग्रेजो के एक समय के मित्र हैदराबाद के निजाम ने हैदरअली का साथ दिया। जब मराठाओ ने देखा कि मद्रास की सरकार पर उसके शत्रुओ का भारी दबाव है तो उन्होंने भी अग्रेजो के विरुद्ध शत्रुतापूण कायवाही की बात सोची। राजा जानोजी भोसला ने बगाल के गवनर से कुछ ऐसी मागें रखी जो क्रोध उत्पन्न करने वाली थी। बगाल के गवनर ने बडे साहस के साथ इन मागो पर अपनी नाराजगी व्यक्त की तथा जानोजी के दूत का एक पत्र लिखा जिसम उसने कहा कि वह अपन स्वामी को सूचित कर दे कि ' उस यह समझने म कठिनाई नही होनी चाहिए कि अग्रेज जहा ईमानदार मित्र हैं वहा वे दुर्जेय शत्रु भी हैं।' (उपरोक्त, पृ० १५२, पत्र सख्या ८८३ सितम्बर २७ १७६७)

चूकि अब्दाली अपन देश को सिखो स एक प्रकार स परास्त होन के बाद वापस चला गया था अत मराठा हिदुस्तान को दुबारा जीतन की बात सोचने लगे। यह अफवाह फल गई कि राजा जानोजी और रघुनाथ राव ने हिदुस्तान पर आक्रमण करने के लिए अपनी-अपनी सनाओ को मिला लिया है। पशवा माधो राव ने भी अपन वकील के माध्यम से वजीर की नब्ज को पहचानने का प्रयत्न किया। वकील ने एक पत्र के द्वारा अपने स्वामी को सूचित किया यहा यह अफवाह है कि यूरोपियना के वजीर के साथ मधुर सम्बध नही हैं तथा वे उसे अनेक प्रकार की कठिनाइया दे रहे हैं। यदि ऐसा है तो श्रीमन्त (रघुनाथ राव) तथा लेखक के स्वामी माधो राव के लिए पत्र लिखकर उसे अनुगृहीत करेगा। वकील ने वजीर से कहा है कि वह अपनी सीन के साथ एक समझौता करे जिसके

द्वारा बंगाल का सूबा मराठाओं के हवाले कर दिया जाय तथा वे वहां मालगुजारी वसूलें। (उपरोक्त पृ० १८१ पत्र संख्या ६६७ नवम्बर १७६७)।

वजीर ने गवर्नर को पत्र अग्रसारित कर दिया तथा मराठाओं के वकील को लिखा कि ब्रिटिश सरकार और उसकी सरकार के बीच पूर्ण सद्भाव है। हिन्दुस्तान पर मराठा आक्रमण की आशंका के कारण अब्दाली के विरुद्ध जो प्रतिरक्षात्मक संधि हुई थी उसे अब अंग्रेजों ने मराठा विरोधी स्वरूप प्रदान कर दिया। जाटों ने अपनी शत्रुता पहले से आरम्भ कर रखी थी तथा वजीर दृढ़तापूर्वक अंग्रेजों के साथ था। हिन्दुस्तान में अपने इस अलगाव से निरुत्साहित होकर मराठाओं ने अपने आक्रमणात्मक मन्सूबों को त्याग दिया। राजा जवाहर सिंह को गवर्नर से पत्र मिले जिनमें यह कहा गया कि नयी परिस्थितियों का सामना करने के लिए वे अपनी पुरानी संधि को समायोजित करें तथा मराठाओं समेत सभी शत्रुओं के विरुद्ध हिन्दुस्तान की शांति को कायम रखने के लिए एक अधिक ठोस परिसंघ की रचना करें। राजा ने अंग्रेजों के साथ अपनी मैत्री के महत्त्व को स्वीकार किया तथा गवर्नर को अपने हृदय के रहस्यों से अवगत कराने के लिए पड्रे डॉन पड्रो को कलकत्ता भेजा। (उपरोक्त पृ० १७१ पत्र संख्या ६४२ अक्टूबर १३ १७६७)

जवाहरसिंह की पुष्कर की तीर्थयात्रा (नवम्बर दिसम्बर १७६७)

राजा जवाहर सिंह शानदार विजयों के अनुक्रमों के माध्यम से अपनी शक्ति के शिखर पर पहुंचा था। उसे अपनी सेना और अपनी दौलत पर घमंड था अब वह सोचने लगा कि वह अपने पडोसियों को अपमानित और पीडित कर सकता है जिसके लिए उसे कहीं से भी दंडित होने की भी आशंका नहीं थी। आखिर उसके पडोसी उसकी दृष्टि में नगण्य कौन थे। क्रुद्ध विधाता ने शीघ्र ही उसे भाग्य की ऊंची चोटी से नीचे गिरा दिया तथा उसके गर्व को चूर कर दिया। फादर वेन्डेल ने लिखा है कि वह अब उन सब परेशानियों से मुक्त था जो मराठा उसे दे सकते थे एक सीमा तक वह उनसे ऊपर था रुहेला उससे डरते थे और लोग उसे उसके दावों से अधिक सम्मान देते थे वह एक सम्पन्न देश का स्वामी था परन्तु उसे यह पता नहीं था कि वह अपने सौभाग्य के लाभों का देर तक किस प्रकार उपभोग करे अथवा सम्भवतः उसी ने यह सोचा हो कि वह स्वयं ही उसका क्रमभंग करे तथा अपने ही हाथों से अपनी किस्मत को जिसने उसके प्रयत्नों के बावजूद उसका अभी तक साथ नहीं छोड़ा था उल्टा कर दे। (फ्रेंच हस्तलिपि ६७)

जवाहरसिंह का दुर्भाग्य उस समय आरम्भ हुआ जब उसका जयपुर के महाराजा माधो सिंह के साथ अपना झगड़ा हुआ जिसको अकारण खड़ा कर लिया गया था। समीप के पडोसी होने के नाते भरतपुर और जयपुर के शासकों के बीच झगड़ों के लिए

काफी गुजाइश थी। जयपुर नरेश स यह अपक्षा नही की जा सकती थी कि वह सन्तोष के साथ नवजात जाट शक्ति के विकास को मूकदशक की भाति देखता रहे—ऐसी शक्ति जो उसके राज्य के लिए स्थायी खतरा प्रस्तुत करती हो। यह सही है कि अपनी शैशवास्था म भरतपुर का राज्य महाराजा सवाई जयसिंह के सरक्षण की अनुपस्थिति म न तो जीवित रह सकता था और न उन्नति कर सकता था तथा इस सच को जवाहरसिंह के पिता और पितामह न अनुग्रह क साथ स्वीकार कर लिया था। इन्होने जयपुर क शासक परिवार को वही सम्मान और श्रद्धा प्रदान की थी जो एक श्रेष्ठ पुरुष तथा सरक्षक को प्रदान की जाती है और ऐसा करते समय वह किसी भय स अनुप्राणित नहा थे यह तो उनक चरित्र म निहित श्रेष्ठ गुणो से प्ररित था। परन्तु माधो सिह क सिहासनारोहण क बाद जिसके विरुद्ध राजा सूरज मल न ईश्वरी सिह की ओर स युद्ध किया था इन दोना राज्या के सद्भावनापूण सम्बन्धा म बिगाड उपस्थित हो गय। नय शासक के घमड ने जाट राजा के स्वाभिमान को चोट पहुचाई थी आर उसन दशहरा पर जयपुर दरबार मे उपस्थित होना बन्द कर दिया। जैसा मानव स्वभाव है सरक्षक उस समय शत्रु हो जात हैं, जब उनके सरक्षण की आवश्यकता नही रहती, फलत जवाहरसिंह के गददी पर बठने क बाद सम्बन्धो की यह शीतलता कालान्तर म शत्रुता म बदल गई आखिर अब घमड की टक्कर घमड के साथ थी। राजा जवाहरसिंह अपनी प्रख्यात यादव व्युत्पत्ति पर गम्भीरता क साथ विश्वास करता था। अपने पूवजो से भिन्न जिन्हे अपने जन्म के कम उच्च कुलीन होने का बोध था और जिसक कारण उत्पन्न आत्म सशय ने उन्हे सूयवशीय और चन्द्रवशीय राजपूत राज परिवारों के साथ समानता का दावा करने का साहस नहीं हुआ राजा जवाहर सिंह को गव था कि उसका जन्म एक *यादव परिवार म हुआ है। एक बार कहा जाता है उसके कुछ* परामशदाताओ न उस परामश दिया कि उस जयपुर के महाराजा के प्रति कम-से कम इसलिए सम्मानपूण होना चाहिए क्योकि वह उस राम के परिवार से सम्बन्ध रखता है जिसन समुद्र पर पुल का निर्माण किया था। इसके उत्तर म जवाहरसिंह न कहा कि यदि उसके पूवज ने समुद्र पर सतु का निर्माण किया तो मेरे पूवज (श्री कृष्ण) ने अपनी छोटी उगली पर सात दिन तक गोवधन पहाडी को उठाकर रखा था। उसक पिता और पितामह को अपन को बजराज सम्बोधित करना पसन्द था। परन्तु जवाहरसिंह न जयपुर नरेश को चिढान के लिए अपने लिए महाराजा सवाई जवाहरसिंह भारतन्दु की उच्च उपाधि धारण की तथा शान शौकत म अपन पडोसी स टक्कर लेत हुए उसने अपन दरबार को उसकी अपेक्षा अधिक वभवपूण बना लिया। जयपुर नरेश म इसका विरोध करन की क्षमता नही थी अत वह चुपचाप इस अपमान को बरदाश्त करता रहा। परन्तु उसके आक्रामक प्रतिद्वन्द्वी न उस अपन परिवार क सम्मान तथा आमेर की धरती की पवित्रता को

रक्षा के लिए अन्ततोगत्वा उसे हथियार उठाने के लिए विवश कर दिया।

१८वीं शताब्दी के इतिहास की कोई भी घटना ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की स्मृति-पटल पर इतनी ताजा नहीं है और राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों से इतनी विकृत नहीं हुई है जितनी वह घटना जिसका सम्बन्ध जयपुर की प्रादेशिक सीमाओं में से गुजरकर जवाहर सिंह की पुष्कर की तीर्थ-यात्रा तथा मोंडा के युद्ध और उसके लज्जाजनक पश्चगमन के साथ है। जाट इस दुर्घटना के लिए अलवर राज्य के संस्थापक राव राजा प्रताप सिंह द्वारा रचे गए षडयन्त्र को उत्तरदायी मानते हैं। प्रतापसिंह का अपने स्वामी जयपुर नरेश माधोसिंह से झगडा हो गया था। अतः वह संरक्षण के लिए भाग कर महाराज सूरजमल के पास आ गया था। बाद में उसने जवाहर सिंह को अपने अधिपति के विरुद्ध भडकाना आरम्भ कर दिया। यह कहा जाता है कि उसने विश्वासघातपूर्ण तरीके से जवाहरसिंह का साथ छोड दिया तथा जयपुर की सेना को यह निर्देश दिया कि वह जाटों पर उस समय आक्रमण करे जब वह दुर्गम परिस्थिति में फंसे हों। इस सम्बन्ध में राजपूतों का यह कहना है कि जवाहरसिंह ने नाहर सिंह की पत्नी के समर्पण की माग की थी जिसे महाराजा जयपुर ने इसलिए अस्वीकार कर दिया था क्योंकि महिला को जवाहरसिंह के हाथों दुर्व्यवहार की आशंका थी। बाद में उसने विष खाकर अपनी इहलीला समाप्त कर ली ताकि उसके संरक्षक पर उसके कारण कोई विपत्ति न आ पडे। वीर [illegible] जिसकी देशभक्ति ने जाट के अतिथि सत्कार की कृतज्ञता पर विजय प्राप्त कर ली थी अब जयपुर की सेना में शामिल हो गया तथा उसने अपने देश के सम्मान की रक्षा के लिए युद्ध किया फादर वेंडल के निष्पक्ष वर्णन से बढकर इस घटना का कोई दूसरा प्रामाणिक वर्णन नहीं मिलता जिसे उसने उसके घटित होने के बारह महीनों के भीतर उसे लिख दिया था।

बहुत वर्षों से जाटों का जयपुर के राजा के साथ डीग के पास भूमि के एक छोटे से टुकडे पर झगडा था जहां उनके बीच वैसी ही गलतफहमियां थीं जो आमतौर पर विभिन्न प्रदेशों के सीमा तट के सम्बन्ध में उत्पन्न हो जाती हैं। अन्त में एक खुली फूट के फलस्वरूप जो अवश्यम्भावी हो गई थी मामला इस सीमा तक पहुंच गया कि उसके कष्टप्रद परिणाम सामने आने लगे। यह मामला ऐसा लगता था कि समझौते से तय हो जाएगा। परन्तु जवाहर सिंह को अपनी सेना तथा अपनी दौलत पर घमण्ड था तथा वह अपनी अभी तक की विजयों के गर्व के कारण संयम और धैर्य की सीमा के अतिक्रमण पर पहुंच चुका था। फलतः उसने अन्य राजाओं के साथ गर्वपूर्ण आचरण करना बन्द नहीं किया उसका आचरण एक प्रकार से धृष्टतापूर्ण भी था जिसका न तो कोई औचित्य था और न [illegible] [illegible] की सीमा [illegible] [illegible] वह अजमेर के निकट मारवाड प्रदेश में पुष्कर झील का तीर्थ-यात्रा पर तथा

वहा के राठौर राजा से जिसके साथ उसने सीमित मंत्री आरम्भ कर दी था, भटकरे। इस उद्देश्य से इसके बाद उसने अपनी समस्त सेनाओ को एकत्रित किया जिसकी कोई आवश्यकता नही थी ऐसा करने मे उसका प्रयोजन केवल दिखावा करना था। वस्तुत लोगो ने उसे एसा न करने का परामर्श भी दिया था। इस प्रकार अपने देश मे बाहर ७० कोस की यात्रा एक बडी सेना के साथ आरम्भ की एसा लगता था मानो वह समस्त राजपूता के विरुद्ध युद्ध करने तथा उनके प्रदेशा को जीतने के लिए जा रहा था। (फ्रेंच हस्तलिपि पृ० ६७)

ध्वज लहरात हुए और ढोल पीटत हुए जाटों ने गर्व के साथ आमेर की धरती पर अपने चरण रखे तथा राजपूत प्रदेश को बडी क्षति पहुचाते हुए विजय उल्लास के साथ पवित्र झील की ओर आगे बढे। क्षणिक विस्मय की भावना ने कछवाहा के मस्तिष्क को अभिभूत कर लिया, परन्तु मानसिंह और मिर्जा राजा जयसिंह का उत्तराधिकारी लम्बे समय तक शत्रु के अवज्ञाकारी तुरही-नाद को सहन नही कर सकता था। आमेर राज्य का समूचा कृषक और सामन्त उसके सम्मान की रक्षा के लिए अपने पैरो पर खडा हो गया। महाराजा माधोसिंह जिसका गर्म सिसौदिया रक्त वृद्धावस्था और दुर्भाग्य से ठण्डा हो चुका था, उस उसके सामन्त सरदारो ने अपने सम्मान की रक्षा हेतु खडे होने के लिए प्रेरित किया। उन्होने उससे क्रोध और दुख के साथ कहा क्या आप उस व्यक्ति के द्वारा अपमान बरदाश्त करेंगे जिसके पिता और पितामह आपके परिवार के आसामी रहे हैं और जो आपके पूर्वजो के सामने हाथ जोडकर खडे हुआ करते थे। राजा ने उत्तर दिया किसी भी प्रकार नहीं जब तक पृथ्वी पर कछवाहा का बीज रहेगा।' आमेर मे सब पर कर लगाने का आदेश दिया गया। दलेल सिंह तथा अन्य राजपूत सरदारो ने २०,००० अश्व सनिकों तथा उतने ही पदल सनिको के साथ उस सडक को घेर लिया, जिस पर होकर जवाहर को वापस लौटना था।

राजा जवाहर सिंह पवित्र झील पर पहुच चुका था तथा वहा अपना प्रक्षालन समाप्त करके वह कुछ दिन के लिए वहा रुका तथा राजा विजय सिंह राठौर के साथ जो उससे वहा मिला था उसने पगडिया का विनिमय करके, उसके साथ अपनी मंत्री को सुदृढ बनाया राजपूत उसके प्रत्यावर्तन पर निगरानी रखे हुए थ परन्तु चकि उसकी सना बडी और शक्तिशाली थी उन्होंने उसके साथ जमकर युद्ध नही किया। जवाहरसिंह ने सीधे माग पर न चलकर जयपुर से ३० मील उत्तर मे स्थित तोदनावती के पहाडी माग से अपना माग बनाने का निश्चय किया। राव राजा प्रताप सिंह जो कई वर्षों तक भरतपुर मे शरणार्थी बनकर रहा था, अब जवाहर सिंह का साथ छोडकर जयपुर की सना मे शामिल हो गया। उसने यह परामर्श दिया कि जाट सना पर उस समय आक्रमण किया जाये जब वह तग रास्ते से होकर गुजर रही हो। १४ दिसम्बर १७६७ को मोण्डा का सुप्रसिद्ध युद्ध लड़ा

जवाहरसिंह की मृत्यु

पराजयो को भी राजा जवाहरसिंह के दृष्टिकोण को सयमित बनाने म कोई सफलता नही मिली। सघष उनकी सासो म था और उसकी अनुपस्थिति म उनके लिए जीवन मे कोई आकषण नही था। माधोसिंह की तरफ स यदि युद्ध का अन्त हो गया तो वह दूसरी तरफ आरम्भ हो गया। जाट राजा ने मडेक को एक-दूसरे किले को घेरने के लिए भेजा जहा एक दूसरी राजपूत जाति क लोगो का अधिकार था। डेढ महीने म मडेक को एक बुज तक पहुचने म सफलता मिल गई परन्तु वह उस इसलिए छोडनी पडी क्योकि भारतीय सनिक दुग क रक्षकों की भयकर गोलाबारी से बहुत अधिक डर गये थ। वह दूसरे आक्रमण के लिए उसके पास डटा रहा। भय से गैरीजन ने अन्त म आत्म-समपण कर दिया। (ला नवाब रेने मडक, पृ० ५०)।

राजा जवाहरसिंह की अथक शक्ति एव दुदम्य इच्छा क उज्ज्वल स्वरूप की अभिव्यक्ति जितनी चमक दमक के साथ राजपूताना म उसकी पराजय क ६ या ७ महीना के भीतर हुई उतनी कभी नही हुई थी। उसने बडी तजी के साथ एक कठिन परिस्थिति पर काबू पा लिया तथा उस सामान्य बना लिया था। हाल की पराजय स उस बहुत कम क्षति पहुची थी और वह पुन अपने बलबूते पर खडे हो गए थे। उनकी भुजाओ म उनकी अभ्यस्त चमक फिर स लौट रही थी तथा उनके द्वारा शासित प्रदेशो म पुन सम्पन्नता का प्रत्यावतन हो रहा था। वह बड जोश के साथ अपनी सेना को पुनगठित भी करने लग थ विशेषत उन्होंने उसमे यूरोपियन सनिको और तोपखाने म वृद्धि की। उसकी सत्ता उसके प्रदेश म फिर स कायम हो गई तथा उसके नाम का लोग आदर करने लगे। प्रदेश स बाहर लोग उसके नाम स डरते थे। उनके पडोसी उनके क्रोध के तूफानी विस्फोट की आशका स भयभीत थ उनके भाग्य स किस्मत के हाथों ने इस अविस्फोटित ज्वालामुखी को खामोश कर दिया।

राजा जवाहरसिंह की अल्पमृत्यु (जुलाई १७६८) की कहानी निम्न प्रकार है यह कहा जाता है कि जवाहरसिंह की एक सिपाही स मित्रता हो गई थी और यह मित्री इतनी गहरी हो गई थी कि वह समीचीन मीमांसा का उल्लघन करके उसे सम्मान और आदर देने लगा था तथा उसने उस निम्न श्रेणी स उठाकर उच्च श्रेणी मे बैठा दिया था। राजा के साथ मित्री सम्बन्धों ने उसे अन्य दरबारियो की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ बना दिया। इत्तिफाक स इस आदमी क द्वारा कुछ गलत काम हो गये तथा जवाहरसिंह ने उसका निजी स्थान यथा—शयनागृह मे न आने की मनाही कर दी उसका इन कामो के लिए उसने लज्जित एव अपमानित किया तथा उसे अपनी एव आम लोगों की दृष्टि म तिरस्कार के योग्य बना दिया। इस आदमी म जब आत्म-सम्मान की भावना जागी तो उसने किसी भी

जवाहर्रसिह् की हत्या करन की बात सोची। एक दिन जवाहरसिह एक छोटे स दल के साथ शिकार के लिए गया। इस सिपाही न उस अवसर पर एक घोडा लिया तथा तलवार और ढाल लेकर वह उस स्थान पर पहुचा जहा जवाहर्रसिह कुछ व्यक्तियो के साथ असावधानी के साथ खडा था। वहा उसन जवाहर्रसिह पर आक्रमण करके नीचे गिरा दिया और चिल्लाकर यह कहा 'यह मुझ अपमानित और दडित करने का दड है। यह घटना ११८२ हि० सफर (जून जुलाई १७६८)" के महीने म घटी।

फ्राउज द्वारा लिपिबद्ध लोक कथाओ म जवाहर्रसिह की हत्या के लिए उसक शत्रु जयपुर के महाराज माधोसिह की उत्तजना को उत्तरदायी ठहराया गया है। (मथुरा २५) जयपुर के राजा के साथ झगडे के आठ महीनों के भीतर जवाहर्रसिह की आकस्मिक मृत्यु न जिसन निस्सदेह जयपुर नरश को लाभ पहुचाया था सम्भवत इस अन्याय पूण मिथ्यावाद को रच दिया ह परन्तु इसम कोई सचाई नहीं है। जहा तक जवाहर्रसिह की हत्या का बात है सियार " क लखक न लिखा है। उसने सदा नामक एक चोबदार को सरदारा क समूच निकाय के ऊपर सर्वाधिक सत्ता प्रदान कर रखी थी और इसके कारण सभी सरदार अत्यधिक पीडित थ—उन्होन एक का जवाहर्रसिह की हत्या के लिए उकसाया। अपन पिता क सिंहासन पर आरूढ होने क कुछ समय बाद उसकी धोखे से हत्या कर दी गई। (फारसी पाठ सियार IV पृ० ३४) एम० मडेक ने जो जवाहर्रसिह की मत्यु क समय उसका सवा म था इस सम्बन्ध मे किसी पर दोषारोपण नहीं किया है उसने क्वल यह लिखा है कि एक अज्ञात व्यक्ति ने तलवार के एक प्रहार स उसका सिर कलम करके उसका हत्या कर दी। (ला नवाब रेन मैडेक पृ० ४०)।

राजा जवाहर्रसिह का चरित्र और नीति

राजा जवाहरसिह म न तो अपने पिता के सनिक गुणों का अभाव था और न उनकी प्रशासकीय क्षमता का। स्पष्ट रूप स वह युद्ध के खेल म बहुत अधिक व्यस्त था, परन्तु नागरिक प्रशासन की ओर उसन कभी लापरवाही नही बरती और न वह कभी शान्तिकालीन कलाओ की अभिवृद्धि के सन्दर्भ म उदासीन रहा। उसका दरबार वभवपूण और शानदार था एक सनिक के पराक्रम एक वास्तुकार की कला तथा एक देशी चारण की चाटुकारितापूर्ण वीणा के लिए हिन्दुस्तान म उससे अच्छा कोई दूसरा स्थान नहीं था। वह अपन सनिको को अपने पिता की अपेक्षा अधिक नियमित रूप स तथा अधिक उदारता के साथ वेतन देता था तथा ऐसा कभी कोई अवसर नहीं आया जब उसने अच्छी सेवाओ के बदले म अच्छा पुरस्कार न दिया हो। "उसकी वित्तीय व्यवस्था ठीक थी तथा उसकी प्रजा पर

देश के अन्य प्रदेशों की अपेक्षा करों का भार सबसे कम था तथा उसके राजनीतिक विचार यूरोपियन सेनापति को बहुत अधिक बुद्धिमतापूर्ण प्रतीत होते थे (लॉ नवाब रेने मैडेक पृ० ५१) उसने उत्तराधिकार मे उपद्रवी तथा बागी सेनापतियों का मुण्ड नहीं छोड़ा था जिस सेना को अपने उत्तराधिकारी के लिए छोड़ा था वह संख्या में बहुत बड़ी थी तथा वह पूर्णतः अनुशासित थी, जिसे निष्ठावान अधिकारियों का नेतृत्व प्राप्त था और जिन्होंने निष्ठा के साथ उसके घिनौने एवं कामुक उत्तराधिकारी के आदेशों का भी पालन किया। उसकी दया के ही कारण उसके छोटे भाइयों को जीवन दान प्राप्त हो सका यद्यपि उसे पता था कि वे उसके गोद लिये हुए नाबालिग पुत्र के भाग्य में काटे की ही भूमिका अदा करेंगे। कभी-कभी यह उदारता की इस सीमा तक पहुंच जाता था कि वह अपने सबसे प्रबल शत्रु को भी क्षमा कर देता था जैसा कि उसने अपने भतीजे के जन्म के अवसर पर बहादुर सिंह तथा नवाब मुसावी खां बलोच जैसे खतरनाक, राजनीतिक बन्दियों को रिहा करके किया था। मित्र उसे ऐसे शूरवीर के रूप मे याद करते थे जो बहादुर वैभवपूर्ण और खुले हाथ वाला था तथा शत्रुओं के लिए उसकी छवि स्वेच्छाचारी, जिद्दी, संकीर्ण कट्टरतावादी तथा रक्त पिपासु अत्याचारी शासक के रूप में कायम थी—भारत के राजनीतिक क्षितिज पर उसकी स्थिति एक पुच्छल तारे के समान थी।

अपने पिता से सर्वथा भिन्न राजा जवाहरसिंह को अपने क्रोध पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं था प्राचीनता तथा परम्परा के लिए कोई आदर भाव नहीं था और न उसमे हृदय की उदारता थी। जो भी हो परम्परा के अनुसार जो निस्सदेह पूर्वाग्रहों में ग्रसित है, उसका नाम मुगल-साम्राज्य के शाही वैभव के अवशेषों को खत्म करने के साथ जुड़ा हुआ है। यह कहा जाता है कि वह सम्राट जहांगीर के काले संगमरमर के सिंहासन पर बैठ गया—ऐसा करके उसने महान् मुगल के गर्वित स्थान को अपवित्र कर दिया जिससे चिढ़कर ऐसा प्रतीत होता है उस सिंहासन मे एक दरार पड़ गई जिसे आज भी देखा जा सकता है। सम्भवतः जवाहरसिंह के शासन काल मे ही जो जाट राजाओं में सबसे अधिक शक्तिशाली और बदला लेने वाला था आगरा की महान् मस्जिद को बाजार में बदल दिया गया था तथा अनाज के व्यापारियो से कहा गया था कि वे अपने माल को वहां लोगों को दिखाकर बेचें। कसाइयो की दुकानें बन्द कर दी गई। उन्होंने (जाटों ने) बैलों गायो और बछडो की हत्या पर कड़े प्रतिबन्ध लगा दिए। इस्लाम धर्म की सभी सार्वजनिक अभिव्यक्तियों पर निषेधादेश लगा दिए गए थे जिसके उल्लंघन पर कड़े दंड की व्यवस्था थी। मुअज्जिनों से कहा गया था कि वह अपना काम बन्द कर दें। एक व्यक्ति ने 'अजान' दी परन्तु आगरा के शासक ने उसकी जिह्वा निकलवा दी।" यह ठीक है कि बदला लेना मानव प्रकृति मे निहित है

महाराज सूरजमल के पुत्र के लिए ऐसा करना निस्सदेह प्रशसनीय था, उसके पिता ने एक मुस्लिम शरणार्थी—शमशेर बहादुर की अस्थियो का डीग मे उनके ऊपर मस्जिद का निर्माण कराकर सम्मान किया था। (इमाद, पृ० २०३)।

जवाहरसिंह ने एक जातीय परिसघ को एक केन्द्रीकृत राज्य म समय म पहले ही तथा बहुत अधिक हिंसात्मक तरीके से बदल दिया तथा भाड के सनिकों की सहायता स अपने को एक निरकुश राजा बना लिया। उसने राज्य और उसमे रहने वाले लोगों को निर्जीव कर दिया। राज्य अपने आप विकास नही कर सकता था तथा उसके निवासी अपनी जीवन शक्ति और पराक्रम को भाड के सनिकों द्वारा दबाए जाने तथा द्वितीय श्रेणी के प्रजाजन बन जाने के कारण खो चुके थे। राजा सूरजमल ने एक एसी सरचना का निर्माण किया था जो उसके लोगों की राजनीतिक भावना और परम्परा का ईमानदारी के साथ प्रतिबिम्बित करती थी। परन्तु जवाहरसिंह की दृष्टि म वह अत्यधिक प्राचीन थी उसम शान शौकत का अभाव था उसम सहानुभूति और सुसगतता की कमी थी वह एक राजा के लिए अनुपयुक्त थी भले ही वह एक जाट के लिए आरामदेह हो सकती थी। जिस प्रकार अपने सामाजिक जीवन म जवाहरसिंह न अपने जीवन को उस समय के राजकुमारो तथा अमीरो मे प्रचलित फशन के अनुसार ढाला था तथा अपने पिता के सादा जीवन के आदर्श को ठुकराया था उसी प्रकार राजनीति में भी वह साम्राज्यवादी दिल्ली के वातावरण म ही सास लेना पसन्द करता था। लोग भी एक बडी सीमा तक राजा के फशनों की नकल करने लगे तथा अब कोई भी डीग कुम्हेर और भरतपुर के निकट दिल्ली का (वहा की बुराइयों मुहावरो तथा शिष्टाचार) अवलोकन कर सकता था जसे आज हमारे कुछ देशवासी बम्बई और कलकत्ता मे लन्दन को अवलोकित करते हैं। इन स्थानों पर नय समाज की स्थापना के उपरान्त जाटों" म रीति रिवाज पोशाक इमारतों भाषा तथा सामान्यत सभी बातो म बदलाव आ गया। जवाहरसिंह जब अपने सामन्ती परिसघ को युगल शासनतत्र जसे केन्द्रीकृत एव निरकुश शासन मे परिवर्तित कर रहा था उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि वह समय के अनुकूल ही काय कर रहा था। परन्तु जिस प्रकार वह अपने घर का स्वामी बनन के लिए उतावला था उसी प्रकार का उतावलापन सभी जाटों मे देखा जा सकता है। उन्हे निरकुश शासन पसन्द नही है तथा वाह्य परिष्कार के बावजूद उसका अन्तर-मन वसा ही रहता है। व्यावहारिक समझौता किए बिना उसने अपनी दुदम्य इच्छा का विरोध करने वाले सभी शक्तिशाली तत्त्वो को अपने माग से दूर कर दिया और इस प्रकार उसने पर्याप्त मात्रा म राष्ट्रीय ऊर्जा एव काय कुशलता को नष्ट कर दिया। यदि जाटो का प्राचीन यादवो का वशज माना जाए तो कस न (श्री कृष्ण का मामा जिसने भाडे के सनिको की सहायता से यादव परिसघ पर निरकुश शासन स्थापित किया

था तथा अपने ही बन्धुओं का दमन किया था) तो महाराज सवाई जवाहरसिंह भारतेन्दु के रूप म उनके बीच फिर से जन्म लिया था।

सदभ

१ गोहद ग्वालियर के उत्तर-पश्चिम मे स्थित है। यह राज्य पश्चिम म ग्वालियर के राज्य से मर्यादित था इसक पूव म काली सिन्धु नदी है उत्तर म यमुना है और दक्षिण म सिरमूर की पहाड़िया हैं।

२ इमाद-उस-सादात एकमात्र फारसी इतिहास है। (फारसी पाठ पृ० ५६) जिसम जहर खाकर 'अच्छे स्वभाव क नाहर सिंह की मत्यु का उल्लेख है। १० दिसम्बर १७६६ को जयपुर स यह सदेश प्राप्त हुआ कि नाहर सिंह अपनी कुछ अव्यवस्था के कारण मृत्यु को प्राप्त हो चुका है। महाराजा जवाहर सिंह को इस समाचार स अत्यन्त कष्ट हुआ। जो अधिकारी नाहर सिंह की अश्व सेना म थे वे जवाहर सिंह के पास यह परामश लेने आए कि अवसर पर क्या होना उचित है। फारसी रिकाड ६ मृत्यु शायद ६ या ७ दिसम्बर १७६६ को हुई।

३ चहार के लेखक हरचरनदास ने इसकी तिथि के सम्बन्ध म कुछ भ्रान्ति पैदा की है, उसने तिथि ११७९ हि० बताई है जबकि सही तिथि ११८० हि० है। उससे जवाहरसिंह को जो राशि प्राप्त हुइ उसका अनुमान दो करोड रुपये से भी अधिक आका है जबकि वेन्डल का अनुमान ३० लाख रुपया है जो अधिक सही प्रतीत होता है। इसके बावजूद हरचरन का वतात बड़ी सीमा तक सही है तथा वेन्डल के वृतात स उसकी पुष्टि होती है। (फ्रेंच हस्तलिपि पृ० ६६)

४ अटट ग्वालियर के उत्तर-पूव म तथा गोहद के उत्तर म स्थित है। भात की पहचान करना कठिन है। यह सम्भवत वही स्थान है जो रेनेल की एटलस म भिण्ड के नाम से उल्लिखित है, वह अटेट के निकट उसके दक्षिण-पूव मे है। इस राजा का प्रदेश चम्बल और काली सिन्धु नदिया के बीच म उनके जमुना के सगम के निकट स्थित है।

५ बगाल सरकार और वजीर के बीच के पत्र-व्यवहार से यह स्पष्ट हो जाता है कि अंग्रेज राजा जवाहर सिंह को अपनी ओर मिलाने के लिए कितने इच्छुक थे। (पत्र सख्या २०१ २३४ २५५ फारसी पत्र व्यवहार II प० ६९ ७७) इतनी ताजा बनी हुई नही और न किसी अन्य घटना के बारे म इतने राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों से तोड़ी-मरोड़ी गई है जितना कि वह घटना जिसका सम्बन्ध राजा जवाहर सिंह का पुष्कर की यात्रा क समय जयपर नरेश राजा माधो सिंह की

सीमाओं म होकर जाने मोगा के युद्ध और जवाहर सिंह के अपमानजनक स्थिति म लौटकर आने से है।

६ महाराजा सवाई ईश्वरी सिंह (हिन्दी म) लेखक नरेन्द्र वर्मा परिशिष्ट, ।।। वदिक प्रेस अजमेर।

७ इसका सकेत डीग स १५ मील उत्तर-पश्चिम म स्थित कामा की ओर है। लम्बे समय स कामा इन दोनो राज्यो के बीच झगडे का कारण रहा है। राजा रणजीत सिंह जाट को यह स्थान महारानी सिंधिया से प्राप्त हुआ था और उसी समय स उस पर भरतपुर के राजाओ का अधिकार रहा है।

८ जवाहरसिंह के पास योग्य योरोपीय सनापतियो के नतत्व म बहुत बडी तथा सुप्रशिक्षित सेना थी। सन् १७६५ म समरू उसकी सेवा म था और प्रसिद्ध फ्रेंच जनरल एम० रेन मडक सन् १७६७ की जून अथवा जुलाई म उसकी सेवा म आ गया था (ला नवाब रेने मडेक पृ० ४५) राजा के मस्तिष्क की अधीरता न अपनी सेना की परीक्षा के लिए कछवाहा की दिशा मे साहसिक प्रयास को ही सुअवसर मान लिया।

९ चहर-गुलजारे शुजाई का लखक हरचरन दास जवाहरसिंह की सेना का अतिशयोक्ति स भरा अनुमान दता है—६० ००० घोडे एक लाख पैदल सेना और दो सौ तोपें।

१० वेंडेल ने पराजितो की दुदशा का इस प्रकार वणन किया है— जाटो की किस्मत की चूलें हिल गयी और उसका परिणाम उनके लिए पूणत घातक सिद्ध हुआ। वे वापस लुटे-लुटाये मुख बने और तबाही की स्थिति में लौटे और जवाहर सिंह को वहा अपना समूचा तोपखाना (विभिन्न प्रकार की सत्तर तोपें) छोडनी पडी। (फ्रेंच हस्तलिपि ६८) बूदी के चारण सूरजमल ने इस घटना का इस प्रकार वणन किया है।

"तावत छत्र अरु ताप कोस छुट्टे कछवाहन।
भरतनेर गए जट्ट मारवाय सिपाहन।।
जित्ते कुरम जोध नाग जट्टन गिनि नाहन।
समरू बेहुन जु सगजाय पकरेंहि जवाहर।।
संस्कृत भुजग ससिमान सक १८२४ हम तक यह जग हुए।
जयनेर विजय जट्टन भज नमइ विदित आव्रज भुव।

कछवाहों ने राजत्व की धरती बन्दूकों तथा खजानो पर अधिकार कर लिया। अपने सनिको को मरवाकर जाट भरतपुर भाग गया। जिस प्रकार जानवरों का राजा हाथी को अपने शिकार के रूप म देखता है उसी प्रकार कछवाहों ने जाटों को दखा। यदि समरू उसक साथ न होता तो जवाहर को

बन्दी बना लिया जाता। युद्ध १८२४ विक्रमी मे हुआ। जयपुर नरेश की विजय तथा जाटों की पराजय का समाचार ब्रज भूमि की सुदूरस्थ सीमा तक पहुच गया।

११ बहार गुलजार (हस्तलिपि) यह तिथि यद्यपि बहुत निश्चित नही है तथापि निससदेह सही है। सम्राट द्वारा बगाल के गवनर को लिखे गय पत्र दिनाक 27 अगस्त १७६८ स पता चलता है कि यह घटना इस तिथि के पूव घट चुकी थी। (फारसी पत्राचार II पृ० २०६)

१२ डान पेड्रो डी सिल्वा न ७ सितम्बर १८६८ को बगाल के गवर्नर को जवाहरसिंह की मृत्यु तथा रतनसिंह के राज्यारोहण की सूचना दी थी। (उपयुक्त पृ० ३०४)

१३ 'सियार' के अनुवादक न इस बात को इस प्रकार प्रस्तुत किया है, उसने अपने हैदर नामक एक चोवदार को अपन मामलो तथा सेना की देख रेख के लिए नियुक्त किया इसके कारण उस अपने सनिकों की सहानुभूति म वचित होना पडा तथा इसमे उसके मनापतियो को इतना कष्ट पहुचा कि उनमे से एक ने उसकी हत्या करन का निणय ले लिया। इस यक्ति ने अनुकूल अवसर पाकर उस उसकी मसनद पर ही मार दिया। (अग्रेजी अनुवाद IV, पृ० ३४) सदा सम्भवत सबसे अधिक सही पाठ है क्योकि बयान ए-वाकया के लेखक अब्दुल करीम काश्मीरी न लिखा है जवाहरसिंह की हत्या एक पीडित ब्राह्मण न की थी। (हस्तलिपि पृ० ३०२) परन्तु यह सभव है कि अनुवादक मुस्तफा ने केवल एक हस्तलिपि प्रयुक्त की हो और उसन अनजान सदा' नाम के स्थान पर 'हैदर' नाम पसन्द कर लिया हो। परन्तु उसे मूल पाठ के प्रति निष्ठावान न होने के अपराध के लिए क्षमा नही किया जा सकता। जो लोग अनुवादों में पूण आस्था रखते हैं उन्हें इससे चेतावनी लेनी चाहिए।

१४ लॉ नवाब रेने मडेक ४७ एम० मडेक न लिखा है 'कुछ वष पूव मैंने उस अभागे व्यक्ति को देखा जो भीख माग रहा था। उसके पास आगरा की बडी मस्जिद के मुल्लाओं का एक पत्र था जिसमे इस बात को प्रमाणित किया गया था कि इस व्यक्ति क साथ अपने धार्मिक कृत्य को सम्पादित करने के आरोप पर मूर्ति-पूजकों ने इतनी निदयता के साथ व्यवहार किया था।

यह बात सन्देहास्पद है कि अजनबी के विश्वास के साथ कोई धोखा न किया गया हो जसा आज भी सामान्य रूप स होता है। एम० मडेक ने जवाहरसिंह का नाम नही लिया है परन्तु लिखा है जब जाट आगरा के स्वामी बन गए।' जवाहरसिंह का जाना-पहचाना व्यक्तित्व इस सकेत स मिलता-जुलता है।

१५ बेंडैल फ्रेंच हस्तलिपि प० ४० ४१। उसने आगे लिखा है कि 'साथ ही यह बात भी स्वीकार करनी पड़गी कि इतने परिष्कार के बावजूद भी उनके शानदार रहन-सहन के वातावरण में भी उनके जन्म जात असांस्कृतिक रूप को देखा जा सकता था।' (उपयुक्त पृ० ४१)।

बारहवां अध्याय

गृह-युद्ध

जाट राजा रतनसिंह (११८२ हि० मई १७६८-अप्रैल १७६६

राजा जवाहरसिंह की मृत्यु के साथ जाटों के गौरव का अन्त हो गया था। अब उसकी जाति को एकता के सूत्र मे बाधने के लिए उसकी लौह पकड का अस्तित्व समाप्त हो गया था, अत उसके राज्य म अस्त-व्यस्तता फैलती गई। उसका छोटा भाई मूख और दुश्चरित्र रतन सिंह उसके बाद गद्दी पर बठा तथा इमाद-उल-सादात के लेखक के अनुसार उसने दस महीने और तेरह दिन शासन किया। उसके शासन के इन थोडे से महीनों म कोई घटना नही घटी तथा यह समूचा समय हेय एव घृणित कार्यों मे व्यतीत हो गया। उसके चारो ओर ४००० नाचने वाली लडकिया होती थी जिनके साथ अपने सिंहासनारोहण के कुछ समय बाद वह बन्दावन गया था (मडेक पृ० ५१) ताकि वह उनके साथ वर्षा ऋतु म रगरलिया मना सके। बृज के दैवी प्रेमी के इस ख्याति प्राप्त वशज ने पौराणिक भूतकाल के सभी दृश्यों का पुन अभिनय किया सम्भवत वह मूल अभिनय की अपेक्षा अधिक चमक-दमक वाला था। वह अपनी राजधानी फिर लौटकर नही आया, उसकी इहलीला का रूपानन्द नामक एक गोसाइ ने वही अन्त कर दिया।

इस तीर्थयात्रा के समय राजा रतनसिंह के लश्कर के साथ फ्रैंच कैप्टन एम० मैडेक भी मौजूद था। वह जमुना पर उसके भव्य उत्सवो तथा उसकी सहायता से बहुत अधिक प्रभावित हुआ था। उसने लिखा है स्त्रिया के प्रति आकषण के अतिरिक्त राजा की एक और दुबलता थी—जादूगरों मायावी लोगो तथा कीमियागरो के प्रति उसे अत्यधिक लगाव था। काफी समय तक एक कीमियागर ने उसे इस भ्रम म बनाये रखा कि वह एक बार सोना बना चुका है। अन्त म राजा ने उस पर सोना बनाने के लिए दबाव डाला और कहा कि यदि उसने ऐसा नही किया तो उसे अपने प्राणो से हाथ धोने पडेंगे। धोखेबाज ने प्रतिज्ञा की कि वह उसे उसके

सामने बनाएगा बशर्ते यह वहां अविवकी लोगों स दूर अकेले म उनमें मिले। जब राजा ने इसके लिए अपनी स्वीकृति दे दी तो जादूगर न अपना कटार निकालकर अपने स्वामी का पेट फाड दिया।[1] मरने स पूव राजा ने राज्य के सबसे बड सरदार को बुलाया और उसके सामने अपने नाबालिग पुत्र को प्रस्तुत किया (मैंडक पृ० ५१) अब्दुल करीम काश्मीरी ने भी बयान ओ-वाका म इस घटना का इसी प्रकार का वणन किया है राजा रतनसिंह उसके पास गया और उससे जोर देकर यह कहा 'यदि तुमने सोने का नमूना न बनाया तो मैं तुम्हें मार दूगा। दरवेश ने कहा नमूना तयार है उसे रात्रि क आखिरी पहर म दिखाया जाएगा। उत्सुकता और उतावलेपन के कारण राजा रात भर जागता रहा। बरागी ने सन्देश भेजा कि राजा बिलकुल अकेला रहे और वह नमूना ला रहा है। रतनसिंह न अपने सेवकों को बाहर जाने का तथा बरागी को भेजने का आदेश दिया। जब वह अकेला था बरागी ने कटार के एक वार से उसकी जीवन लीला समाप्त कर दी। (बयान हस्तलिपि पृ० ३०२) हरचरन का ब्यौरा कुछ भ्रम पदा करता है परन्तु उसने जो घटना की तिथि बतायी है वह सही है यानी पहली जिहिज्जा ११८२ हि० (८ अप्रल १७६६) जिसकी पुष्टि उससे भी अधिक प्रामाणिक पुस्तक वाका-ए शाह आलम II (वाका २२५) में हुई है।

रीजेन्सी तथा गृहयुद्ध

राजा रतनसिंह की वृन्दावन म आकस्मिक मृत्यु के उपरान्त दान साही ने जिसे बालक उत्तराधिकारी का दायित्व सौंपा गया था डीग म सरदारो का एक सम्मेलन आयोजित किया। बालक केरी सिंह को मसनद पर बिठाया गया तथा दान साही ने सरदारों की स्वीकृति से रीजेन्सी की जिम्मदारी सम्भाल ली। परन्तु जसे ही वे अपने-अपने प्रान्तो मे पहुचे उन्होंने रीजेन्ट की सत्ता को स्वीकार करन स इकार कर दिया क्योंकि उनकी समझ थी कि उन्हें भी शासन करन का उतना ही अधिकार है जितना उसे। जब एम० मैंडेक जो रीजेन्ट दानसाही को अपना समथन दे रहा था प्रान्तो म विरोध का दमन करने के लिए डीग से बाहर गया हुआ था तब दो भाइयो ने विद्रोह करके रीजेन्सी का तख्ता पलट दिया। परन्तु रीजेन्ट बनने के लिए उनम भी झगडा हो गया। नवलसिंह का जो आयु म बडा था यह कहना था कि ज्येष्ठ होने के नाते रीजेन्ट उसी को बनना चाहिए परन्तु छोटा भाई इसका निणय तलवार के द्वारा कराना चाहता था। उपद्रवी सामन्तो ने जो अपनी स्वतन्त्रता को प्राप्त करना चाहते थे अपने अपने गुट बना लिए तथा गृह-युद्ध की चिनगारियो को भडकाने लगे (१७७० ई० का आरम्भ)। लघु भ्राता रणजीतसिंह ने जब यह देखा कि वह अपने बड भाई का मुकाबला करन म असमथ है तो उसने

अपने परिवार के साथ गद्दारी करके सिखो से अपने भाई का दमन करने के लिए सहायता खरीद ली।

एम० मडक ने बड भाई का साथ दिया और उसने रणजीतसिंह के विरुद्ध जिसने कुम्हेर के किले मे अपने को बन्द कर रखा था एक सेना का नतत्व किया। उसने उसका घेरा उस समय डाला जब रणजीतसिंह द्वारा आमन्त्रित ७० ००० सिख उसकी सहायता के लिए आ चुके थ (मडक, पृ० ५२)। उसन सिखो का मुकाबला करने के लिए घेरा उठा लिया। एक दिन प्रात काल मडक ८०० सनिको, दो बन्दूको के साथ हाथी पर चढकर शत्रु की स्थिति का पता लगाने के लिए गया तथा असावधानी से वह बहुत आगे निकल गया। उसे सिखो ने घेर लिया (उपयुक्त पृ० ५२) तथा उसकी रक्षा जाट कुमुक के पहुचने के कारण ही हो सकी। नवलसिंह ने सिखो को परास्त किया (फारसी पत्राचार III पृ० ४३) परन्तु मराठाओ के आगमन की आशका के कारण उसने सिखो को बडी रकम देकर खरीद लिया। सिख गद्दार को अपने भाग्य पर छोडकर अपने देश को वापस चले गए। (मार्च १७७०)

गृह-युद्ध मे मराठा हस्तक्षेप

पानीपत की तीसरी लडाई के एक दशक के भीतर मराठा उस महान् दुर्घटना के आघात से सभल चुके थे। परन्तु उससे उन्होने कुछ सीखा नही था फलत वे पहले की अपेक्षा कुछ अधिक बुद्धिमान हो गए थे ऐसा नही माना जा सका। १७६९ के अन्त मे विसाजी पडित रामचन्द्र गणेश तुकोजी होल्कर महादाजी सिन्धिया तथा अन्य लोगो ने एक बडी सेना के साथ हिन्दुस्तान मे अपने प्रभुत्व को दुबारा जमाने के उद्देश्य से नमदा नदी को पार किया। अपने पूवजो की ही भाति इन सरदारों की क्षमता और उत्साह गोहद के राणा को परेशान करने तथा दुबल राजपूत शासको को दुखी करने मे अधिक प्रयुक्त हो रही थी अपने से अधिक शक्तिशाली प्रतिपक्षियो से युद्ध करने मे नही। हिन्दुस्तान के युद्ध रत लोगो तथा राजाओ के बीच शक्तिशाली शान्ति निर्माता की श्रेष्ठ भूमिका अदा करने की बजाए उन्होने अनिष्टकारियो विश्वासघात एव सघष को भडकाने वालो की भूमिका अदा की। जब सूरजमल के पुत्र रीजेन्सी पर अपने दावो के लिए तलवार की सहायता से युद्ध कर रहे थे, मराठा करौली मे बैठकर जहा से वे जयपुर नरेश के विरुद्ध अपनी कायवाही का सचालन करते थे बड सतोष के साथ इस सघष को देख रहे थे। जब बडा और वैध दावेदार नवलसिंह अपने छोटे भाई रणजीत को परास्त करके तथा सिखो को प्रसन्न करके गृह-युद्ध को समापन के पास ले आया था मराठाओ ने जाट प्रदेश मे प्रवेश किया भरतपुर के आस पास के इलाके को लूटना आरम्भ कर दिया तथा छोटे भाई रणजीत को युद्ध फिर से आरम्भ करने के

लिए उकसाया (मार्च १७७० का मध्य)। वे इस प्रकार कार्य कर रहे थे जैसे इस बार महाराष्ट्र ने उन्हें अपने पुत्रों की हत्या और पुत्रियों के अपमान का प्रतिकार करने के लिए नहीं परन्तु उन लोगों को नष्ट करने के लिए भेजा था जिन्होंने उसके भागते हुए बच्चों को बचाने तथा उनके कष्ट को कम करने के लिए अपना सब कुछ दाव पर लगा दिया था। उन्होंने नजीब-उद-दौला को जो उनके दुर्भाग्य एव लज्जा का निर्माता था जाटो का हमेशा के लिए दमन करने के लिए आमन्त्रित किया। रुहेला सरदार जिसने महाराजा जवाहर सिंह तथा उसके मित्र सिखों के भय से भागकर नजीबाबाद के सुरक्षित स्थान में शरण ली थी इस अवसर का लाभ उठाकर एक काटे से दूसरे काटे को निकालने की योजना बनाई तथा वह एक शक्तिशाली सेना के साथ दोआब मे सिकन्दराबाद तक पहुच गया। भगोड़ मराठा ब्राह्मणो को दूध एव मिठाई खिलाकर रानी किशोरी ने जो पुण्य अर्जित किया था उसका प्रतिफल शीघ्र प्राप्त हो गया।

मराठाओ ने जाट प्रदेश के एक बड़े भाग में लूटमार की तथा उन्होंने सब स्थानो पर रणजीतसिंह के नाम पर अधिकारियों की नियुक्ति कर दी। नवलसिंह की सेना से समरू और एम० मडक के नेतृत्व मे गठित सेना की उपस्थित के कारण खुलकर टक्कर लेने से कतराकर मराठाओ ने डीग से १३ मील की दूरी पर स्थित कुम्हेर के किले पर ही अपनी समूची शक्ति केन्द्रित कर दी। नवलसिंह ने जो डीग के कस्बे से कुछ दूरी पर था शत्रु को उससे टक्कर लेने के लिए असफल प्रयास किया। ६वी जिहिज्जा (५ अप्रल १७७०) को उसने मराठाओ को एक चुनौती भेजी कि वे किले की दीवाल के सहारे ली हुई अपनी स्थिति को छोडकर युद्ध करने के लिए सामने आए। मध्याह्न में उसे यह समाचार प्राप्त हुआ कि तुकोजी हाल्कर तथा जयराम नजीब-उद-दौला से मिलने के लिए चल पड़े हैं। तीसरे पहर खेमो को बढ़ने के आदेश दे दिए गए डीग से ६ कोस दूर गोवर्धन में सामान पहले से भेज दिया गया तथा नवलसिंह ने अपनी सेना के साथ उसी दिशा में प्रस्थान किया। यह निर्णय एकदम अचानक लिया गया था मुश्किल से कोई रिसाला उसके लिए तयारी की स्थिति में था तथा अनेक सनिको को अपनी आवश्यकता की वस्तुओ को लेने के लिए डीग जाना पड़ा।

डीग और कुम्हेर से दो समानान्तर मार्ग पश्चिम से पूर्व की ओर जाते हैं उनके बीच का फासला धीरे धीरे कम होता जाता है और अन्त मे मथुरा पहुचकर वे एक-दूसरे मे मिल जाते हैं। नवलसिंह की सेना उत्तरी मार्ग से आगे बढ़ रही थी जबकि मराठा दक्षिणी मार्ग से पूर्व की ओर बढ़ रहे थे। इन दोनो मार्गों को जोड़ने वाला एक मार्ग जो गोवर्धन से सोख की ओर जाता है और जिसका फासला ८ मील से अधिक नहीं है। इन दोनो स्थानो के बीच में कहीं ये दोनो विरोधी सेनाए एक दूसरे के इतने निकट आ गयी कि उनके बीच केवल २ कोस का अन्तर

रह गया। उस समय तक नवलसिंह का उसी दिन युद्ध करन का कोई विचार नहीं था, परन्तु शत्रु के सामीप्य ने उसके दो सरदारो को युद्ध करन के लिए लालायित कर दिया। उनम स एक नवलसिंह का साला दानसाही था जो अश्व-सेना का एक निर्भीक अधिकारी था तथा जिस राजपूतो एव भदौरियाओ स निर्मित अपन रिसाले पर बहुत अधिक गव था दूसरा अविवकी नागा सयासियो का बहादुर नेता गुसाइ बालानन्द था। परन्तु समरू और एम० मडेक ने इस प्रस्ताव का इस आधार पर विरोध किया कि विलम्ब बहुत हो चुका है तथा रात्रि सन्निकट है। नवलसिंह न दानसाही के जोशीले उकसावे म आकर आक्रमण करन का आदेश दे दिया। सोख के किले के पास मराठाओ ने हमल का मुकाबला करने के लिए अपनी सना को तयार किया। रात्रि हो जान के बाद भी इन दोनो सनाओ के बीच घमासान युद्ध हुआ। दानसाही ने २००० उत्तम अश्वो के साथ आक्रमण का नेतत्व किया, परन्तु इसके पूव, कि उसकी प्रभावी रूप स सहायता हो पाती मराठाओ न अपने तोपखान स उसे भारी क्षति पहुचाकर पीछे हटने के लिए बाध्य कर दिया। कुछ देर तक दोनो पक्षों के बीच तोपो के साथ लडाई हुई और फिर व तलवारो की लडाई पर उतर आय। गगाप्रसाद तथा जुदराज ने रीजेन्ट की निजी कमान मे गठित डिवीजन का नेतत्व किया। परन्तु नवलसिंह न युद्ध म अपना सिर और हृदय दोनो खो दिए। हाथी से उतरकर वह घोडे पर सवार हुआ तथा समरू के सनिकों की दुर्भेद्य पक्ति मे पहुच गया। परन्तु यहा भी वह अपने जीवन के लिए काप रहा था उसने अपने राजत्व के चिह्न को फेंक दिया जिससे शत्रु उसे पहचान न सके तथा (गोवधन) के किले म भाग गया। युद्ध से सम्बद्ध प्रश्न अभी भी अनिर्णीत था अनेक प्रतिष्ठित सरदार अपने दुबल हृदय स्वामी की दुग म खोज करने लगे तथा उन्होंने उससे आग्रह किया कि वह रण-क्षेत्र म अपने सैनिको को अपनी शक्ल दिखाय, परन्तु उनके इस आग्रह का कोई वाछित परिणाम नही निकला। उन्होंने उससे कहा कि उसके रण-क्षेत्र म पहुचने पर युद्ध का पासा पलट सकता है। परन्तु कोई भी आश्वासन उस प्रोत्साहित करने मे विफल रहा। वास्तविक जाट ने अच्छा युद्ध किया परन्तु मराठाओ ने रात्रि के अधकार म अधिक अच्छा युद्ध किया। समरू तथा एम० मडक की सेनाओ ने शत्रु के बार-बार के आक्रमण का वीरतापूवक प्रतिरोध किया। थकी हुई तथा अपने स्वामी के द्वारा व्यक्त नवलसिंह की सेना का धय टूट गया और वह भाग खडी हुई। किसी भी युद्ध म इससे अधिक सरदार न तो मारे गये और न घायल हुए। जहा तक निम्न स्तर के सैनिको का प्रश्न है यह अनुमान लगाया गया है कि ५००० अश्व तथा पदल सनिक घायल हुए और २००० युद्ध मे खेत रहे। दो तोपो को छोडकर जिन्हे समरू अपने साथ ले आया था सभी युद्ध-क्षेत्र में छोड दी गइ। सेना इतनी अस्त-व्यस्त हो गई कि अनेक सैनिक युद्ध-क्षेत्र से सात कोस के इलाके म मारे-मारे डोलते रहे।

प्रत्यावर्तन के समय मडक और समरू का यदि निर्भीक आचरण न होता तो सभवत एक भी व्यक्ति मराठाओ की तलवार से बचकर न निकल पाता। (फारसी पत्रा चार III, पृ० ५२ ५३)।[1] नवलसिंह ने डीग के फाटक पर बैरीकेड खडे करके घेरे का सामना किया। मराठाओ ने जिन्होने युद्ध मे काफी सनिक गवाये थे किले की बन्दूको के रेंज के पार से उसे देखकर ही सन्तोष कर लिया।

अब जाट शक्ति का पूर्णरूपण उन्मूलन करने के लिए एक दुर्जेय गठबन्धन को तयार किया गया। नजीब उद-दौला मराठाओ से मिल गया तथा उनकी सहायता से दोआब मे जाट अधिकृत प्रदेशो को जीतने लगा। गाजी-उद-दीन खाँ फरुखाबाद के अपने शरणस्थान से जल्दी से लौट आया और उसने भी मराठाओ से मैत्री कर ली। शाह आलम II को बार-बार इस आशय के अनुरोध भेजे गये कि वह अपनी राजधानी को वापस लौट आये परन्तु वारेन हस्टिंग्स के विरोध के कारण वह ऐसा नही कर सका। इस प्रकार जाट दूसरी बार अपने अग्रेज मित्रो की मूक और निष्ठावान सेवाओ के कारण अपने निष्ठुर शत्रुओ के गठबन्धन से पूर्णत विनष्ट होने से बच गये। मराठाओ ने मथुरा को अपना मुख्यालय बनाया तथा रुहेलाओ के साथ मिलकर उन्होने मुहरम के महीने मे ११८४ हि० (मई १७७०) जाट प्रदेश को सुव्यवस्थित रूप से जीतना आरम्भ किया। नजीब-उद-दौला ने शिकोहाबाद[1] सादाबाद तथा अन्य जाट अधिकृत क्षेत्रो को जीत लिया (वाका पृ० २२६)। उसके उपरान्त वह कोल (अलीगढ) की ओर बढा तथा वहा उसने सम्राट के नाम पर जाट प्रदेशो पर अधिकार कर लिया (उपरोक्त, पृ० २३०)। नवलसिंह की इस बार रक्षा इसलिए हो सकी क्योकि उसके शत्रुओ मे उनकी प्रथम विजय के उपरान्त फूट पड गई। स्वय मराठा भी दो गुटो मे बट गये एक गुट के नेता तुकोजी होल्कर और विसाजी पडित थे और दूसरे गुट का नेता महादाजी सिन्धिया था। तुकोजी नजीब उद दौला के साथ मत्री के पक्ष मे था परन्तु सिन्धिया तथा अन्य को उस पर विश्वास नही था। मराठा खेमे मे गाजी-उद-दीन की उपस्थिति तथा सिन्धिया द्वारा उसके समर्थन के कारण सम्राट और नजीब-उद-दौला के मस्तिष्क मे कुछ आशकाओ का उदय होने लगा था। नवलसिंह ने इस स्थिति का लाभ उठाया तथा उसने रुहेला सरदार के पास उससे पृथक गुप्त सधि की बात चलाने के लिए अपने वकील भेजे। जमेद I ११८४ हि० (अगस्त १७७० का अन्तिम सप्ताह) को नजीब ने गुप्त रूप से जाटो के साथ अपना विवाद समाप्त कर लिया। (वाका पृ० २३२)। नवलसिंह के भाग्य से नजीब उद-दौला द्वारा हफीज रहमत खा रुहेला को लिखा गया एक पत्र लोगों के हाथ लग गया जिसमे मराठाओ के बारे मे उसने अपने विचारों को व्यक्त किया था। फलत नजीब उद-दौला तथा रामचन्द्र गनेश के बीच सम्बन्धो मे शीतलता आ गई। मराठाओ ने मत्री का मुखौटा ओढ कर उसे अपने खेमे से बाहर नही जाने दिया तथा नवलसिंह जाट के वकील को

समझौते की बात चलाने के लिए बुलाया। १७वी जमादा I ११८४ हि०[1] (सितंबर ८, १७७०) को दोनो पक्षो के बीच एक शान्ति संधि हुई जिसमे निम्न शर्तें थी—

(i) नवलसिंह ६५ लाख रुपये दे, इसमे नजीब और मराठा द्वारा विजित जाट प्रांतो का राजस्व शामिल नही है।

(ii) इन ६५ लाख रुपयो मे से वह १० लाख रुपये की अदायगी २० दिन मे कर देगा, १५ लाख दो महीने मे दे देगा, ७ लाख ५० हजार वह फागुन के महीने मे अदा कर देगा तथा शेष आधा धन यह तीन साल मे दे देगा।

(iii) वह मराठाओ को ११ लाख रुपये का वार्षिक नजराना देगा।

(iv) रणजीत सिंह के लिए २० लाख रुपये की जागीर की व्यवस्था की जाएगी (फारसी पत्राचार III ९७ ९८)।

संदर्भ

१ पहलीअगस्त १७६६ का राजा परसुधराय के द्वारा लिखे गये एक पत्र से यह पता चलता है कि ' रतनसिंह जाट की एक कीमियागर ने हत्या कर दी तथा उसके बाद उसका डढ वर्ष का बालक केसरीसिंह गद्दी पर बैठा। दानसाही को रीजेन्ट नियुक्त किया गया (फारसी पत्राचार II पृ० ३८६) इससे फ्रेंच सस्मरणो की बात की पुष्टि होती है। रतनसिंह की मृत्यु सम्भवत अप्रेल १७६६ मे हुई क्योकि वजीर ने ११ मई १७६६ को लिखे पत्र मे गवनर को इसकी सूचना दी थी (फारसी पत्राचार II ३५७) वाका मे लिखा है कि ५वी जिहिज्जा ११८७ हिजरी (१७ अप्रैल १७६६) को यह समाचार प्राप्त हुआ कि राजा रतनसिंह जाट की श्री बृन्दावन मे उसके खेमे मे गुसाइ रूपानन्द ने कटार मारकर हत्या कर दी। मदा सुख और कुशल राय ने गुसाइ का सिर काट दिया (वाका, २२५)। इस प्रकार १० महीने और ११ दिन का इमाद मे उल्लिखित शासन काल लगभग सही है।

२ मराठाओ ने रणजीतसिंह से पत्र-व्यवहार किया—फलत कुम्हेर से कुछ दूर वह उनसे मिला।' (फारसी पत्राचार III पृ० ४१)

३ मैडेक की डिवीजन तो लगभग समाप्त कर दी गई। उसके अकेले के १८०० आदमी युद्ध मे वीरगति को प्राप्त हुए, घायलो की सख्या इससे भी अधिक थी। (मडेक पृ० ५६) इससे यह सकेत मिलता है कि अग्रेज सवाददाताओ ने मरने वालो की जो सख्या बताई है, वास्तविक सख्या उससे कही अधिक है।

४ जवाहर सिह क व्यवहार स तग आकर गाजी उद-दीन भरतपुर स भाग गया था।

५ शिकोहाबाद ई० आई० आर० (अब उत्तर रेलवे) पर स्थित मनपुरी जिले म एक परगना है। सादाबाद मथुरा का एक तहसील है वह मथुरा स २८ मील दूर दक्षिण पूव म स्थित है।

६ वाका ए शाह आलम II म लिखा है—यह समाचार प्राप्त हुआ कि १७ जमादा I ११८४ हि० (सितम्बर ८, १७७०) का नजीब-उद दौला न दिन रात दरबार लगाकर जाटो को मराठा सरदारो क साथ झगडे को निबटा लिया, मराठा सरदारो को खिल्लत दी तथा नवाब जवाना खा को उनके खेम म छोडकर उनस रुखसत ल ली।

तेरहवा अध्याय

नवल सिंह की रीजेन्सी

नवल सिंह की कठिनाइया

गृह-युद्ध के फलस्वरूप नवल सिंह को, जो वस्तुत अब भरतपुर का राजा बन चुका था परन्तु जो अभी भी अपने बालक भतीजे खेदी सिंह का रीजेंट मात्र था, जो कुछ मिला था वह था एक कटा छटा राज्य गुटबन्दी से ग्रसित सामन्त वर्ग, मनोबल से टूटी सेना एक खाली खजाना तथा पूर्वानुमानित राजस्व। बाहर की सम्भावनाए भी उसके लिए समान रूप से अधकारपूर्ण थी। दो राजाओ के बीच का अन्तराल दिल्ली मे समाप्त हो चुका था। निर्वासित सम्राट शाह आलम II ने शाही नगर में नवम्बर १७७१ मे प्रवेश कर लिया था। यद्यपि सम्राट दुर्बल, अक्षम और ढुलमुल था तथापि तमूर के वशजो के दरबार को सुशोभित करने वाले अन्तिम महान् विदेशी मिर्जा नजफ खा के योग्य प्रशासन साम्राज्य ने सुधार के कुछ चिह्नों को प्रदर्शित किया था। मुगल-सम्राट की वैध सत्ता के स्थापित होने के उपरान्त जाट राजा सबसे बडा विद्रोही एव अपहारक प्रतीत होने लगा था। हरियाणा दोआब के बेदखल मुस्लिम जागीरदार मेवात के शेखजादे जिन्हे सूरजमल ने उनकी जागीरो से निकाल दिया था अब सम्राट की ओर इसलिए देख रहे थे कि वह उन्हें अधिकार पुन वापस दिला देगा। मिर्जा नजफ खा जाटों को दबाने के लिए एक शक्तिशाली सेना को गठित कर रहा था मराठा भी जिनकी मत्री एव सहायता के ऊपर भरतपुर का नतिक दावा था। अब उसके सबसे खतरनाक शत्रुओं से भी बुरे सिद्ध हो रहे थे। यद्यपि नवल सिंह के महादाजी सिंधिया के गुट के साथ शान्तिपूर्ण सम्बन्ध थे, तथापि तुकोजी होल्कर ने जबीता खा के दमन के पश्चात् जिसके विरुद्ध वे अभी भी सघर्षरत थे जाट प्रदेशो पर आक्रमण करने की अपनी योजना को बिलकुल छिपाया नही था। मराठा-नेता अब पेशवा के नियत्रण से लगभग मुक्त थे, फलत उनमे अब मतैक्य का अभाव था और इसलिए उनकी अब कोई समान नीति

भी नहीं थी। इस स्थिति म नवल सिंह मुगलों के विरुद्ध मराठाओ की सहायता पर निर्भर नही रह सकता था। दुर्भाग्य उसक ऊपर एक क बाद दूसरा आया, पहला दुर्भाग्य उसके स्वामिभक्त फ्रेंच कप्तन एम० मडेक के अपसरण के रूप म व्यक्त हुआ।

एम० मडेक द्वारा जाट-सेवा का परित्याग (१७७२)

स्वच्छन्द फ्रेंच कैप्टन एम० मैडेक स्वामिभक्ति एव श्रद्धा के साथ १७६६ स भरतपुर राज की सेवा करता चला आ रहा था। प्रत्येक सनिक कार्यवाही मे उसने दृढ साहस तथा दक्षता का परिचय दिया था, यद्यपि यह उसका दुर्भाग्य था कि उसे सदा पराजय का सामना करना पडा तथा उस दूसरो के अविवेक एव कायरता क लिए खमियाजा भुगतना पडा। गोवधन के निकट अप्रल १७७० म जो अन्तिम युद्ध हुआ था, उसम उसकी सना लगभग पूणत नष्ट हो गई थी उसके घोडे ऊटा हथियारो तथा तोपखान पर मराठाओ का अधिकार हो गया था। राजा नवल सिंह ने इस बहादुर कप्तन को इस क्षति का हरजाना दकर अपनी न्यायप्रियता को व्यक्त किया था। एम० मडेक ने अपनी सना को पुनगठित करन क लिए बडी तत्परता क साथ अपना काम आरम्भ कर दिया। वह मराठाओ से अपनी तोडदार बन्दूकें ले आया, उन्हे उनके प्रयोग करने की विधि का कोई ज्ञान नही था। उसने आगरा म १२ तोपें और एक मोटर बनवाई तथा वर्षा एव शरद ऋतु म (जुलाई १७७० फरवरी १७७१) नये रगरूटो को सनिक अभ्यास कराया। बसन्त ऋतु तक उसकी सेना पूणत गठित हो गई तथा इसके उपरान्त जो शान्ति का समय चला, उसम उसने अपने भाग्य को भी ठीक कर लिया। वह अब फ्रास वापस लौटन की सोचने लगा था, परन्तु पाण्डेचेरी क फ्रेंच गवर्नर ने उस ऐसा नही करन दिया उसका कहना था कि उस सकटपूर्ण घडी म उसके भारत स चल जाने के फलस्वरूप फ्रास के हितो पर प्रतिकूल प्रभाव पडगा। १७७१ क पूरे वष इगलड के शत्रु बडी रुचि के साथ हिन्दुस्तान मे मराठा शक्ति क उत्कष को तथा वारेन हेस्टिंग्स एव महादाजी सिन्धिया के बीच महान् मुगलो की छाया पर नियत्रण प्राप्त करने के लिए चल रही राजनीतिक मुठभेडो को ध्यान स देख रहे थ।

१७७२ क आरम्भ म नवल सिंह न एम० मडेक को दोआब के जिलो म स धन सग्रह का दायित्व सौंपा। वह वहा स अपने काय को सफलतापूवक निष्पादित करके लौटा जिसक लिए उस उदारतापूवक पुरस्कृत किया गया। इसक तुरन्त बाद उस दो किले वाले ठिकानो का दमन करने क लिए भजा गया, जहा रीजेंट के दो निकट सम्बन्धियो न उसकी सत्ता को स्वीकार करन स इकार कर दिया था।[१] एक दुग का दमन करन म पन्द्रह दिन लग तथा दूसरे पर अधिकार स्थापित करन म डेढ़

महीना लगा। किले की रक्षा करने वालों को केवल जीवन रक्षा का आश्वासन मिला तथा उसको सीमाओं से बाहर कर दिया गया। परन्तु घेरा डालने वालों को इस युद्ध में एक हजार लोगों के प्राणों से हाथ धोना पड़ा। राजा नवल सिंह की यह अविवेकी उदारता महगी सिद्ध हुई। इन गद्दारों ने जैसा हम बाद में देखेंगे मिर्जा नजफ खा से मैत्री कर ली तथा अपने ही बन्धु-बान्धवों को गिरफ्तार करवाने में उसकी बड़ी सहायता की।

इस समय राजा नवल सिंह की सम्राट एवं मराठा दोनों के साथ ही एक प्रकार से युद्ध की स्थिति पाई जाती थी। मिर्जा नजफ खा का लेफ्टीनेंट नजफकुली खा हरियाणा में जाट प्रदेशों को विजित करने के प्रयास में लगा था तथा नियाज बेग खा दोआब में यह काम कर रहा था। मराठाओं ने जबीता खा के दमन के उपरान्त नवल सिंह पर आक्रमण करने का अपना इरादा स्पष्ट कर दिया था। नवल सिंह के भाग्य से कुछ समय पूर्व से मराठाओं और सम्राट के बीच उसके विश्वासघाती मंत्री हिसाम-उद-दीन के षडयंत्रों के कारण मतभेद उत्पन्न होने लगे थे हिसाम उद दीन को दरबार में मिर्जा नजफ खा के उत्कर्ष से ईर्ष्या थी। जाट सरदार ने इस अवसर का लाभ उठा सम्राट के सम्मुख मराठाओं के विरुद्ध एक प्रतिरक्षात्मक गठबंधन का सुझाव प्रस्तुत किया क्योंकि वह न्यायपूर्ण एवं सम्मानपूर्ण शर्तों के आधार पर उनके साथ स्थायी मैत्री करने को उत्सुक था। उसने एम० मैडेक को अपना दूत बनाकर दिल्ली भेजा। (अक्टूबर १७७२) ताकि प्रादेशिक विवाद का शान्तिपूर्ण निबटारा हो सके तथा जाट प्रदेशों पर मराठा-आक्रमण की स्थिति में सम्राट की सहायता प्राप्त की जा सके। परन्तु शाही दरबार के वातावरण को देखकर मडेक में मूलचूल परिवर्तन हो गया इस समय दिल्ली दरबार ब्रिटिश विरोधी कार्य-कलापों का केन्द्र था। उसे पाण्डिचेरी के गवर्नर एम० चेवेलियर से निरन्तर इस आशय के पत्र मिल रहे थे जिनमें उससे यह आग्रह किया जा रहा था कि वह सम्राट शाह आलम द्वितीय के यहां सेनाओं में शामिल हो जाय। इस समय यूरोप में इंगलैंड और फ्रांस के बीच युद्ध की सम्भावनाएं उपस्थित थीं तथा इसकी प्रत्याशा में भारत में स्थित फ्रांसीसियों के जोश में भरे मस्तिष्क अंग्रेजों को इस देश से निकालकर बंगाल की खाड़ी में फेंकने की चमकीली परन्तु निष्फल योजनाएं तैयार कर रहे थे। एम० डुजार्ड हिन्दुस्तान के सभी देशी दरबारों में भारतीय राजाओं को यह समझाने के लिए जा रहा था कि उन्हें मुगलसम्राट के झण्डे के नीचे संगठित होना चाहिए तथा किसी सुअवसर पर जब बंगाल के ऊपर चढ़ाई हो तो उसमें सम्राट की ओर से शामिल होना चाहिए। यद्यपि एम० मडेक को जाटों से कोई शिकायत नहीं थी जो उसे नियमित रूप से और उदारतापूर्वक उसकी सेवाओं का प्रतिफल दे रहे थे उसने अपने देश के आह्वान पर उनकी सेवाओं को छोड़ने का निश्चय कर लिया। पहली शबान ११८६ हि० (२८ अक्टूबर १७७२

वाका हस्तलिपि प० २२६) को सम्राट न उस भेंट करने की अनुमति प्रदान की सम्राट ने उस सात टुकडा का एक खिल्लत, एक बगला (सफेद वस्त्र की वही) और एक तलवार दी। मडक तत्काल अपने परिवार, सम्पत्ति तथा सनिको को गुप्त रूप स हटाने के लिए डीग पहुच गया। परन्तु यह कोई सुगम काय नही था। उसके भाग निकलन की अग्रलिखित कहानी रोचक और शिक्षाप्रद है उससे पुराने तरीके से सगठित भारतीय मेनाओ की यूरोपियन अनुशासन के समक्ष असहायता स्पष्ट हो जाती है।

रीजेन्ट स आदेश पाय बिना ही मैं डीग वापस लौट आया। मेरे इस प्रकार लौट आने स जाटो को यह स देह हो गया कि मेरा सम्राट के साथ कोई गुप्त समझौता हो गया है अत व मेरे ऊपर निगरानी रखन लगे। जिस दिन मैं वहा पहुचा मैंने नगर के बाहर किले की तोपो की मार स दूर अपना खेमा गाडा। उसी दिन स ध्या के समय मैं ५० अश्व सनिका और इतने ही पदल सनिको के साथ तथा अपन परिवार और सम्पत्ति को लान के लिए अपेक्षित परिवहन के साथ भरतपुर की ओर रवाना हुआ। मैं प्रात ६ बज वहा पहुचा तथा उस दिन मैं अपने सामान को बाधने तथा उस डीग तक पहुचान की तयारी करता रहा। मैंने आगरा सदेशवाहक भेज तथा मरे बगीचा और ग्रामो के पहरेदार सनिको को यह आदेश भेजा कि वे आकर मुझस मिलें, परन्तु वे उस दिन नही आ सक। जब रीजेन्ट को यह पता चला कि मैं सनिका की एक टुकडी के साथ भरतपुर चला गया हू तो उसन यह सही निष्कष निकाला कि मैं वहा अपन परिवार और सम्पत्ति को लन गया हू। उसन सभी उपलब्ध सनिका को मेरे प्रयास को अवरोधित करन का आदेश दिया उसन भरतपुर डीग माग पर स्थित सभी ग्रामवासिया को भी यह आदेश दिया कि वे हथियार लेकर मग विरोध कर तथा मुझ गिरफ्तार कर। यह काम इतन गुप्त रूप स नही किया गया कि मुझ इसका पता नही चलता। मैं उन सभी खतरा स अवगत था जिनका मुझ और मर परिवार को सामना करना था मुझ उन कठिनाइया का भी पता था जिनका सामना मुझे थोडे स सनिको के साथ अपनी सना तक पहुचन के लिए करना था। मरे पास खोन के लिए समय नही था। मैंने जल्दी से अपना इन्तजाम किया तथा सायकाल म चार घटे बाद (लगभग रात्रि के दस बज) सब कुछ प्रब ध करन के बाद मैं अपन परिवार तथा उन सबके साथ जिनको इस ससार म मैं अपना कह सकता था मैं अपनी यात्रा पर रवाना हुआ।

लगभग मध्याह्न के २ बज जब मैं १२ मील की यात्रा पूरी कर चुका था मुझ राजा की सना की एक टुकडी मिली। जो सरदार उस टुकडी का नतत्व कर रहा था उसन मुझस रीज ट की तरफ स बात करन की अनुमति मागी। मैंने उस आन दिया उसन मुझस कहा कि उस मुझस यह अनुरोध करन के लिए भेजा गया है कि मैं रीजेन्ट म बात करन क लिए जाऊ। मैंने उसे उत्तर दिया कि मैं अपने

खेमे म वापस जा रहा हू और अब काफी विनाश हो गया है। माथ ही मैंन अपन मामान को आग बढ़न दिया। मैं मरदार स बात करन के लिए वही रुका रहा। एक घटे के बाद मैंन सोचा कि मुझ भी अब अपन सामान के साथ होना चाहिए। मैंन राजा की सना का साथ छोड दिया। सरदार न मुझे अपन साथ रीजन्ट स बात करन के लिए चलन को कहा। जब उसन दखा कि मैं उसकी आज्ञा का पालन करन वाला नही हू उसन मरी टुकडी पर गोलिया चलानी आरम्भ कर दी। मैंने सभी बत्तिया बुझवा दी तथा गोली का जवाब गोली स देना शुरू कर दिया। पडोस के ग्रामवासी जिन्हे पहले स ही आदेश प्राप्त था बन्दूको की आवाज सुनकर इकट्ठ हो गए दूसरे सनिको के आ जान पर मैं राजा की सना के एक समग्र भाग से एक अत्यत गम्भीर युद्ध की स्थिति म था। मेरे पास इस समय १०० सनिक भी नही थे और मुझे अपनी खेमे की ओर से सबस अधिक चिन्ता थी। मुझे पक्का विश्वास था कि यदि मरी अनुपस्थिति के कारण उस पर आक्रमण होता है तो वहा के सनिको पर आतक छा जाएगा तथा रीजेन्ट उन्हे तितर बितर कर देगा। इन विचारो न मुझ जल्दी स आग बढ़न के लिए प्ररित किया ताकि मैं दिन निकलन स पूव वहा पहुच सकू। इसको प्रभावी बनाने के लिए मैंने तीन तोपें जिन्हे मैं भरतपुर से उठा लाया था तथा सामान स लदी अनक गाडिया राजा के सैनिको के लिए छोड दी। राजा क सनिक मेरे खेमे म प्रवेश के समय तक निरन्तर लडते रहे जहा मैं दिन निकलने के तीन घटे के बाद पहुचा था। मेरा पीछा करन वाले इसके बाद मुझे छोडकर चले गए मेरे पहुचन से टूटे हुए मनोबल से ग्रस्त मेरे सनिको मे फिर से विश्वास का उदय हुआ। मैंने नगाडे बजवाये तथा कामा के लिए प्रस्थान कर दिया और जस ही मैं सडक पर पहुचा राजा की समूची सना मरा पीछा कर रही थी और उसके साथ पडोस के किसान भी थे जो ऐस अवसरो पर नियमित सनिको की अपेक्षा अधिक खतरनाक हो जाते हैं। वहा के निवासियो के सहित उस सना मे एक लाख से कम लोग नही थे। मैंन एक पोले वग म सामान रखवाकर तथा उसके इद गिद सेना को गठित किया तथा युद्ध करत हुए उसी प्रकार अपना आगे का अभियान जारी रखा। राजा की अश्व सना न मेरे परिवार को ले जाने के उद्देश्य स मेरी बटालियन को तोडन के लिए आश्चयजनक प्रयास किए। परन्तु मेरी सतत गोलबारी के कारण उनके प्रयास सफल नही हो सके। माग मे मुझे एक बडे दलदल म से होकर गुजरना था उन्होंने हर प्रकार का प्रयत्न इसलिए किया ताकि मैं उस पार न कर सकू। अपन सामान को पार कराने के उद्देश्य से मैं वहां कुछ देर के लिए रुक गया ताकि मैं अपने तोपखाने के दो टुकडो को दलदल की दूसरी ओर मोड दे सकू। उस समय राजा की सेनाओ न अपने प्रयत्नो को दुगुना कर दिया और मेरी भुजा मे एक गोली लगी। मैंने भयकर गोलीबारी का आदेश दिया जिसके फलस्वरूप मेरे शत्रुओं को एक ओर हटने के लिए बाध्य होना पडा। जसे ही मेरा

गामान न्वदन ग निवल गया मैंने भी दलदल पार कर लिया। दूसरी तरफ मैं जयनगर (जयपुर) के राजा के क्षत्र म था। जाट राजा की सना वहा देर तक खन्ी मुझ रखती रही तथा वह सायकाल उस समय वहा स हटी जब उसन मुझे कामा की दीवालो के नीचे अपना खेमा गाडते हुए नही देख लिया। इस लडाई म मरी ओर स मृतका एव घायता की कुल सख्या २०० थी इसम कुछ ऊट भी मारे गए। शेष सामान को बचान म जा पहले आक्रमण के बाद बच गया था मैं सफल रहा (लो नवाब रेने मडक पृ० ८४ ८७)।

निस्सन्देह यह साहस एव दक्षता का एक उल्लेखनीय साहसिक काय था। छत्तीस घटे म कम समय म एम० मडक को कम म कम ५५ मील की यात्रा तय करनी पडी थी (डीग म भरतपुर २१ मील फिर २१ मील भरतपुर स डीग तथा डीग और कामा १३ मील) तथा उस एक शत्रु प्रदेश मे म होकर एक बड वनवाय के साथ इस यात्रा को पूरा करना था। कामा म आठ दिन विश्राम करन के उपरान्त एम० मडक नवम्बर १७७२ के प्रथम सप्ताह म दिल्ली पहुचा।

सम्राट के विरुद्ध नवलसिंह की मराठाओ तथा जबीता खा मे मैत्री

१७७२ तक मराठाओ ने जबीता खा को उसी दयनीय स्थिति म पहुचा दिया था जिसका अनुभव उसका पिता नजीब उद दौला दो बार दिल्ली म कर चुका था— एक बार १७५७ म उसका रघुनाथ राव ने घरा डाला था और दूसरी बार १७६४ म जाटो मराठाओ तथा सिखो न उसकी घेराबन्दी की थी। परन्तु उनके खेमे मे मल्हार राव होल्कर का गोद लिया हुआ पुत्र तुकाजी होल्कर भी था जिसे मल्हार के धमपुत्रों की देखभाल करनी थी और इन धमपुत्रो म जबीता खा का पिता नजीब उद-दौला भी शामिल था। रुहेला सरदार ने तुकोजी होल्कर म सफल अनुरोध किया जिसके फलस्वरूप उस मराठा नताओ स आत्मसमपण के लिए बहुत अनुकूल शर्तें प्राप्त हो गइ (इब्रतनामा हस्त लिपि पृ० २१४)। उन्होंने उसे न केवल उसके उन प्रदेशो को वापस कर दिया जिन्हें व जीत चुके थे अपितु उन्होने यह भी वायदा किया कि वे सम्राट को इसके लिए बाध्य करेंगे कि वह रुहेला प्रदेश के शाही सनापतियों द्वारा विजित क्षेत्रों को उस वापस कर दे बशर्ते कि जबीता खां दिल्ली आक्रमण म उनका साथ देने को तयार हो।

रुहेलाओ के मामले से निबटने के बाद मराठा नताओ न एम० मडक के अपनी सेना के साथ अपसरण के तुरन्त बाद जाट प्रदेश म प्रवेश किया। नवलसिंह की सना को अपन दुर्गों म भीतर घुसकर शरण लेनी पडी। यदि उसन मराठाओ का प्रतिरोध किया तो इसलिए नही कि उसे विश्वास था कि इस प्रयास म उस सफलता मिल सकेगी परन्तु वह इसलिए था ताकि समर्पण के लिए वह उनसे अच्छी शर्तें प्राप्त

कर सकेगा। सम्राट ने इस मामले में उसकी कोई सहायता नहीं की सिवाय इसके कि उसने मराठाओं को इस आशय का एक पत्र लिखा कि उन्हें जाट प्रदेश में लूट मार नहीं करनी चाहिए। इस बीच मिर्जा नजफ खा ने शाही सेना की भरती एवं सुसज्जा के लिए अपने प्रयत्नों को तेज कर दिया था फलत मराठाओं को जाटों से की जाने वाली मांगों को अधिक विवेकसंगत बनाने के लिए विवश होना पड़ा। नवलसिंह प्रतीक्षा कर सकता था परन्तु मराठा प्रतीक्षा नहीं कर सकते थे अत उन्होंने शीघ्रता से वह राशि स्वीकार कर ली जो जाट देने को तैयार थे और वे दिल्ली की ओर रवाना हो गए जहा उन्होंने अपने दूसरे आसामी हिसाम उद-दीन खा से निपटना था। उन्होंने नवलसिंह को भी वही प्रलोभन दिया जो वे जबीता खा को दे चुके थे – यानी उन्हें वे सब प्रदेश वापस दिला दिए जाएगे जिन्हें उनसे शाही अफसरों ने छीन लिया था और जिसके एवज में उन्हें सम्राट के विरुद्ध आक्रमण संधि करनी होगी। नवलसिंह ने यह समझने में कोई भूल नहीं की कि सम्राट की रुचि मराठाओं के नियन्त्रण से अपने को मुक्त करने में उतनी नहीं है जितनी जाट शक्ति को कुचलने में है। चूकि वह भी नजफ खा की सेना के विनाश में समान रूप से रुचि रखता था इसलिए उसने मराठाओं के साथ अपने भाग्य को भी जोड़ दिया। नवम्बर १७७२ के अन्त में मराठाओं जाटों और रुहेलाओं की सम्मिलित शक्ति जिसमें एक लाख से भी अधिक (?) सैनिक थे दिल्ली के समक्ष उपस्थित हुई। इस बड़ी सेना का मुकाबला करने के लिए मिर्जा नजफ खा केवल ३८०० अश्व सैनिक तथा ८ हजार पैदल सैनिकों को ही रणक्षेत्र में उतार सका।

२८ दिसम्बर १७७२ को दिल्ली की दीवालों के नीचे लगभग नौ घंटे तक घमासान युद्ध हुआ। मराठाओं तथा उनके मित्रों ने दृढ़ पराक्रम का परिचय दिया तथा मिर्जा नजफ खा को एम० मन्द की पक्तियों में शरण लेने के लिए बाध्य कर दिया। जब लड़ाई आगे-पीछे चल रही थी गद्दार हिसाम उद-दीन सिपाहियों की दो रेजीमेंटों ३० बन्दूकों तथा सम्राट के रिसाले के घोड़े के साथ गाजी उद-दीन की हवेली के निकट खड़ा युद्ध में उभय पक्ष की बदलती हुई स्थिति को देख रहा था। जैसे ही मराठाओं ने उसकी स्थिति में आग बरसने की धमकी दी खा भय की अपेक्षा अधिक प्रसन्नता को लिए हुए नगर की ओर भाग गया। उसकी सेनाओं ने मराठाओं के साथ मिलकर एम० मडक के सम को लूटा। (लो नवाब रने मन्क मवशन ६६)

मराठा सेना ने जबीता खा और उसकी रुहेला अश्व-सेना जाटों तथा समरू के तोपखाने के साथ नगर को पूर्ण वृत्त की भांति घेर लिया। हिसाम उद-दीन ने मुख्य सम्राट के सम्मुख यह प्रस्तुत किया कि मराठाओं के साथ विवादों एवं झगड़ों का मूल कारण मिर्जा नजफ खा है। उस निष्ठावान जनरल को तथा उसके ईरानी और तूरानी सहयोगियों को सेवा से पदच्युत कर दिया गया तथा उन्हें नगर छोड़ने

का आदेश दे दिया गया। अपने प्रतिद्वन्द्वियों के पतन से दरबार के हिन्दुस्तानियों को अत्यधिक प्रसन्नता हुई, मराठाओं को शाही खजाने से नौ लाख रुपये मिले तथा नौ लाख उन्हें हिसाम-उद-दीन के निजी कोष से प्राप्त हुए। उसने तुकोजी होल्कर को एक लाख रुपया और देने का वायदा इस शर्त पर किया कि वह मिर्जा को दिल्ली से हटवा दे। मराठाओं ने नजफ खां और उसके समस्त सैनिकों को अपनी सेवा में ले लिया और उसको साथ लेकर (मार्च १७७३) वे नवाब शुजा-उद-दौला तथा हाफिज रहमत खां के प्रदेशों पर आक्रमण करने चले गये (इब्रातनामा हस्तलिपि, पृ० २१६ २२१)। जाटों को इस बात का सन्तोष रहा कि उन्होंने मुगल प्रदेशों को लूटा तथा अपने खोये हुए अनेक अधिकृत प्रदेशों पर पुनः आधिपत्य स्थापित कर लिया था। नवलसिंह को अपनी शक्ति को पुनर्गठित करने के लिए कुछ विश्राम मिल गया तथा नजफ खां के भाग्य के अल्पकालिक लोप पर उसे भी उतना ही सन्तोष था जितना स्वयं हिसाम उद-दीन को।

मिर्जा नजफ खां का जाटों के विरुद्ध प्रथम अभियान

मिर्जा नजफ खां जिसने हिसाम-उद-दीन के षडयन्त्र के कारण सम्राट की अल्पकालिक अप्रसन्नता अर्जित की थी तथा जिसे दरबार से निष्कासित कर दिया गया था तीन महीने बाद दिल्ली लौट आया अब उसकी ख्याति पहले से कहीं अधिक थी, उसने अवध के नवाब तथा हाफिज रहमत खां के विरुद्ध अभियान में मराठा सेना में भाड़े के जनरल के रूप में काम करके अपने शौर्य एवं सैनिक क्षमता का परिचय दिया था। इसी समय हिसाम-उद-दीन का षडयन्त्र रचने में शिष्य तथा एक असन्तुष्ट अधीनस्थ अधिकारी अब्दुल अहमद खां ने अपने स्वामी को नीचा दिखाने के लिए नजफ खां से मैत्री कर ली। उनके ये दोनों प्रबल प्रतिपक्षी चालाकी से उसके बराबर थे परन्तु युद्ध की कला में उससे कहीं अधिक थे। उनके समक्ष बेचारे हिसाम-उद-दीन का सम्राट के ऊपर प्रभाव कम होना सुनिश्चित था तथा उसके साथ ही दरबार में उसकी स्थिति और भाग्य दोनों पर ही संकट के बादल छा गये। सम्राट को उसे हटाने में उतना ही थोड़ा खेद हुआ जितना किसी व्यक्ति को एक टूटी हुई छड़ी को ईंधन के तौर पर जलाने में होता है। अब्दुल अहद खां को उसके स्थान पर नायब-वजीर बनाया गया तथा उसे मज्द-उद दौला का खिताब दिया गया। मिर्जा नजफ खां को दूसरा बख्शी नियुक्त किया गया तथा उसे अमीर उल उमरा के खिताब से सम्मानित किया गया (५ जुलाई १७७३)।[1] मिर्जा के दिल्ली में पुनः प्रतिष्ठित हो जाने से नवलसिंह का चिन्तित हो जाना स्वाभाविक था अतः उसने मुगलों के विरुद्ध सिखों की सहायता प्राप्त करने के लिए उनसे बातचीत चलाई। उसने शाही प्रदेशों के विरुद्ध तीन महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में एक साथ

अभियान चलाने की योजना बनाइ —उसकी एक डिवीजन को फरुखनगर[1] को आधार बनाकर दिल्ली के पश्चिम म युद्ध करना था, दूसरी डिवीजन को अलीगढ से आरम्भ करके दोआब म लूट मार करनी थी जबकि मुख्य सेना को जिसकी कमान स्वय उसके हाथ म थी, बल्लभगढ स दिल्ली पर आक्रमण करना था। सिखो से यह अपेक्षा की गई थी कि वे हरियाणा और दिल्ली म जाट सेना के साथ मिलकर काम करेंगे तथा उसकी शक्ति म वृद्धि करेंगे। मिर्जा नजफ खा ने दिल्ली से १४ मील दूर दक्षिण म स्थित बदरपुर[2] म अपना तम्बू गाडा और इस प्रकार उसने दिल्ली स बल्लभगढ जाने वाली सडक पर अवरोध खडा कर दिया। मुगल खेमे से पश्चिम की ओर लगभग ६ मील दूर एक जाट दुग था जिसे मैदानगढी के नाम से जाना जाता था और जिसे सूरजमल के समय म निर्मित कराया गया था तथा जिस पर उस समय तक एक जाट गरीजन का अधिकार था। एक दिन जाट सिफ अपने अक्खडपन मे मुगलो के कुछ पशुओ और घोडो को हाक कर ले गये। मिर्जा नजफ खा न गढी पर आक्रमण करन का आदेश दिया जिस पर कई घटो की घमासान लडाई के बाद अधिकार कर लिया गया। खर उद दीन न लिखा है कि "इस विजय ने मिर्जा नजफ खा की विजया के रिकाड के टाइटिल पृष्ठ को तथा उसके भाग्य की पहली सीढी को प्रमाणित कर दिया है।' (इब्रतनामा, हस्तलिपि पृ० २१२)। हम सचाई के साथ उस भरतपुर[3] के राजपरिवार के दुर्भाग्य के अपशकुन का पूर्वाभास कह सकते हैं।

वर्षा ऋतु का मुश्किल से ही अन्त हुआ होगा कि शत्रुता सामने दिखाई पडने लगी। अभी सितम्बर का केवल आरम्भ था तथा सिख इतने जल्द युद्ध के लिए बिलकुल तयार नही थे। परन्तु नवलसिंह का अन्धा क्रोध इस पराजय के बदले को टालने के लिए बिलकुल तयार नहीं था। उसने अपने साले दानसाही की कमान मे एक शक्तिशाली डिवीजन अतरौली तथा रामगढ (वतमान अलीगढ) के अपने गवनरो दुर्जनसिंह गूजर तथा चन्दू (चन्दन) गूजर की सेनाओ को और अधिक बल पहुचाने के लिए भेजी। दान साही तथा अन्य जाट एव गूजर सरदारो न लगभग २० ००० लोग अपनी कमान म सगठित कर लिए तथा उन्होने दोआब को लूटना आरम्भ कर दिया। उन्होंने सिकन्दराबाद[4] तथा गाजियाबाद[5] तक के परगनों मे लूट पाट की और व नवलसिंह के इस आदेश का अक्षरश पालन कर रहे थे कि जो भी मुगल अधिकारी उनकी सत्ता का प्रतिरोध करे उसे फासी लगा दो। (इब्रतनामा हस्तलिपि, पृ० २१२)। पश्चिमी क्षेत्र मे शकर जाट के नेतत्व म दूसरी जाट सेना न फरुखनगर म आधार बनाकर अपने इद गिद के अधिकाश क्षेत्र को तहस नहस कर दिया तथा गढी हरसारु म घेरा डाल दिया। बादशाह के समथकों के लिए स्थिति इतनी गम्भीर हो गई कि बादशाह न बगाल के गवर्नर को एक पत्र लिखकर उससे सहायता की याचना की। मिर्जा नजफ खा ने मदनपुर में

अपने खेमे से हटने में इनकार कर दिया। उसने नियाज बेग खाँ, ताज मोहम्मद खाँ तथा अन्य जम तूरानी और बलोच सरदारों को ५०० अश्व सैनिकों के साथ दानशाही से लड़ने के लिए भेज दिया। सम्राट् ने उनकी शक्ति में वृद्धि करने के लिए लाल पलटन की एक रेजीमेंट तथा राम्रू कमाण्डेण्ट' के नेतृत्व में तोपखाने की कुछ टुकड़ियाँ भेज दीं। मुगल सेना के आगमन पर दानशाही सिकन्दराबाद वापस चला गया, परन्तु मुगल सेनापतियों ने १० या १२ कोस का मार्च करके उसे तब आश्चर्यचकित कर दिया जब वह रात्रि में असावधानी के साथ कैम्प में विश्राम कर रहा था। जाट २५ मील दक्षिण पश्चिम में दनकौर चले गये तथा उसके पड़ोस में १५ सितम्बर १७७३ को उन्होंने शत्रु से टक्कर ली। जाट सेना के कमाण्डर चन्दू गूजर ने सेना की कमान सँभाली तथा मुगलों की सिपाही रजीमेंट तथा तोपखाने पर आक्रमण किया। मजे हुए मगल अश्व सैनिकों को भी आश्चर्य में डालने वाली निर्भीकता के साथ बहादुर गूजर सरदार ने शत्रु के तोपखाने पर पूरी शक्ति के साथ प्रहार करके अपने वीर अनुचरों को प्रेरणा प्रदान की। परन्तु बन्दूकों और तोपखाने की गोलियों की बौछारों ने आक्रामक सेना को भयानक रूप से तोड़ दिया, केवल थोड़े से सैनिक अपने घायल नेता के साथ सिपाहियों की पंक्तियों को तोड़कर भीतर प्रवेश करने में सफल हो सके और वहाँ वे अपने शौर्य का प्रदर्शन करके संगीनों के प्रहार से घायल होकर वीरगति को प्राप्त हुए। यह लड़ाई घमासान तरीके से दो या तीन घंटे चली, यह मनुष्य के मजातीय पराक्रम तथा विज्ञान एवं अनुशासन के विरुद्ध भयानक युद्ध था। चन्दू गूजर के दुर्भाग्य से हतोत्साहित न होकर अतरौली के गवर्नर राव दुर्जनसिंह गूजर के पुत्र ने ५०० अश्व सैनिकों के अपने रिसाले के साथ आक्रमण का नेतृत्व किया तथा इस युद्ध में उसके २०० आदमी मारे गये। इसके उपरान्त अश्व सेना के दो जाटों ने जिसमें प्रत्येक के साथ तीन सौ सैनिक थे दृढ़तापूर्वक शत्रु पर आक्रमण किया, परन्तु इस बार भी परिणाम उतने ही अनर्थकारी थे जितने पहले थे, इसमें भी सभी लोग मार डाले गये। दानशाही जिसके पास उस दिन दूसरी कमान थी, गम्भीर रूप से घायल हुआ और उसे एक छोटे कच्चे किले में शरण लेने के लिए बाध्य होना पड़ा, जहाँ दो दिन बाद उसकी मृत्यु हो गयी। जाट सेना के अवशेष टूट गये और वे यमुना के उस पार भाग गये। रणक्षेत्र में भारी क्षति के अलावा नदी पार करते समय भी दो सौ लोगों को अपने प्राणों को गवाना पड़ा।' नवलसिंह की सेना को अभी इससे भी बड़ी विपत्ति की प्रतीक्षा थी।

बरसाना की लड़ाई

दनकौर की लड़ाई (१५ सितम्बर १७७३) में मुगल विजय ने उस क्षेत्र में जाट

आक्रमण द्वारा उसने गनौर का दुर्ग वर लिया था। लगभग एक पखवाड़े के बाद यह समाचार प्राप्त हुआ कि जाट अपनी इस्माइल पर अपने गढ़ फरखनगर से आक्रमण कर रहे हैं। मिर्जा नजफखा ने तुरन्त अपने लेफ्टीनेन्ट नजफ कुली की कमान में एक शक्तिशाली सेना उस स्थान का मुक्त कराने के लिए भेजी ताकि उस क्षेत्र में जाटों का आधिपत्य सदैव के लिए समाप्त हो जाए। नवलसिंह के विरुद्ध लड़ने वाली मुख्य सेना में कितना का भरने के लिए उसने दो आव में अपनी सेनाओं को वापस बुलाया। इस समय नवलसिंह का जो अपना कैम्प फतेहपुर सीकरी (बलोच)'' बल्लभगढ़ से ५ माल दक्षिण में था दो आव में अपनी सेना की अनपकारी पराजय से टूट गया। उसने बल्लभगढ़ में अपनी एक मजबूत गरीजन छोड़ दी और वह पहले पलवल और उसके बाद होडल में ५, माल दक्षिण में स्थित होडल चला आया। मिर्जा नजफ खा ने जाट सेना का पीछा किया तथा होडल में साढ़ तीन मील उत्तर में बचारी के स्थान पर उस पकड़ लिया (१७७३ के अक्टूबर का मध्य)। बल्लभगढ़ के स्वामित्वहीन उत्तराधिकारी हीरा सिंह और अजीतसिंह (अजीतसिंह'' राव किशन दास का पुत्र था तथा हीरासिंह किशन दास का। नवलसिंह ने बल्लभगढ़ को उनके पिता से छीन लिया था) ने मिर्जा नजफ खा को अपनी सेवाए अर्पित कर दी थी। उसने अजीतसिंह को बल्लभगढ़ का कमाण्डेण्ट और गवर्नर नियुक्त कर दिया तथा किले को परने के लिए उसके पास एक छोटी-सी टुकड़ी छोड़ दी। हीरासिंह मुगल सेनापति के साथ रहा और उसने अपने देश एव लोगों के साथ गद्दार की स्वाभाविक भूमिका अदा की। दानो सेनाओं ने एक दूसरे से चार मील के फासले पर अपने खेमे गाड़ दिए क्षुद्रमुठ लड़ाइयाँ में कई दिन निकल गए जिनमें मुस्लिम सनिकों का पलड़ा भारी रहा। एक दिन इत्तिफाक से जाट सेना आश्चर्य चकित रह गई। जमादार अलीकुली खा ने शत्रु के खेमे के पड़ोस के कुछ आदमियों को पकड़ लिया तथा उनसे उसे यह पता चला कि नवलसिंह भोजन कर रहा है तथा उनके सनिक अपना भोजन पकाने में व्यस्त हैं। नजफखा के खेमे से एक दल तुरन्त घोड़ों पर रवाना हुआ। धूल का एक बादल पश्चिम की ओर से आता हुआ दृष्टिगोचर हुआ। जाट खेमे में कुछ सनिकों ने चिल्लाकर कहा कि नजफ खा के सनिक आ रहे है। जाट घबराकर सब दिशाओं में भागने लगे। नवलसिंह की बुद्धि भी कुछ समय के लिए हतप्रभ हो गई और फिर वह भी हाथी पर चढ़कर कोटमान की ओर भाग गया (इब्रतनामा हस्तलिपि पृ० २३२)।

इस बीच नजफ कुली बराबर आगे बढ़ रहा था मेवात की पहाड़ियां उसके दाई ओर थी तथा वह जाटों को पश्चिम की ओर खदेड़ रहा था। जाट सेना से जो उसकी पहली टक्कर हुई उसमें उसने जाटों से चार राहकलाह छीन लिए। इसके उपरांत वह बादन'' ?) पहुंचा उस समय शत्रु ७ कोस के फासले पर था। १६ अक्टूबर को मसाद को एक पत्र मिर्जा नजफखा का लिखा हुआ प्राप्त हुआ जिसमें

उसने उसे यह शुभ सदेश भेजा था कि नवलसिंह भाग गया है और उसने गढी (यानी कोटमान) म शरण ली ह। शत्रु की सना को पराजित कर दिया गया ह (नवलसिंह का फरुखनगर म जनरल) तथा शाही सना ने उसके समस्त असबाब एव तोपखाना पर अधिकार कर लिया है नजफ कुली शत्रु का पीछा करने के लिए गया है। (वाका प० २७०)। नजफ कुली ने जाट सना के मवात की ओर पश्चागमन को तोड दिया और उसे उत्तर म फरुखनगर की ओर भगा दिया। उसने इस स्थान का घेरा डाला परन्तु उसके सरदार ने उसे इसके तुरत बाद शहर बुला लिया। नवाब मुसावीखा बलोच ने जो फरुखनगर का भूतपूर्व स्वामी था, उसके बाद उसका स्थान ग्रहण किया।

नवलसिंह के भाग जाने के उपरान्त मिर्जा नजफखा ने १७ अक्टूबर को रात्रि को अभियान की भावी योजना पर विचार करने के लिए युद्ध परिषद का आयोजित किया। उसके सभी अधिकारी इस मत के थे कि अगले प्रातःकाल उन्हे भगोडों का पीछा करने के लिए जाना चाहिए तथा अपने खेमे को बेचारी स हटाकर उस स्थान पर ले जाना चाहिए जहा पहले जाटो का खेमा था। परन्तु हीरासिंह जाट ने नवाब स यह निवेदन किया कि नवलसिंह की सेना के विघटन के सम्बन्ध मे कोई निश्चय नही है नवलसिंह कोटमान के दुर्ग स अपने पृष्ठभाग की सहायता स युद्ध की तयारी कर सकता ह—जिन लोगो ने भरतपुर के राजपरिवार की उदारता का उपयोग किया है वे सुगमता स राजा का साथ नही छोडगे अपितु वे लडाई के दिन उसके लिए अपने प्राणो का भी उत्सर्ग कर देंगे। उसने आगे कहा कि इस चरण म जसे लोग अपने साथ है क्योकि अमीर उल उमरा की सना म नये रगरूट थे जिनके शौर्य की अभी परीक्षा भी नही हुई थी उनके बलबूते पर टक्कर लेना बुद्धिमानी की बात नही होगी। उसने कहा यह उचित होगा कि शीघ्रता स डीग की ओर आगे बढा जाय तथा शत्रु का पीछा करने की योजना छोड दी जाय। यदि आपके मन्शा को जानकर नवलसिंह कोटमान स बाहर आ जाय तो आप उसमे लाभ की स्थिति म लडाई लड सकते है यदि वह भगवान की अनुकम्पा से अपने स्थान पर निष्क्रिय बना रहता है तो स्वामी की अनुपस्थिति म डीग पर सुगमतापूर्वक अधिकार हो जाएगा। मिर्जा नजफखा ने हीरासिंह के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया तथा डीग पर चढाई करने का आदेश दे दिया। कोटमान को चार या पाच मील पूर्व म छोडकर मुगल सना दिल्ली-आगरा के शाही मार्ग पर निरन्तर आगे बढती रही। उसने कोसी[1] छाता[15] तथा मार्ग म स्थित अन्य परगनो को लूटा तथा गोवर्धन होते हुए डीग की सडक पकडने के लिए वह २२ अक्टूबर को महर[11] पहुची। नवलसिंह ने मिर्जा नजफखा की अपनी राजधानी पर कुदृष्टि का अन्दाज लगाकर अपनी सेना के साथ कोटमान को छोड दिया तथा छोटा मार्ग पकडकर वह नन्दगाव[1] होता हुआ बरसाना[16] उसी समय

पहुँच गया। इस प्रकार नवलसिंह के उनकी दायी तरफ आकस्मिक तरीके से आ जाने पर मुस्लिम सेना का आगे की ओर बढ़ना रुक गया। डीग का घेरा भी अब सम्भव नहीं था क्योंकि जाट अपने लक्ष्य के कम से कम मुस्लिम सेना की अपेक्षा एक मास अधिक निकट थे। नजफखाने शहर में अपना खेमा गाड़ा परन्तु एक या दो दिन बाद उसने अपना खेमा शहर और बरसाना के मध्य में स्थित शाहपुर में गाड़ दिया ऐसा करते समय उसने अपना भारी सामान तथा अनुचर वहीं छोड़ दिए। छुटपुट लड़ाइयाँ एक सप्ताह से अधिक समय तक चलती रहीं। पड़ोस में रसद की कमी हो जाने के कारण नवाब के सैनिकों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था इस समय नवाब पर शत्रु पर आक्रमण करने के लिए ज़ोर पड़ रहा था।

स्थिति की कुंजी इस समय नवलसिंह के हाथों में थी। बरसाना की दुर्गीकृत पहाड़ी से उसका पृष्ठभाग सुरक्षित था तथा वह स्वयं खेमे में था अतः वह जब तक चाहता युद्ध टाल रह सकता था क्योंकि इस क्षेत्र के समस्त प्रसाधनों पर उसका स्वामित्व था। वह शत्रु को प्रतीक्षा करवाकर मार सकता था। जैसी मिर्जा नजफ की आशंका थी। परन्तु उसके उत्तेजनाशील चरित्र के लिए इस प्रकार की रणनीति सर्वथा अनुपयुक्त थी। ३१ अक्टूबर को प्रातःकाल नजफखा शत्रु की शक्ति का अन्दाज लगाने के लिए अपने सैनिकों को साथ लेकर बाहर आ गया। नवलसिंह की जिसमें युद्ध करने की योग्यता के न होते हुए भी लड़ने की आश्चर्यजनक उत्सुकता थी, सुगमतापूर्वक उकसाया जा सकता था। दिन की जब पाँच घड़ियाँ बीत चुकी थीं, युद्ध आरम्भ हुआ।

नवलसिंह ने अपनी सेना को तीन डिवीजनों में विभाजित किया तथा उन्हें एक दूसरे से कुछ फासले पर तैनात किया। दाईं तरफ बन्दूकचियों की छः बटालियन थीं जिनका नेता समरू था और जिन्हें यूरोपियन तरीके से ड्रिल कराई गई थी, उनके साथ में तीन बटालियन जिन पर पलीतों के समतल ठार बन्दूकें थीं और जिनके माहरे पर संगीन लगी हुई थीं। इन बटालियनों का नेतृत्व भी फ्रेंच अधिकारी के पास था। सामने में लट्ठों और शेरों के समान १२ हजार नागा बैरागी थे नवलसिंह। सहायता के लिए आये हुए राजाओं की कमान में १० हजार अश्व सैनिक और पैदल अन्य सेना मिलकर बाईं बाजू की रक्षा करते थे। सामने लोहे की जंजीरों से बंधा हुआ तोपखाना था विश्वासपात्र सेनापतियों को पृष्ठभाग में तैनात किया गया था तथा स्वयं नवलसिंह केन्द्र में था, उसके चारों ओर पराक्रमी अनुचर थे। दूसरी ओर नागा बैरागियों से टक्कर लेने के लिए मुल्ला रहीम दाद खाँ को उसके रुहेलाओं के साथ तैनात किया गया था समरू की डिवीजन के मुकाबले में रजा बेग खाँ तथा रहीम बेग खाँ को अपनी अश्व सेना तथा बादशाह की पैदल सेना के साथ नियुक्त किया गया था तथा नजफकुली खाँ और अफरासियाब खाँ को तोपखाने और नवलसिंह के टक्कर के लिए केन्द्र में खड़े किए गए थे। मिर्जा

उसने उन यह शुभ सन्देश भेजा था कि नवलसिंह भाग गया है और उसने गढ़ी (यानी कोटमान) म शरण ली है। शत्रु की सना को पराजित कर दिया गया है (नवलसिंह को फर्रुखनगर म जनरल) तथा शाही सेना ने उसके समस्त असबाब एव तोपखाना पर अधिकार कर लिया है नजफ कुली शत्रु का पीछा करने के लिए गया है। (वाका पृ० २७०)। नजफ कुली न जाट सना के मवात की ओर पश्चागमन को तोड दिया और उस उत्तर म फर्रुखनगर की ओर भगा दिया। उसन इस स्थान को घेरा डाला परन्तु उसके सरदार न उसे इसके तुरन्त बाद शहर बुला लिया। नवाब मुसावीखा बलोच न जो फर्रुखनगर का भूतपूर्व स्वामी था उसके बाद उसका स्थान ग्रहण किया।

नवलसिंह के भाग जाने के उपरान्त मिर्जा नजफखा न १७ अक्टूबर की रात्रि को अभियान की भावी योजना पर विचार करने के लिए युद्ध परिषद का आयोजित किया। उसके सभी अधिकारी इस मत के थे कि अगले प्रात काल उन्हें भगोडो का पीछा करने के लिए जाना चाहिए तथा अपने खेमे को बेचारी से हटाकर उस स्थान पर ले जाना चाहिए जहा पहले जाटो का खेमा था। परन्तु हीरासिंह जाट न नवाब से यह निवेदन किया कि नवलसिंह की सेना के विघटन के सम्बन्ध में कोई निश्चय नही है नवलसिंह कोटमान के दुर्ग में अपने पृष्ठभाग की सहायता से युद्ध की तैयारी कर सकता है—जिन लोगो न भरतपुर के राजपरिवार की उदारता का उपयोग किया है वे सुगमता से राजा का साथ नही छोडेंगे अपितु वे लडाई के दिन उसके लिए अपने प्राणो का भी उत्सर्ग कर देंगे। उसने आगे कहा कि इस चरण में जैसे लोग अपने साथ है क्योकि अमीर उल उमरा की सेना में नये रंगरूट थे जिनके शौर्य की अभी परीक्षा भी नही हुई थी उनके बलबूते पर टक्कर लेना बुद्धिमानी की बात नही होगी। उसने कहा यह उचित होगा कि शीघ्रता से डीग की ओर आगे बढा जाय तथा शत्रु का पीछा करने की योजना छोड दी जाय। यदि आपके मंशा को जानकर नवलसिंह कोटमान से बाहर आ जाय तो आप उससे लाभ की स्थिति में लडाई लड सकते हैं यदि वह भगवान की अनुकम्पा से अपने स्थान पर निष्क्रिय बना रहता है तो स्वामी की अनुपस्थिति में डीग पर सुगमतापूर्वक अधिकार हो जाएगा। मिर्जा नजफखा न हीरासिंह के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया तथा डीग पर चढाई करने का आदेश दे दिया। कोटमान को चार या पाच मील पूर्व में छोडकर मुगल सेना दिल्ली-आगरा के शाही मार्ग पर निरन्तर आगे बढती रही। उसने कोसी[17] छाता[18] तथा मार्ग में स्थित अन्य परगनो को लूटा तथा गोवर्धन होते हुए डीग की सडक पकडने के लिए वह २२ अक्टूबर को सहर[19] पहुची। नवलसिंह न मिर्जा नजफखा की अपनी राजधानी पर कुदृष्टि का अन्दाज लगाकर अपनी सेना के साथ कोटमान को छोड दिया तथा छोटा मार्ग पकडकर वह नन्दगाव[1] होता हुआ बरसाना[16] उसी समय

पहुँच गया। इस प्रकार नवलसिंह के उनकी दायी तरफ आकस्मिक तरीके से आ जाने पर मुस्लिम सेना का आगे की ओर बढना रुक गया। डीग का घेरा भी अब सम्भव नहीं था क्योंकि जाट अपने लक्ष्य के कम से-कम मुस्लिम सेना की अपेक्षा एक मील अधिक निकट थे। नजफखान शहर में अपना खेमा गाडा परन्तु एक या दो दिन बाद उसने अपना खेमा शहर और बरसाना के मध्य में स्थित शाहपुर में गाड दिया एवं इस समय उसने अपना भारी सामान तथा अनुचर वहीं छोड दिए। छुटपुट लडाइयाँ एक सप्ताह से अधिक समय तक चलती रहीं। पडोस में रसद की कमी होने जाने के कारण नवाब के सैनिकों को कठिनाइयों का सामना करना पड रहा था इस समय नवाब पर शत्रु पर आक्रमण करने के लिए जोर पड रहा था।

स्थिति की कुंजी इस समय नवलसिंह के हाथों में थी। बरसाना की दुर्गीकृत पहाडी से उसका पृष्ठभाग सुरक्षित था तथा वह स्वयं खेमे में था अत वह जब तक चाहता युद्ध टाल सकता था क्योंकि इस क्षेत्र के समस्त प्रसाधनों पर उसका स्वामित्व था। वह शत्रु को प्रतीक्षा करवाकर मार सकता था। जैसी मिर्जा नजफ खाँ की आशंका थी। परन्तु उसके उत्तेजनाशील चरित्र के लिए इस प्रकार की रणनीति सर्वथा अनुपयुक्त थी। ३१ अक्टूबर को प्रातःकाल नजफखाँ शत्रु की शक्ति का अन्दाज लगाने के लिए अपने सैनिकों को साथ लेकर बाहर आ गया। नवलसिंह की जिसमें युद्ध करने की योग्यता के न होते हुए भी लडने की आश्चर्यजनक उत्सुकता थी, सुगमतापूर्वक उकसाया जा सकता था। दिन की जब पाँच घडियाँ बीत चुकी थी युद्ध आरम्भ हुआ।

नवलसिंह ने अपनी सेना को तीन डिवीजनों में विभाजित किया तथा उन्हें एक दूसरे से कुछ फासले पर तैनात किया। दाई तरफ बन्दूकचियों की छः बटालियन थी जिनका नेता समरू था और जिन्हें यूरोपियन तरीके से ट्रेनिंग कराई गई थी उनके साथ में तीन बटालियन और थी जिन पर पलीतेदार बन्दूकें थीं और जिनके माथे पर संगीन लगी हुई थी। इन बटालियनों का नेतृत्व भी फ्रेंच अधिकारी के पास था। साथ में नागा और अश्व के समान १२ हजार नागा बैरागी थे, नवलसिंह की सहायता के लिए आये हुए राजाओं की कमान में १० हजार अश्व सैनिक और पैदल सैन्य नाना मिलकर बाई बाजू की रक्षा करते थे। सामने लोहे की जंजीरों से बंधा हुआ तोपखाना था विश्वासपात्र सेनापतियों को पश्चभाग में तैनात किया गया था तथा स्वयं नवलसिंह केन्द्र में था। उसके चारों ओर पराक्रमी अनुचर थे। इन चारों नागा बैरागियों से टक्कर लेने के लिए मुल्ला रहीम दाद खाँ को उसके रुहेलों के साथ तैनात किया गया था। समरू की डिवीजन के मुकाबले में नजफ बेग खाँ तथा रहीम बेग खाँ को अपनी अश्व सेना तथा बादशाह की पल्टन सहित [illegible] तोपखाना और नवलसिंह से टक्कर लेने के लिए केन्द्र में खडे किए गए थे। मिर्जा

छोड़कर भदावर की ओर भाग गया। नजफ खां ने दाऊद बेग खां करची को आगरा के किला का कमाण्डर नियुक्त किया।[11] जाटों से आगरा को छीनने के उपरान्त नजफ खां के पहले अभियान का अन्त हो गया। इसके उपरान्त वह वजीर उन मुल्क से भेंट करने के लिए इटावा गया। कुछ महीनों के लिए उसका ध्यान रुहेलाओं के मामलों में तथा अब्दुल अहद खां के दरबार के षडयन्त्रों में लगा रहा।

संदर्भ

१ एम मैडक ने इन स्थानों का नाम नहीं बताया है। उसने लिखा है रीजेन्ट ने इन दो नगरों की प्रतिरक्षा का दायित्व अपने दो सम्बन्धियों को सौंपा था और उन्होंने इस विश्वास के गर्व में अपने को विद्रोही बना लिया तथा अपने को इन नगरों का स्वामी घोषित कर दिया। (लॉ नवाब रेने मडक सक्शन २६)। सम्भवतः इनमें से एक स्थान बल्लभगढ़ रहा होगा जिसे हम अन्य स्रोतों से मालूम है नवलसिंह ने नगर के संस्थापक बल्लूजाट के पोते से छीना था।

२ मिर्जा नजफ खां रबी I, ११८२ हि० को दिल्ली लौटा था। हिसाम-उद्-दीन को नायब वजीर के पद से इस महीने के पहले सप्ताह में अलग किया गया था। १४वीं रबी I (५ जून १७७३) को नजफ खां को दूसरा बख्शी बनाया गया तथा उसी दिन हिसाम-उद्-दीन को गिरफ्तार किया गया और उसे नजफ खां के घर में ५ वर्ष तक बन्दी बनाकर रखा गया। उसकी नौ लाख रुपये की सम्पत्ति जिसमें नगदी और सामान सभी शामिल था जब्त कर ली गई इसमें से एक तिहाई नजफ खां को बादशाह की ओर से अनुग्रह के रूप में दे दी गई तथा शेष शाही खजाने में चली गई। (वाका २७० ३७३)

३ फर्रुखनगर राजपूताना मालवा रेलवे पर गढ़ी हरसारू जंक्शन से १० मील के फासले पर स्थित है।

४ वाका में नजफ खां के कैम्प के स्थान को बदरपुर अथवा बदनपुर बताया गया है किन्तु मानचित्र पर उसकी पहचान नहीं की जा सकती। खैर-उद दीन ने उसे बारह पुल बताया है (यानी हुमायूं के मकबरे के निकट बारह महराबों का पुल) परन्तु यह बहुत सही नहीं है। बदरपुर दिल्ली-आगरा मार्ग पर अनेक चरणों में से एक है।

५ मदानगढ़ी (इब्रतनामा ह० पृ० २१२) तुगलकाबाद से २ मील दक्षिण में और मन्दागढ़ से ६ मील दक्षिण पश्चिम में स्थित है। खैरूद्दीन के विवरण सुनिश्चित नहीं हैं फिर भी सही नहीं हैं और यदा कदा भ्रामक भी हैं। वह लिखता है कि

मदानगढ़ी पर अधिकार और दनकौर के पास दानशाही तथा चन्दू गूजर की हार तुकाजी होल्कर द्वारा दिल्ली के घेरे से पूर्व (दिस० १७७२ मार्च १७७३) में हुई थी। यह पूरी तरह अनगल है जो अंग्रेजी तथा फारसी इतिहास के पूर्णत विपरीत है। उनकी यह कहानी कि जाटों ने नजफ खान के घुड़सवारों पर उस समय बन्दूकें चलाई थीं जिस समय वे कुतुब उद दीन के मकबरे की यात्रा को जा रहे थे, गलत है। चहारे गुलजारे शुजाई के आधार पर हम यह मानते हैं कि उनकी शत्रुता का उत्कर्ष जाटों द्वारा पशुओं को हाँक ले जाने के कारण हुआ था। मुझे नवलसिंह के विरुद्ध मिर्जा नजफ खान की लडाई के कई वर्णन इण्डियन हिस्टोरिकल कौंसिल कमीशन की पाचवीं बैठक में पढ़े गये मेरे लेख में शामिल थे इसलिए अस्वीकार करने पड़े हैं क्योंकि वे केवल खरुद्दीन के विवरण पर आधारित थे।

६ सिकन्दरनामा २८ २५ ल० ७७ -८५

७ गाजियाबाद पूर्वी रेल पर दिल्ली से लगभग २० मील पूर्व में है।

८ पत्र इस प्रकार है जाटों ने राजधानी के चारों ओर बगावत कर दी है तथा उन्होंने अपनी सेना सिकन्दराबाद भेज दी है। यहा के निवासियों को उन्होंने अपमानित किया है तथा उन पर जुल्म ढाये हैं तथा वे शाही सेना का विरोध करने के लिए आगे बढ़ रहे हैं और अब वे उसके बिलकुल निकट हैं। उन्होंने सिखों को भी अपनी सहायता करने के लिए आमंत्रित किया है। मेरी यह इच्छा है कि गवर्नर बहादुर अधिकारियों की कमान में एक ब्रिटिश सेना तुरन्त भेज दे।" यह पत्र २२ सितम्बर १७७३ को लिखा गया था। (फारसी पत्राचार हस्तलिपि)

९ वाका प० २८२ इब्रतनामा पृ० २१२ में 'सिपाहियों की २ रेजामेंटों' का उल्लेख है। 'चहार में लाल पलटन का जिक्र है। रामू कमाण्डर के नाम का उल्लेख शाहआलमनामा में है।

१० १२ अक्टूबर १७७३ के एक समाचार से इस युद्ध का पूरा विवरण प्राप्त हुआ है।—

मुगल विजय का समाचार दिल्ली २९वीं जमाद II ११८७ हि० को पहुचा। सदेश के पहुंचने के यदि दो दिन निकाल दिये जाए तो यह युद्ध २७वीं जमाद II (१५ सितम्बर १७७३ वाका हस्तलिपि प० २७३) को हुआ था। खैर-उद्-दीन में लिखा है कि यह लडाई मदानगढ़ी को जीतने के बाद हुई थी, जो बिलकुल सही है परन्तु ये दोनों घटनाएं तुकोजी और नवलसिंह द्वारा डाले गये दिल्ली के घेरे के बाद में घटी थीं उसके पहले नहीं (यानी मार्च १७७३ के पूर्व) उसने चन्दू गूजर को बहादुर व रुस्तम (बहादुरी में जिसका कोई जवाब नहीं) बताया है और लिखा है कि उस सिपाहियों की पंक्ति में

उनकी सगीनों से घायल करके मार दिया गया (इबरतनामा हस्तलिपि पृ० २१४) फारसी पत्राचार हस्तलिपि में लिखा है कि उसके सिर को ताज मोहम्मद खाँ बलोच ने काट डाला। हरचरन ने इसका सही ब्यौरा दिया है उसने जो इसकी तिथि जमाद I ११८७ बताई है वह सही है।

११ चहार गुलजार तथा मिर्जा नजफ खा द्वारा बगाल के गवनर को लिखे गये पत्र में फतेहपुर सीकरी को उस स्थान के रूप में व्यक्त किया है जहा नवलसिंह का खेमा था। एक सीकरी का उस चरण के रूप में उल्लेख है जो पिरथाना तथा बल्लभगढ के बीच में (पिरथाना से तीन मील उत्तर तथा बल्लभगढ से ५ मील दक्षिण) आगरा दिल्ली माग पर स्थित है (प्रो० जयनाथ सरकार द्वारा रचित इण्डिया ऑफ औरगजेब ' XcVii) इस प्रकार का कोई स्थान आधुनिक एटलस में नही पाया जाता। मानचित्र को देखने से पता चलता है कि जिस स्थान का उल्लेख किया जा रहा है वह फतेहपुर बलोच है। यह स्थान भी इन स्थानों से उतने ही फासले पर है। यह आश्चय की बात है कि हरचरण ने इस स्थान को आगरा के निकट स्थित प्रख्यात फतहपुर सीकरी मानकर भ्रम उत्पन्न किया है। उसने नजफ खा का दूसरा होल्ट धोलपुर बताया है जो इस गलती का आवश्यक परिणाम है।

१२ अजीतसिंह राव किशनदास और हीरासिंह विशनदास का बेटा था। इनके पिताओ से राजा नवलसिंह ने अप्रल १७७४ के तीसरे सप्ताह में एक लम्बे घेरे के बाद बल्लभगढ छीन लिया था। नजफखान ने दोनो को राजा की उपाधि प्रदान की ओर अजीतसिंह को सालार जग के खिताब से सम्मानित किया (दिल्ली गाजेटियर पृ० २१३)

१३ 'वाका' की हस्तलिपि मे पलवल का उल्लेख है जो दिल्ली से ३० मील दूर दक्षिण में स्थित है। यह सोचना बेकार है कि नजफकुली फरुखनगर जाने के लिए पलवल जायेगा। यह नकल करने वाले की भूल प्रतीत होती है। सम्भवत यह स्थान बावल रहा होगा जो रेवाडी से १० मील दक्षिण में स्थित है।

१४ कोसी कोटमान से सात मील दक्षिण पूर्व में है।

१५ छाता कोसी से १० मील दक्षिण पूर्व मे है तथा शहर से ११ मील उत्तर मे है।

१६ शहर मथुरा से १५ मील उत्तर-पश्चिम मे है तथा बरसाना से ७ मील पश्चिम मे है।

१७ नन्दगाव कोसी गाव से ८ मील दक्षिण-पश्चिम में है और वह बरसाना से ७ मील उत्तर मे है।

१८ बरसाना मथुरा से २२ मील उत्तर-पश्चिम मे है तथा डीग से १२ मील उत्तर में है।

१९ वाका-ए शाहआलम सानी हस्तलिपि, पृ० २७१) तथा फारसी पत्राचार, १७ नवम्बर १७७३ में प्रकाशित समाचार में एक ही तिथि यानी १४ शवाल ११८७ हि० का उल्लेख है। पत्र में समाचार का विवरण निम्नलिखित है जो इबरतनामा से कुछ भिन्न है 'नजफ कुली और ताज मोहम्मद दाईं ओर थे नियार बग खा और फतह अली खा दुर्रानी बाईं ओर थे इंग्लिश बटालियन और तोपखाना सामने था मध्याह्न में लगभग १ बजे नवलसिंह की सेना पर तोपखाने से आक्रमण किया गया जो पांच बजे शाम तक चला। नवलसिंह भाग गया, समरू तथा बालानन्द ने युद्ध जारी रखा। घमासान युद्ध हुआ और अन्त में बालानन्द तथा कुछ अन्य घातक रूप से घायल हुए। शत्रु पक्ष के (जाटो के) लगभग २०० लोग मारे गए। समरू के अधिकांश सैनिक वीर गति को प्राप्त हुए इस युद्ध में मुगलो के लगभग २००० व्यक्ति मारे गए तथा ३०० घायल हुए।

२० कोटमान (मथुरा जिले में) कोटवन के नाम से भी जाना जाता है। वह दिल्ली आगरा ट्रक मार्ग पर गुड़गांव जिले की सीमा रेखा से एक या दो फर्लांग की दूरी पर स्थित है। अपनी ऐतिहासिक यात्रा के दौरान मैंने इस किले के खंडहर को देखा है। केवल महल और कचहरी ठीक स्थिति में है, कचहरी में अब गांव की चौपाल है। ये किले में ईंट से बने अन्दर के भाग में स्थित है जिसका बड़ा दरवाजा कचहरी से ५० गज के फासले पर है और जो अभी भी ठीक हालत में है। फाटक के बाहर एक बड़ा पक्का तालाब है। सीताराम के वंशज अभी भी वहां साधारण किसान की तरह से रहते हैं। मैं उनमें से कुछ से मिला हूं मुझे बताया गया कि किले की एक बाहरी दीवार थी जो मिट्टी की बनी हुई थी जो १८ हाथ ऊंची और १६ हाथ चौड़ी थी तथा उसके चारो ओर खाई थी। एक गिरिवर प्रसाद नामक लम्बा गौरवर्ण और ओजस्वी किसान ने मुझे बताया कि नजफ खां के सैनिको ने जाटो पर किस प्रकार आकस्मिक आक्रमण किया जब वह रोटी पका रहे थे वे किस प्रकार कोटमान आये और फिर वहां से बरसाना गए जहां उन्होंने १८ दिन लड़ाई लड़ी संक्षेप में यह पारम्परिक कहानी लिखित इतिहास से मिलती-जुलती है। हरचरन दास ने लिखा है कि कोटमान की लड़ाई १६ दिन चली थी।

२१ नजफ खा ने आगरा किला में २६ रमजान ११८७ हि० (११ दिसम्बर १७७३) को प्रवेश किया। जिकाद के महीने में ७ और २८ तारीखो के बीच मे किले का पतन हुआ (फरवरी १७७४) (हरचरन वाका पृ० २८३)। उसने १५वीं जिल्हिज्जा को नवाब शुजा-उद्-दौला से मिलने को (फरवरी २७, १७७४) यमुना पार की। उसको मूल्यवान भेटें दी गई तथा उसे २२वीं जिल्हिज्जा को शुजा उद्-दौला की तरफ से नायब वजीर बना दिया गया।

खर उ" दीन ने आगरा किला के कमाण्डेंट का नाम दानसाही बताया है जो गलत ह क्योकि उसकी मृत्यु ७ महीने पूव हो चुकी थी। दनकौर की लडाई के दो दिन बाद उमकी मत्यु का समाचार दिल्ली पहुचा था (१६ सितम्बर १७७३) आगरा किले का रक्षक दान साही नही था बल्कि उसका भाई था जैसा हम वाका से ज्ञात होता है। (प० २७३)

चौदहवा अध्याय

भरतपुर राजपरिवार का पतन

मिर्जा नजफ खा के साथ नवल सिंह की नई शत्रुता

नवलसिंह के दुर्भाग्या क वप म १७७४ का मई का महीना सबम अधिक दुर्भाग्यपूण था। प्रत्येक सप्ताह उम किमी न किसी महाविपत्ति की सूचनाए प्राप्त हो रही थी वल्लभगढ हीरासिंह जाट के हवाले कर दिया गया फरुखनगर क दरवाजे मुसावी खा के लिए खोल दिए गए तथा जनरल समरू जो अभी तक जाटा के शत्रुओ के लिए सबसे बडा आतक था, अब अपसरण करके शाही दरबार म शामिल हो गया। इस महीन के पहल बीस दिनो म दुर्भाग्य के य भारी प्रहार उस पर एक के बाद दूसरा करके होते रहे।[1] नवल सिंह न इन सभा क्षतियो को बडे धय के साथ बरदाश्त किया था। यद्यपि उमम जाट के ठडे शीतल साहस और मजबूत बल का अभाव था तथापि उसम वह आशावाद एव अध्यवसाय था जो हठवादिता के बहुत निकट होता है और जो उसकी जाति की एक विशषता ह।

मिर्जा नजफ खा जाटो के विरुद्ध अपन हाल क अभियान के परिणामो स बहुत सतुष्ट था। अब उसका इरादा उनके उन दुर्भेद्य किला को घेर कर अपनी ख्याति को दाव पर लगान का नही था जिन्हाने बडे-स-बडे विजेता की शक्ति दक्षता एव प्रसाधनो को व्यथ कर दिया था। उसका विचार था कि जाटा के दमन का काय लगभग समाप्त हो चुका है और इसलिए उसन अपना ध्यान शाही सत्ता क अन्य विद्रोहियो के ऊपर केद्रित किया। वह रुहेलाओ क विरुद्ध अवध के नवाब क विचारित अभियान म सहयोग करन के लिए दिल्ली म चला। परन्तु जब तक वह युद्ध स्थल पर पहुचता शुजा उद-दौला मीरन कटरा की लडाई जीत चुका था। वह बिसौली की तरफ आगे बढा जहा अफगानो और मिया दोआब के प्रदशा क बटवारे के सम्बन्ध म नवाब वजीर के साथ सामान्य सन्धि[1] हुई थी। वह जून के अन्त तक राजधानी इस निश्चय क साथ लौट आया कि वह सधि की शर्तों को लागू करन के

लिए तथा उसा पिछन विद्राह क लिए दडित करन को जबाता खां क विरुद्ध युद्ध करगा। परन्तु नवल सिंह की आश्चयजनक मानसिक विकृति न उस मिर्जा के विरुद्ध नय शत्रुतापूण काय करन के लिए प्रेरित कर दिया। जाट सरदार न अपन म अधिक शक्तिशाली शत्रु म अविवेकपूण तरीके स उस समय युद्ध मोल लिया जबकि उसका पूण रूपेण राजनीतिक अलगाव हो चुका था। सिख एक पराजित पक्ष का साथ देने क लिए तयार नही थे तथा शुजा-उद्-दौला जो एक सदिग्ध मित्र था अब सक्रिय शत्रु था और मिर्जा नजफ खा के साथ उसका गठबधन था। मराठा जो अपन हित म उसका साथ दे चुके थ, अब अपनी आपसी कलह मे डूबे हुए थ जिनका उदय पेशवा नारायण राव की हत्या के बाद हुआ था। नवल सिंह उस जुआरी की भाति आचरण कर रहा था जो बार-बार हारने के बाद इस आशा म खलता रहे कि आखिरी बाजी म उस खोया हुआ समूचा धन दुबारा मिल जाएगा।

मिर्जा नजफ खा की अनुपस्थिति म राजा नवल सिंह न अपनी खोई हुई स्थिति को पुन प्राप्त करन का प्रयास किया। वह अपनी सना क साथ डीग से बाहर आ गया तथा उसन मिर्जा नजफ खा के अमीलों को अपने प्रदेश स बाहर निकालना आरम्भ कर दिया। परन्तु वह इमस भी सन्तुष्ट नही हुआ और उसने दिल्ली पर आक्रमण करन की धमकी दी। नजफ खा न जबीता के विरुद्ध अपना इच्छित अभियान उस समय तक के लिए स्थगित कर दिया जब तक जाट शक्ति का हमेशा के लिए दमन न हो जाए। जब मानसून अपने पूरे जोर पर था उसने नवल सिंह के विरुद्ध अपना दूसरा अभियान आरम्भ कर दिया। मुगलो के आगे बढ़ने के फलस्वरूप जाट सेना पीछे हट गई और उसन शीघ्रता स सकर' (सुनू खर?) क किले म उस समय शरण ले ली जब मिर्जा उनका पीछा करते करते बरसाना तक आ गया। खान क पास शत्रु के विरुद्ध उसी स्थान पर घरा डालने के अतिरिक्ति कोई दूसरा विकल्प नही था क्योकि जाटों के पृष्ठभाग को पराजित किए बिना डीग पर आक्रमण करना अत्यधिक खतरनाक था। जाट प्रदेश की इस हृदयभूमि म शक्तिशाली दुर्गों की—सुनूखर कामा (तटस्थ प्रदेश जिसका स्वामित्व जयपुर नरश के पास था) डीग कुम्हेर तथा भरतपुर—एक दुर्भेद्य शृखला वतमान थी।

नवल सिंह को इस दुर्गीकृत शरण-स्थान से हटाना जिसका पृष्ठभाग एव पाश्व भाग जयपुर के तटस्थ प्रदेश स आरक्षित था मुस्लिम सना के लिए अत्यधिक दुष्कर सिद्ध हो रहा था। अब रीजेन्ट को अपने भाडे के सनिको पर कोई गव नही था अत वह अपने जाटों का ही अधिक लिहाज करने लगा था। शत्रु द्वारा घिर जान तथा अपन अस्तित्व को कायम रखन के उद्देश्य स युद्ध करन के लिए बाध्य होकर उन्होने भी अपन स्वभाव क अनुरूप अपना साहस एव दृढ़ता को प्रदर्शित

करने में कोई कमी नहीं की। वे प्रतिदिन धावा बोलने के लिए निकलते थे तथा मुस्लिम सैनिकों के साथ छुट-पुट लड़ाईयां लड़ते थे तथा मुस्लिम सेना प्रत्येक लड़ाई में सफलता का दावा नहीं कर सकती थी। घेरा कई दिनों तक खिंचता रहा तथा घिरे हुए लोगों पर उसका लेशमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा उन्हें कामा के किले में गुप्त रूप से सभी प्रकार की सामग्री प्राप्त हो रही थी। राजपूत राजा भी शाही सत्ता के पुनरुज्जीवन से समान रूप से चिन्तित थे उन्होंने यह समझने में कोई भूल नहीं की कि जाट प्रतिरोध के पराभव के उपरान्त विजयी मुगल-युद्ध को राजपूताने के हृदय तक ले जाएंगे तथा उनसे खिराज तलब करेंगे। भरतपुर राज और जयपुर के बीच की पुरानी शत्रुता घमंडी जवाहरसिंह तथा अतिसंवेदनशील माधोसिंह की अस्थियों के साथ विस्मृति के गर्भ में विलीन हो चुकी थी। महाराजा पृथ्वी सिंह द्वितीय की अल्पायु के काल में जिस रोजेसी के पास जयपुर राज्य का नियंत्रण था, उसने नजफ खां के विरुद्ध जाटों की सहायता का निश्चय किया गया था। अपनी सरकार के निर्देश पर कामा का किलेदार गुप्त रूप से नवल सिंह की सेना को रसद पहुंचाता रहा। मिर्जा नजफ खां न तो अनेक बन्दूकों से रक्षित शत्रु की स्थिति पर आक्रमण कर सकता था और न वह किसी भी प्रकार से अपने प्रतिपक्षी को अपनी शरण-स्थली को छोड़कर उसके साथ खुला युद्ध करने के लिए प्रेरित कर सकता था। घेरा चार महीने तक चलता रहा जबकि उसे अब्दुल अहद खां के कुछ षड्यन्त्रों के कारण राजधानी बुला लिया गया। वह नजफ कुली को सेना की सर्वोच्च कमान सौंप कर चला गया तथा दिल्ली पहुंचकर उसने कुख्यात समरू को घुनूघर पर घेरा डालने वाली सेना की सहायता करने के लिए भेजा। समरू ने जो स्थान की स्थिति से भलीभांति अवगत था, नजफ कुली खां को बताया कि जब तक कामा से जाट-सेना को अनाज और चारा मिलता रहेगा घुनूघर के दुर्ग के घेरे का सफलतापूर्वक समापन नहीं हो सकता। नजफ कुली ने कामा के किलेदार को लिखा कि उसे जाटों की सहायता नहीं करनी चाहिए। परन्तु जब यह विरोध प्रदर्शन अप्रभावी सिद्ध हुआ तो निर्भीक सैनिक ने अपने कार्य के राजनीतिक परिणामों पर ध्यान दिए बिना कामा पर आक्रमण करने का निश्चय कर लिया। उसने अपनी सेना का एक भाग किले का घेरा डालने के लिए भेज दिया। घुनूघर में एक शक्तिशाली गैरीजन को छोड़कर नवलसिंह डीग चला गया। अब शाही सेनाओं से टक्कर लेने के लिए कछवाहों ने जाटों के साथ खुलकर गठबंधन कर लिया। कामा के किले की दीवालों पर नजफ कुली की बन्दूकों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा वे इतनी चौड़ी थीं कि दो गाड़ियां उसके ऊपर बिना किसी खतरे के साथ-साथ चल सकती थीं। उसने वीर रुहेला सरदार मुल्ला रहीमदाद से वायदा किया कि वह किला उसको दे दिया जाएगा बशर्ते कि वह उसे जीत ले। एक दिन रहीमदाद ने अपने दुःसाहसी सैनिकों के साथ इस बात की चिन्ता न करते हुए कि उसे इसके लिए

अपने अनुचरों के बिना जीवन गंवाए पश्गे किले पर आक्रमण कर दिया। परन्तु नजफ कुली ने अपने वचन का उल्लंघन करके कामा के दुर्ग का अधिकारी समरू को बना दिया। मुल्ला रहीमदाद ने इन दोनों के प्रति शत्रुता की शपथ ली और वह १२,००० रुहेला अश्वसैनिकों एवं पैदल सैनिकों के साथ नवल सिंह की सेवा में चला गया।

नवल सिंह ने रुहेला सरदार तथा उसके वीर अनुचरों का पुरजोर स्वागत किया। उसने प्रत्येक सैनिक को उपयुक्त वेतन दिया तथा उन्हें बड़ी-बड़ी जागीरें दीं—संक्षेप में उसने उनका पूरा लिहाज किया इसका केवल एक अपवाद था—उसने अपने किसी दुर्ग के फाटक के भीतर उनका विश्वास नहीं किया। १७७५ के वर्ष के आरम्भ में जाटों के लिए सम्भावनाएं अत्यधिक आशाजनक थीं। मिर्जा नजफ खां को न केवल तलवार से साम्राज्य के विरोधियों से बाहर लड़ना था अपितु उसे दरबार में अपनी स्थिति को बनाए रखने के लिए सम्राट और अब्दुल अहद खां जैसे उसके हितैषियों के विरुद्ध कूटनीति के सूक्ष्म हथियार से भी लड़ना था। वह दरबार के षड्यंत्रों से अपने को निकालने में मुश्किल से सफल हो पाया था कि वह गम्भीर रूप से बीमार हो गया। यह समाचार फैल गया कि वह मर गया और इसने जयपुर दरबार को कामा के परगने पर पुनः अधिकार स्थापित करने के लिए प्रभावशाली प्रयास करने के लिए प्रेरित किया। मिर्जा नजफ खां अपनी बीमारी से चंगा हो गया तथा ४ अप्रैल १७७५ (सफर २ ११८६ हि०) को उसने जाटों और राजपूतों पर चढ़ाई करने के लिए सम्राट से विदाई ली। जब मिर्जा के आने के समाचार की जानकारी मिल गई राजा नवल सिंह डीग छोड़कर सूनूखर आ गया जो अभी तक अजेय था। जयपुर की सेनाओं ने भी उसका साथ दिया तथा मित्र सेना ने दुर्ग में अपना खेमा डाल कर अपनी स्थिति को सुदृढ़ बना लिया। मुल्ला रहीमदाद को जो अब जाटों की सेवा में था रुहेलाओं के साथ सूनूखर की दुर्गपंक्तियों के बाहर नियुक्त किया गया। अनेक छोटी मोटी लड़ाइयां हुई जिनमें रुहेलाओं ने अपने पिछले साथियों के विरुद्ध घायल गर्व के बदले की भावना के अनुरूप शौर्य के साथ युद्ध किया। मिर्जा नजफ खां ने उन्हें अपने साथ मिलाने का असफल प्रयास किया उसने कामा तथा उसके अतिरिक्त कई अन्य परगने जागीर के रूप में उसे देने का वायदा किया। परन्तु नवल सिंह और उसके चतुर परामर्शदाता अपने पठान मित्र के कारण शान्ति से नहीं बैठ सकते थे क्योंकि उन्हें सन्देह था कि वह साम्राज्यवादियों के साथ मिला हुआ है। उन्हें आशंका थी कि रहीमदाद उस उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में था जब वह उन पर किसी असावधानी के क्षण में आक्रमण कर देगा। अब उन्होंने एक ऐसी तरकीब सोची जिसमें रुहेला सरदार के उनके सम्बन्ध भी न टूटें और वे उसकी अविश्वसनीय उपस्थिति से भी मुक्त रहें। रहीमदाद से कहा गया कि वह हिन्दुस्तान और

बियाना के विरुद्ध लूटमार के अभियान पर जाए इस लूट म जो भी सम्पति मिलेगी, वह उस मुफ्त उपहार के रूप म द दी जाएगी तथा जिन जिलो को वह जीत लगा वह उसके सनिको का जागीर के रूप म दे दिए जाएगे। जाटो के मश पर बिना सन्देह किए वह इसके लिए तुरन्त तयार हो गया और एकदम उन स्थानो के विरुद्ध उसने अपना प्रस्थान आरम्भ कर दिया। (इबरतनामा, हस्तलिपि पृ० २६७)

एम० मडक जिस सम्राट की तरफ स हिंदुआन और बयाना यह इलाका जागीर के रूप म दिया गया था यह सुनकर अत्यधिक उत्तेजित हुआ कि रहीमदाद ने उस दिशा म प्रस्थान कर दिया है। उसन नजफ खा की स्वीकृति के बिना बरसाना म अपनी चौकी छोड दी तथा बहुत तेज चलकर फतहपुर सीकरी के पडोस म पहुच गया। इस स्थान से थोडी दूर पर जब उसके सनिक एक छोटी नदी को पार कर रहे थ उन्ह रहीमदाद तथा अम्बाजी मराठा को देखकर आश्चय हुआ। एम० मडेक के सिपाहियो न द्रुत गति स अपन को सगठित किया परन्तु उनके कारतूसो क पानी स खराब होन के कारण उनका पहला प्रहार निरथक गया। जब तक वे अपनी बन्दूको म कारतूस दुबारा भर सकत रुहेला अपनी तलवारो के साथ उन पर टूट पडे जिसके फलस्वरूप कुछ तो वीर गति को प्राप्त हुए और अन्य भाग गए। भगदड सम्पूण थी, एम० मैडेक सास लेन के लिए तब तक नही रुका जब तक वह आगरा नही पहुच गया। रहीमदाद ने उस क्षेत्र मे इतना हल्ला मचा दिया कि नजफ खा को उसके विरुद्ध मोहम्मद बेग खा हमदानी के नेतत्व मे जिस आगरा का गवनर नियुक्त कर दिया गया था, एक बडी सेना भेजन के लिए बाध्य होना पडा।

नवलसिह और उसके राजपूत मित्रों न नजफ खा की निजी सेना पर आक्रमण करन का निश्चय किया क्योकि इस समय उसकी सना उसके दो विख्यात सरदारो—एम० मडेक और हमदानी की अपनी सेना के साथ अनुपस्थिति के कारण, काफी कमजोर हो चुकी थी। वे अपनी सुदृढ स्थिति से निकल आये तथा उन्होंने मुस्लिम सेना को युद्ध के लिए १८ मई १७७५ को ललकारा। परन्तु शाही फौज सख्या मे कम होते हुए भी इसलिए कमजोर नही थी क्योकि उसे मिर्जा का श्रेष्ठ सनापतित्व प्राप्त था। जाटो और राजपूतो को युद्ध मे पराजय मिली और वे शीघ्र भाग गए।

राजा नवलसिंह की मृत्यु

युद्ध की ज्वाला को दुबारा प्रज्वलित करन की मूखता के लिए राजा नवलसिंह को भारी मूल्य चुकाना पडा—वस्तुत वह एसी ज्वाला थी जो उसको भस्मीभूत करने

के बाद भी शान्त नहीं हुई। अनेक विपत्तियों तथा पराजयों के बाद भी जाट सरदार पहले की ही भांति दुराग्रही था। विजयी मुगल सेना डीग के दरवाजा पर गरज रही थी वह मांग कर रही थी कि या तो पूर्ण आत्म-समर्पण करो अथवा अन्तिम निर्णय तक युद्ध करो। परन्तु नवलसिंह ने अत्यन्त ठण्डे तरीके से इन दोनों मार्गों को ठुकरा दिया। एक भोली आशा उसके कानों में फुसफुसा रही थी कि उसे निराश नहीं होना चाहिए। अब्दुल अहद खां ने मिर्जा नजफ खां की सेना को विफल बनाने के लिए अथवा उसे विचलित करने के लिए वह सब कुछ किया जो कूटनीति तथा षड्यन्त्र के द्वारा किया जा सकता था। वह मराठाओं को मिर्जा की शक्ति का मर्दन करने के लिए उकसा रहा था—अंग्रेजों से उसकी मैत्री होने के कारण वह उनकी राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए कहीं अधिक खतरनाक था अंग्रेज राघोबा के दावों का पहले से ही समर्थन कर रहे थे। दक्षिण में आरास की लड़ाई लड़ी जा चुकी थी (१८ मई १७७५) तथा उसके परिणाम अपहारी के संरक्षकों के लिए अधिक उत्साहवर्धक नहीं थे। नवलसिंह इस सम्भावना से बहुत अधिक आशावान था कि वर्षा ऋतु की समाप्ति पर मराठा हिन्दुस्तान पर आक्रमण करेंगे जिसके फलस्वरूप मिर्जा जाट प्रदेश को छोड़कर चला जाएगा। इससे भी अधिक आशाजनक यह समाचार था कि जबीता खां की सिखों से मैत्री हो गई है तथा इन दोनों ने मिलकर शाही प्रदेशों पर आक्रमण किया है। नजीब उद-दौला का पुत्र अमीर उल-उमरा के पद तथा दिल्ली के आसपास के इलाके को अपनी विरासत मानता था जिससे मिर्जा नजफ खां और मराठाओं ने उसे यह कहकर वंचित कर दिया था कि वे सम्राट की सत्ता को पुनर्स्थापित कर रहे हैं। अपने पिता की ही भांति वह भी शाही दरबार में तानाशाह की भूमिका अदा करना चाहता था रुहेला परिसंघ के लुप्त हो जाने के कारण वह सिखों पर निर्भर कर रहा था जो इस समय मराठाओं के साथ संघर्ष में रत थे। सिखों ने पहाड़गंज (दिल्ली का पश्चिमी बाहरी भाग) को लूटा और जलाया और रुहेला सरदार स्वयं दोआब में लूटपाट करता रहा। स्थिति इतनी गम्भीर और खतरनाक थी कि सम्राट ने आसफ-उद-दौला को एक पत्र लिखकर उससे बागियों के विरुद्ध सहायता मांगी। मिर्जा नजफ खां ने अर्ध विजित शत्रु को छोड़कर जाने से इन्कार कर दिया क्योंकि इससे उसके पृष्ठभाग का अपमान होता था तथा उसने निश्चय किया कि वह डीग को जीते बिना नहीं लौटेगा। भगवान ने जाट सरदार को अपने देश और जनता के अवश्यम्भावी सर्वनाश के साक्षी बनने के आत्म-संताप से बचा दिया। राजा नवलसिंह ने सम्भवतः यह शपथ ली थी कि उसकी मृत्यु रणभूमि में नहीं होगी अतः उसे इस बात की प्रसन्नता रही होगी कि बृहस्पतिवार १० अगस्त १७७५ को सूर्यास्त से दो घड़ी बाद रोग शय्या पर उसने अन्तिम सांस ली। अपने शरीर की बनावट में वह रोगी था काय प्रणाली में वह कायर था तथा सट्टा लगाने

म उतावला था। वह गलत स्थान पर हठी था तथा अपनी वैयक्तिक सुरक्षा से सम्बद्ध मामलो को छोडकर अन्य सभी मामलो म वह बहादुर था। एक सैनिक एव देशभक्त के रूप म उसकी तुलना डेमोस्थीनस से की जा सकती है जो एथेंस के मच पर फिलिप के सनिको के व्यूह की चिन्ता न करते हुए फिलिपिक्स को मुक्त कर सकता था। यद्यपि उसन अपने सैनिको एव अधिकारियो को सकट के समय अपनी व्यथ की कायरता से निराश किया था, तथापि उनका यह विश्वास हमेशा बना रहा कि अगली बार उसका आचरण ठीक रहेगा। ' उसम प्रशासनिक योग्यता एव सेना पतित्व के गुण नही थे।"* तथापि उसकी प्रजा उसकी सौजन्यता एव उदारता के कारण उससे प्यार करती थी तथा उसकी मृत्यु पर उन सभी ने ईमानदारी से शोक मनाया था।

रहीमदाद का विश्वासघात तथा रणजीतसिंह जाट द्वारा उसका डीग से निष्कासन

मुल्ला रहीमदाद बयाना और आगरा जिलो म सफल हमले के बाद वर्षा ऋतु के आरम्भ म डीग लौट आया था तथा उसन दुग की बन्दूको की छाया म जाट सना के अन्य कमाण्डरो के साथ अपना खेमा गाड लिया था। उसन अपन स्वामी के प्रति निष्ठा का प्रमाण दिया था, यद्यपि उसकी स्वामिभक्ति को आकर्षित करने के लिए कोई बडा प्रलोभन नही था। जिस दिन नवलसिंह की मृत्यु हुई रहेला ने विश्वास घात की एक वीरतापूण तिकडम क द्वारा अपन भाग्य को आजमान का निणय किया। यह जानकर कि नगर के भीतर के लोग शोकमग्न हैं तथा उसकी प्रतिरक्षा के प्रति उदासीन है रहीमदाद खा न उस उपयुक्त अवसर मानकर चार या पाच हजार रुहेला सनिको को युद्ध क लिए तैयार किया। सवप्रथम वह स्वय अपन कुछ विशिष्ट सायियो क साथ नगर क द्वार तक गया जो उसके खेमे के सामन था तथा केवल टहल करने के बहाने उसन उसम प्रवेश पा लिया। उसन उस द्वार पर अधिकार कर लिया तथा अपन अनुभवी सनिको की सहायता स उसने अपन को समूचे नगर का स्वामी बना लिया। उसन प्रत्यक द्वार पर उसकी निगरानी रखन क लिए रुहेलाओ को नियुक्त किया तथा जवाहरसिंह क महल के द्वार पर जाकर हरम की महिलाओ स मीठे शब्द बोलकर और उन्ह धोखा दकर बालक खेरीसिंह को अपन अधिकार म ल लिया। उसन खेरीसिंह को मसनद पर बठाया तथा अपन को उसका डिप्टी नियुक्त कर लिया (इब्रतनामा हस्तलिपि पृ० २१०)। उसन राज्य क प्रत्यक विभाग पर अपनी सत्ता स्थापित कर ली तथा उसने डीग स उन गत अधिकारियों को निष्कासित कर दिया जिन्होने उसके प्रति विरोध व्यक्त किया था। रहीमदाद न आठ जाट सैनिको को अपनी सना म नियुक्त किया तथा उन्हें

म स्थित ह तथा जल व सुन्दर विस्तार व अतिरिक्त उसम कुछ भी दर्शनीय नही ह। जल के विस्तार न न केवल उसवा सुन्दरता म वृद्धि की है उसन उसे शत्रु के लिए लगभग दुगम बनाकर विशेषत वर्षा ऋतु म—उसकी शक्ति को भी बनाया है। प्रकृति क दोषा का मिटान के लिए मानव प्रयास क द्वारा जो कुछ भी किया जा सकता था उस जाटा की शक्ति न स्थान को शक्तिशाली बनान के लिए किया है। बडी मिट्टी की दीवाल जिस पर नगर को घरन वाले बुज निर्मित थे, इतनी असामान्य ऊचाई आर चौडाई की थी कि पहली बार देखने पर ऐसा लगता था कि पहाडियो की वह एक लम्बी शृखला है जिस नगर को घेरने के लिए प्रयुक्त किया गया है (ला नवाब रेन मडक, खड ८)। एक चौडी और गहरी खाई शाह बुज को छोडकर जहा मुख्य प्रवेश द्वार है नगर के चारो ओर स्थित है। यह शाह बुज भी अपन म एक दुग है जिसका अदर का क्षेत्रफल ५० वग गज ह जिम गरीजन के प्रयोग के लिए बनाया गया था और जहा चार प्रमुख बिन्दुओ का सामना करन वाले चार प्रभावशाली बुज थ। इस स्थान स लगभग एक मील दूर तथा लगभग नगर के मध्य म किला ह जो अत्यधिक मजबूत है।—परकोटे ऊचे और मोटे है जिसक ऊपर बुज बन हुए हैं और जिसके चारो ओर एक गहरी खाई है और जिसके सामन एक इमारत है।' बाहर के किले तक पहुचने के माग दुर्गीकृत बाहरी चौकियां तथा इद गिद के मदान पर निर्मित छोटी गढियों क द्वारा अत्यधिक दुगम बना दिए गये थ। इनम स सबसे बडा तथा शक्तिशाली गोपालगढ था जो एक छोटा-सा मिट्टी का किला था और जो शाह बुज के बिलकुल सामन थोडे स फासले पर था। जाट राजा की अभियान्त्रिकी पर 'वाबन' के देशवासी भले ही हस परन्तु यह सत्य है कि उत्तर भारत के दुर्गीकृत नगरो म डीग और भरतपुर सबस अधिक शक्तिशाली थे।

इन दुर्भेद्य दुग-पक्तियो के बीच एक सम्पन्न नगर था जिसकी सम्पन्नता और वभव महान मुगलो की शानदार राजधानियो—दिल्ली और आगरा के ह्रासोन्मुख वभव का उपहास करती थी। हिन्दुओ का सम्मान और धन डीग से अधिक और कही सुरक्षित नही था। बडे व्यापारियो तथा मुगल दरबार के सामन्तो ने वहा अपन खजान और परिवारों को अधिक अच्छी सुरक्षा के लिए बडे और सुदर महल बनाए थ। सभी जातियो के व्यापारी वहा आते थ और उन्होंने डीग म उसकी दीवाना के भीतर अपनी वस्तुओ के भडार स्थापित करके उस एक बडा व्यापारिक नगर बना दिया था। जाटो ने जहां उस उपयोगी बनाया था वहा उसकी सुन्दरता की भी उन्होन उपेक्षा नही की थी। वास्तुकार जिसकी कुशलता की दिल्ली के निधन दरबार म अब कोई माग नही थी, सम्पन्न जाट राजा के सरक्षण की तलाश म था तथा उसन साहसिक सरदार के स्थल को महलो के एसे नगर म परिवर्तित कर दिया जो शक्तिशाली राष्ट्र की राजधानी बनन क उपयुक्त था।

ठाकुर बदनसिंह न अपनी बडी दौलत डीग के सुदरीकरण म खर्च की उसन वहा शानदार महलो का सेट भी बनवाया था जो अब पुराना महल के नाम स जाना जाता है। राजा सूरजमल न यद्यपि अपन साथ कभी न्याय नही किया जसा पवित्र और दानी सेठ सामायत किया करते हैं तथापि सुदर इमारतो को निर्मित करन के मामले म उसन कभी कोई सकोच नही किया। उसके द्वारा बनवाए गए भव्य भवनो म सूरज भवन, किशन भवन तथा गोपाल भवन एक नय प्रकार के स्थापत्य को अभिव्यक्त करते हैं जिसको विशेषज्ञो न जाट शैली की सज्ञा प्रदान की है जिसमे जाट मजबूती और मुगल चमक-दमक का सुदर सम्मिश्रण है। महाराजा जवाहरसिंह कछवाहा राजधानी की मनोहरता एव उसके प्रति साम्य स विशेष रूप स प्रभावित था फलत उसने अपनी राजधानी को अपन सपनो के स्वग के अनुसार वास्तविक रूप देने का प्रयास किया। नौका चालन के लिए बडे-बडे तालाब और सुन्दर उद्यान जिनके बीच मे से कृत्रिम फौवारो म भरी हुई नहरें गुजरती थी इन सबके द्वारा शाही महलो के आकर्षण मे बेशुमार वृद्धि की थी। ऐसा था डीग का भव्य नगर जिसकी सुदरता एव शक्ति न जाटो के विजेता का अपनी विजय के ताज को और भी सुदर बनाने के लिए लालायित किया था।

वर्षा ऋतु मे मिर्जा नजफ खा अपनी मुख्य सना को डीग के पडोस स फरह (मथुरा और आगरा के बीच यमुना तट पर स्थित) ले गया था केवल एक छोटी सी टुकडी को उसन शत्रु पर निगरानी रखन के लिए वहा छोडा था। वर्षा की समाप्ति पर उसने घेरा डालने की फिर स तयारी की तथा उसन अपना खेमा कामा दरवाज से डेढ कोस के फासल पर गाडा। उसन कुछ दिन किले की प्रतिरक्षा के सम्बध म जानकारी प्राप्त करने म व्यतीत किए उसन उसकी शक्ति के सम्बध म उस निकट स देखन क उपरान्त कुछ गलत अनुमान लगाया। वहाँ इतनी बन्दूकें थीं तथा उसकी दीवालो पर गश्त करते हुए इतन बदूकची थ कि उस डीग एक जीवित ज्वालामुखी सा लगा जिसकी हरक इच भूमि स उस आग उबलती हुई सी नजर आई और जिसम स गरा हुए जस्त की अपार बाढ निकल रही थी। इन पक्तिया इतनी व्यापक थी कि उसकी समूची सना प्रभावी रूप स उसकी एक तरफ को ही घरन क लिए पर्याप्त थी। अन्त म उसकी सनिक दृष्टि न इस स्पष्टतया अभद्य युद्ध क दानव म सुभेद्य स्थान खोज लिया। उसन अपन आधे लोगो को शाह बुर्ज क सामन (जहा खाइ समाप्त होती था) तोपखाना खडा करन की जिम्मदारी सौपी तथा स्वय उसने शेष आध सनिको क साथ उनकी फौजी कार्यवाही का आच्छादित करन क लिए गोपालगढ" को घर लिया (इब्रतनामा हस्तलिपि पृ० २७४)। सनिको न डीग की दीवालो स तोपखान और बदूको की गोलिया की बौछार स अपन का बचाव के लिए अपन तोपखाना म खाइया खोद ली थी। कई हजार नागा पदल सनिक डीग और गोपालगढ की बीच की भूमि म अपना समा डाल हुए थ। चूकि

उन्हें कोई भय अथवा चिन्ता नही थी, उनके नेता अपने कुछ अनुचरो के साथ बहुधा तोपखानो से मुसलमानो पर आक्रमण करते थे तथा मिर्जा की सेना के लिए अनाज लाते हुए बैलो को मार्ग से दूर हाक ले जाते थे। इससे उसके खेमे मे खाद्यान्न की कमी हो गई तथा उसके सैनिको को इस कारण चिन्ता हो गई थी। कुछ समय बाद माहम्मद बेग खा हमदानी और नजफ कुली जिन्हे इर्द गिर्द के इलाके का दमन करने के लिए भेजा गया था, खेमे मे बडी मात्रा मे अनाज और युद्ध-सामग्री लेकर लौटे। उनके विजयी सैनिको के आ जाने से घेरा डालने वाली सेना का मनोबल ऊचा हो गया। मिर्जा नजफ खा ने इस प्रकार सहायता पाने के बाद गोपालगढ और डीग के बीच मे पडाव डाले हुए शत्रु को भगाने का निश्चय किया।

एक दिन प्रात काल नवाब अपनी सेना को युद्ध के लिए व्यूहबद्ध करके तथा अपनी बन्दूको को सामने तैनात करके स्वय अपने लिए चुने गए स्थान तक गया। सभी नागा गुसाई जो युद्ध के लिए पूर्ण रूप से सुसज्जित थे और जिनके हाथो मे बन्दूकें थी मुस्लिम सेना का प्रतिरोध करने के लिए बाहर निकल आए। हजारो जाट सैनिक सभी दिशाओ से वहा आ गए और उन्होने शीघ्रता से अपने को लामबद कर लिया। स्वय रणजीतसिह अपने समस्त वीर एव प्रख्यात सरदारो के साथ किले से उतरा तथा एक मरहले मे अपना स्थान लेने के बाद उसने शत्रु पर आक्रमण करने का आदेश दिया। इसके साथ ही डीग और गोपालगढ की तोपें नवाब के सैनिको पर अविरल रूप से गोलाबारी करती रहीं उनके ऊपर गढियो से भी जम्बूरको जर्जैल और बन्दूको के द्वारा गोलिया बरसाई जा रही थी। सभी दिशाओ से जाट अश्व तथा पदल सैनिकों का दबाव नवाब के सैनिको पर पड रहा था तथा क्रोधोन्मत्त गुसाइयो ने अनेक मुसलमानो को शहीद बना दिया। नवाब के सैनिको को पराजय का सामना करना पड रहा था उनमे बहुत से मारे जा चुके थे तथा बाकी के घुटने हिलने लगे थे। जिन थोडे से लोगो ने अभी तक दृढतापूर्वक सम्मान को कायम रखने के लिए युद्ध किया था तथा खतरनाक गोलाबारी की उपेक्षा की थी, वे भी आखिर मे भागने के करीब थे। नवाब इस विकट स्थिति को देखकर घोडे पर से उतर पडा तथा उसके चुने हुए साथियो और अगरक्षको ने उसका अनुसरण किया। उनको साथ लेकर उसने शत्रु के ऊपर बडी निर्भीकता से आक्रमण किया। उसके उदाहरण ने निराश मुस्लिम सेना मे जोश भर दिया और उसने एक वीरतापूर्ण प्रयास मे शत्रु के व्यूह को तोड दिया। परन्तु राजा रणजीत सिंह ने जिसने बुद्धिमानी से अपने को खतरे के क्षेत्र से बाहर रखा था अपने आदमियो की सहायता के लिए कुछ भी नही किया तथा ऐसा लगता है कि इस सकट के क्षण मे वह मैदान छोडकर चला गया। नवाब की सेना के दृढ आक्रमण का सामना करने की क्षमता के अभाव मे जाट सेना को पीछे हटने के लिए बाध्य होना पड़ा। गुसाइ जिन्होंने अभी तक दुर्ग मे शरण लेने से इन्कार किया था, अब

अपने सामान समेत नगर में आ गए। मोहम्मद बेग खाँ हमदानी ने अपना खेमा वहाँ गाड दिया जहाँ अभी तक गुसाईं डेरा डाले हुए थे।

मिर्जा नजफ खाँ को यह मालूम हो गया कि शस्त्रों के बल पर डीग को जीतना सम्भव नहीं है। उसने नजफ कुली को आदेश दिया कि वह डीग और कुम्हेर के बीच किसी सुविधाजनक स्थान पर अपना डेरा डाले तथा रात दिन चौकन्ना रह कर कुम्हेर से घिरे हुए लोगों को भेजी गई रसद को रोके तथा इन दोनों स्थानों के बीच के संचार के सूत्रों को काटे। एक रात दो हजार स्त्री और पुरुष जो कुम्हेर के किले से खाद्यान्न लेकर आ रहे थे और जिनकी सुरक्षा के लिए जाट पदाति सैनिक साथ थे नजफ कुली की गश्त लगाने वाले दल से टकरा गए। शत्रु को देखकर उन्होंने अपना सामान फेंक दिया और वे जंगल की ओर भाग गए उनमें से कुछ को बन्दी बना लिया गया और उन्हें मिर्जा नजफ खाँ के पास भेज दिया गया। उसके परामर्शदाताओं ने यह सुझाव दिया कि इन लोगों के नाक-कान काटकर इन्हें इनके घरों को वापस भेज देना चाहिए ताकि कुम्हेर के लोगों को इस काम में निहित खतरे का ज्ञान हो जाए। परन्तु मिर्जा ने इन असहाय और निर्दोष लोगों को एक जिद्दी विद्रोही के अपराध के लिए दंडित करने से इन्कार कर दिया। उसने उन्हें केवल इस चेतावनी के बाद रिहा कर दिया कि भविष्य में वे इस प्रकार का प्रयास न करें (इब्रतनामा पृ० २६६ २६७)। हिन्दू ग्रामवासियों की शत्रुता को निःशस्त्रीकरण करने में नजफ खाँ की दयालुता मध्ययुगीन योद्धाओं की स्वाभाविक भयानकता की अपेक्षा अधिक प्रभावी सिद्ध हुई। उसके उच्च चरित्र ने हिन्दू जनता के हृदय में विश्वास का संचार किया तथा उसकी बुद्धिमत्तापूर्ण एवं मानवीय नीति ने कुछ समय के लिए मुस्लिम शासन के प्रति अलगाव की उस आम भावना को दूर कर दिया जो औरंगजेब के समय से चली आ रही थी और जिसमें अब्दाली की

ऊपर पहुच गए एम० मडेक न अपनी घबराहट और चिन्ता के कारण दूसरो के ऊपर चढने की प्रतीक्षा किए बिना अपने सिपाहियो को गोली चलान का आदश दे दिया ताकि मिर्जा को सूचना मिल जाए। परन्तु इसस लापरवाह चौकीदारो को अलाम मिल गया और व दीवाल पर चढे सिपाहियो पर टूट पडे उन्होंने अपनी बदूको को भरन का अवसर भी नही दिया। उनम से अधिकाश मारे गए और कुछ शत्रु की तलवार स अपने को बचान के लिए जमीन पर कूद पडे (इब्रतनामा हस्तलिपि, पृ० २६६ २७०)। जस ही सिगनल की गोली मिर्जा नजफ खा न सुनी वह एक ढीली लगाम लगाकर घोडे पर रवाना हो गया तथा बुर्जे की जड पर पहुचकर ही वह रुका। उस समय तक दिन निकल आया था तथा डीग के गरीजन न दुग के द्वार खोलकर नवाब के सनिको पर आक्रमण कर दिया, जो इस समय निश्चय ही लाभ की स्थिति म नही थे। नजफ खा की सेना पर अब किले की बन्दूको स तथा छोटी छोटी गन्यि म स भयकर गोलाबारी हो रही थी। नवाब की सना के अनुभवी नता प्रत्येक कदम पर गिरे पडे थे घोड बिदकन लग थ तथा व अपन सवारो को नीचे फेंक रह थ। सनिक एव अधिकारी जिन्होंने वर्षो तक अनक युद्ध वीरतापूवक लड थ, अब अपन पैर मजबूती के साथ उस युद्धभूमि पर जमा नही पा रह थे तथा एक क्षण भी सोच बिना व भाग गए और इस प्रकार अपन अनुचरो म उन्होंने और भी अधिक घबराहट को उत्पन्न कर दिया। किले क रक्षक अब अपने आक्रमण म पहले की अपेक्षा अधिक बहादुर हो गए, यह निस्सदेह एक अद्भुत दृश्य था जब एक फटेहाल जाट पदल-सनिक हाथ मे केवल एक भाला लेकर नवाब के दस सनिको पर टूट पडता था और वे भय के कारण लकवा लगे स चित्र अथवा मूर्ति की भाति निश्चल खडे रहत थे उनम स किसी भी काफिरो का प्रतिरोध करने का साहस नही था (उपयुक्त)। इस्लाम की सना की इस दयनीय स्थिति को देखकर निदयी शत्रु न उसके ऊपर अपना घेरा और भी अधिक मजबूत कर दिया। तीन या चार हजार सनिको म स केवल थोड स लोग अपन वीर सेनापति के चारो ओर दृढता स युद्ध करते रहे। जब नवाब न दखा कि उसके साथी भी पीछे हटन के इच्छुक हैं वह भी डावाडोल होन लगा तथा यह सोचन लगा कि उस कौन-सा माग अपनाना चाहिए। इस सकट क समय समरू नवाब की सहायता करन क लिए शीघ्रता से एक बटालियन सनिको को लेकर आ पहुचा तथा उसन अपनी टुकडी को दोनो सनाओ के बीच म खड़ा कर दिया। उसने अपनी बदूको म छर्रे भरन का आदेश दिया जो शत्रु की सेना म एक साथ ही सौ सनिको को मार सकते थ। जाटो की प्रगति रोक दी गई तथा अन्त म उन्हें किले म भागकर शरण लेन क लिए बाध्य कर दिया गया। मिर्जा नजफ खा न इतनी बहादुरी स जीता हुआ स्थान नही छोडा उसन उस स्थल पर एक तोपखान क निर्माण का आदश दिया (उपयुक्त पृ० २८)। प्रत्यक दिन फिर

हुए लोगो के लिए सम्भावनाए अधिकाधिक रूप से निराशाजनक होती जा रही थी। नजफ खा की सेना प्रतिदिन नये सनिको के आ जाने से बढ रही थी। राजा हिम्मत बहादुर पाच या छ हजार सनिको तथा ३० तोपों के साथ उसकी सना म *शामिल हो गया था। मिर्जा की सहायता के लिए नवाब आसफ उद-दौला न* सनिको की तीन बटालियनो के साथ लताफत अली खा[17] को भेजा था। नजफ कुली न घेरा डालने वालो की रसद को पूणत बद कर दिया। वह किसी छोटी पलटन को भोजन कराने का काम नही था, परन्तु कम-स कम ५० हजार की जनसख्या वाले नगर को भोजन उपलब्ध कराने की समस्या थी जो इस समय राजा रणजीतसिंह के समक्ष प्रस्तुत थी। जो होनहार था वह आखिर म घट ही गया *जाट राजा को आत्म समपण के लिए बाध्य होना पडा परन्तु उसने ऐसा बहुत* जल्द नही किया। नगर मे अकाल फल गया और उसके बाद महामारी और अव्यवस्था। प्रत्येक गली और कूचा सकडो आदमियो और जानवरो की लाशों से पटा हुआ था। मुसीबतजदा लोग स्वच्छ एव अस्वच्छ भोजन मे कोई भेद नही कर रहे थ। जो कुछ भी हाथ न आ जाता था उसे बिना किसी सकोच के मुह म ठूस लिया जाता था। (उपयुक्त पृ० २८२)। इस विपदा के दबाव म आकर रणजीत *सिंह ने नागरिको को बाहर जाने की अनुमति प्रदान कर दी, तथा अभागी मानवता* की एक धारा डीग के शोकायुक्त दरवाजे से गुजरकर मुस्लिम खेमे की ओर जाने लगी। मिर्जा नजफ खा के अधिकारियो ने उससे आग्रह किया कि वह इन शरणार्थियो पर गोलीबारी करके इन्हे किले म वापस भेज दे ताकि य लोग अकाल के आतक म और वद्धि कर दें तथा किले के वातावरण को रोगजनक बना दें। परन्तु नवाब को इस निष्ठुर परन्तु चतुर तरीके स घृणा थी उसने कहा मैं नही चाहता कि ये गरीब और अभागे लोग भी विद्रोहियो एव आततायियो के साथ तगहाली के दिन देखें। उसने उनके साथ दयालुता का वर्ताव किया तथा उनके आराम एव सुरक्षा की व्यवस्था की। उसने नगर और अपने खेमे के बीच एक शाही आलम को गडवाया तथा यह घोषणा कराई कि जो भी इस आलम के नीचे शरण लेगा उस तग नहीं किया जाएगा। इस स्वागत करने योग्य घोषणा के फलस्वरूप प्रतिदिन सकडो शरणार्थी उस आलम के नीचे आने लगे। यह भी होने लगा कि सम्पन्न व्यापारो और महाजन भी फटे चीथडे पहनकर तथा अपनी बहुमूल्य सम्पति और सोने के सिक्को को कपडों मे छिपाकर गरीबो के साथ वहा आने लगे। कम्प के निवासी तथा मुस्लिम सेना के बुरे लोगो ने जो इनकी प्रतीक्षा मे लेटे रहते थे तथा कभी-कभी उनके आलम तक पहुचने तक शरणार्थियो को लूट लिया करते थे उन्होंने इस तिकडम को खोज निकाला। जब एक आकस्मिक तलाशी मे चीथडो मे जवाहरात पाए गए तो मिर्जा के सनिक भी गुप्त रूप स इस धधे म लग गए और उन्होंने इन गरीब शरणार्थियों के शरीर पर एक कपडा भी नहीं छोडा। अब यह

समाचार मिर्जा तक पहुचा तो इन सैनिको और अफसरो को बुलाकर उन्हे गरीब लोगो को सताने के लिए कठोर शब्दो मे डाटा। इसके बाद शरणार्थियो को यह आदेश दिया गया कि वे किले की दीवाल के नीचे प्रतीक्षा करें और जब वे बडी सख्या म वहा एकत्रित हो जात थे, मिर्जा स्वय अपने अगरक्षको के साथ जाकर उन्हें शाही आलम तक ले आता था, उसने वहा उनकी रक्षा के लिए एक शक्तिशाली टुकडी छोड रखी थी। कुछ दिनो बाद वे सभी लोग जो युद्ध नही कर रहे थे नगर छोडकर चले गए।

अपर्याप्त भोजन जाट सनिको के मनोबल और स्वास्थ्य दोनो पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा था वे इसके कारण प्रतिदिन दुबल होत जा रहे थे। रणजीतसिह न तो किला छोड रहा था और न युद्ध ही कर रहा था। उसकी सना के सरदार तथा परिवार के सदस्य उसके इस अनिणय के कारण दुखी थे और वे उस पर यह दबाव डाल रहे थे कि वे उसके समक्ष जो दो विकल्प थे—उनमे स किसी एक को चुन ले, यदि उस सम्मान प्यारा है तो वह तुरन्त उन अध मतको को—जो व हो गए थे—मुस्लमानो के विरुद्ध इस निश्चय के साथ नतृत्व प्रदान करे कि उन्हें या तो विजय प्राप्त करनी है या युद्ध म वीरगति को अथवा यदि वह भाग्य के पलटा खाने की प्रतीक्षा कर रहा है और इस कारण युद्ध को लम्बा खीचना चाहता है तो उस कुम्हेर अविलम्ब चला जाना चाहिए। एक अधरी रात्रि को रणजीतसिंह किले स नीचे उस स्थान पर उतरा जहा राजा हिम्मत बहादुर का डेरा था तथा शत्रु के पीछा करन को चकमा देकर वह सुरक्षापूवक कुम्हेर के किले म पहुच गया। पर्याप्त सख्या म जाट वहा स्त्रियो और बच्चो की रक्षा करन के लिए इस सकल्प के साथ रह गए कि आवश्यकता पडन पर व अपने कतव्य पालन म अपने प्राणा का भी उत्सग कर देंगे। अगले दिन १०वी रबी उल अव्वाल ११९० हि० (२९ अप्रल १७७६) को मिर्जा नजफ खा न नगर म प्रवेश किया। परन्तु गरीजन जो अपने परिवारो के साथ बदनसिंह के महल और किले म चली गई थी उसन मुसलमानो को विजय का फल चखन नही दिया उसन उस मौत की शराब स अधिक कडवा बना दिया' (इब्रतनामा, पृ० २८४) वे नवाब के सनिको पर अनवरत गोलाबारी करत रहे उनम स अनक उन्हें उनके स्थान से हटान के प्रयास म मारे गए। मिर्जा का यह सख्त आदेश था कि उसक सनिक किसी खाली मकान को भी न लूटे और उसन सब स्थाना पर मजबूत पहरेदार नियुक्त कर दिए थ। जाट गरीजन के अदम्य साहस स प्रभावित होकर मिर्जा न उन्ह क्षमा का आश्वासन दिया। उन्होने उसके इस उदार प्रस्ताव को ठुकरा दिया और शत्रुता जारी रखी। अन्त म नवाब न समरू को आदेश दिया कि वह उनके विरुद्ध तोपखाना खडा करके उन पर गोलाबारी करे। सूर्यास्त के करीब महल की दीवालों और किले के अन्दरूनी भाग पर दरारें पडन लगी और इस प्रकार अब वे अरक्षणीय होन लगी थी। रात्रि के अधकार

हुए लोगों के लिए सम्भावनाएं अधिकाधिक रूप से निराशाजनक होती जा रही थी। नजफ खां की सेना प्रतिदिन नए सैनिकों के आ जाने से बढ़ रही थी। राजा हिम्मत बहादुर पांच या छः हजार सैनिकों तथा ३० तोपों के साथ उसकी सेना में शामिल हो गया था। मिर्जा की सहायता के लिए नवाब आसफ-उद्-दौला ने सैनिकों की तीन बटालियनों के साथ लताफत अली खां" को भेजा था। नजफ कुली ने घेरा डालने वालों की रसद को पूर्णतः बन्द कर दिया। वह किसी छोटी पलटन को भोजन कराने का काम नहीं था, परन्तु कम-से-कम ५० हजार की जनसंख्या वाले नगर को भोजन उपलब्ध कराने की समस्या थी जो इस समय राजा रणजीतसिंह के समक्ष प्रस्तुत थी। जो होनहार था, वह आखिर में घट ही गया, जाट राजा को आत्म-समर्पण के लिए बाध्य होना पड़ा परन्तु उसने ऐसा बहुत जल्द नहीं किया। नगर में अकाल फैल गया और उसके बाद महामारी और अव्यवस्था। प्रत्येक गली और कूचा सैकड़ों आदमियों और जानवरों की लाशों से पटा हुआ था। मुसीबतजदा लोग स्वच्छ एवं अस्वच्छ भोजन में कोई भेद नहीं कर रहे थे। जो कुछ भी हाथ में आ जाता था उसे बिना किसी संकोच के मुंह में ठूंस लिया जाता था। (उपर्युक्त पृ० २८२)। इस विपत्ति के दबाव में आकर रणजीत सिंह ने नागरिकों को बाहर जाने की अनुमति प्रदान कर दी तथा अभागी मानवता की एक धारा डीग के शोकायुक्त दरवाजे से गुजरकर मुस्लिम खेमे की ओर जाने लगी। मिर्जा नजफ खां के अधिकारियों ने उससे आग्रह किया कि वह इन शरणार्थियों पर गोलीबारी करके इन्हें किले में वापस भेज दे ताकि ये लोग अकाल के आतंक में और वृद्धि कर दें तथा किले के वातावरण को रोगजनक बना दें। परन्तु नवाब को इस निष्ठुर परन्तु चतुर तरीके से घृणा थी, उसने कहा मैं नहीं चाहता कि ये गरीब और अभागे लोग भी विद्रोहियों एवं आततायियों के साथ तंगहाली के दिन देखें। उसने उनके साथ दयालुता का बर्ताव किया तथा उनके आराम एवं सुरक्षा की व्यवस्था की। उसने नगर और अपने खेमे के बीच एक शाही आलम को गड़वाया तथा यह घोषणा कराई कि जो भी इस आलम के नीचे शरण लेगा उसे तंग नहीं किया जाएगा। इस स्वागत करने योग्य घोषणा के फलस्वरूप प्रतिदिन सैकड़ों शरणार्थी उस आलम के नीचे आने लगे। यह भी होने लगा कि सम्पन्न व्यापारी और महाजन भी फटे चीथड़े पहनकर तथा अपनी बहुमूल्य सम्पत्ति और सोने के सिक्कों को कपड़ों में छिपाकर गरीबों के साथ वहां आने लगे। कैम्प के निवासी तथा मुस्लिम सेना के बुरे लोगों ने जो इनकी प्रतीक्षा में लेटे रहते थे तथा कभी-कभी उनके आलम तक पहुंचने तक शरणार्थियों को लूट लिया करते थे उन्होंने इस तिकड़म की खोज निकाली। जब एक आकस्मिक तलाशी में चीथड़ों में ... पाए गए तो मिर्जा के सैनिक भी गुप्त रूप से इस धंधे में लग गए और ...न इन गरीब शरणार्थियों के शरीर पर एक कपड़ा भी नहीं छोड़ा। जब यह

समाचार मिर्जा तक पहुंचा तो इन सैनिकों और अफसरों को बुलाकर उन्हें गरीब लोगों का सम्मान के लिए कठोर शब्दों में डांटा। इसके बाद शरणार्थियों को यह आदेश दिया गया कि वे किले की दीवाल के नीचे प्रतीक्षा करें और जब वे बड़ी संख्या में वहां एकत्रित हो जाते थे, मिर्जा स्वयं अपने अंगरक्षकों के साथ जाकर उन्हें शाही आलम तक ले आता था, उसने वहां उनकी रक्षा के लिए एक शक्तिशाली टुकड़ा छोड़ रखी थी। कुछ दिनों बाद वे सभी लोग जो युद्ध नहीं कर रहे थे नगर छोड़कर चले गए।

अपर्याप्त भोजन जाट सैनिकों के मनोबल और स्वास्थ्य दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा था वे इसके कारण प्रतिदिन दुर्बल होते जा रहे थे। रणजीतसिंह न तो किला छोड़ रहा था और न युद्ध ही कर रहा था। उसकी सेना के सरदार तथा परिवार के सदस्य उसके इस अनिर्णय के कारण दुखी थे और वे उस पर यह दबाव डाल रहे थे कि वे उनके समक्ष जो दो विकल्प थे—उनमें से किसी एक को चुन ले, यदि उसे सम्मान प्यारा है तो वह तुरन्त उन अधमतवों को—जो वे हो गए थे—मुसलमानों के विरुद्ध इस निश्चय के साथ नेतृत्व प्रदान करे कि उन्हें या तो विजय प्राप्त करनी है या युद्ध में वीरगति को, अथवा यदि वह भाग्य के पलटा खाने की प्रतीक्षा कर रहा है और इस कारण युद्ध को लम्बा खींचना चाहता है तो उसे कुम्हेर अविलम्ब चला जाना चाहिए। एक अंधेरी रात्रि को रणजीतसिंह किले से नीचे उस स्थान पर उतरा जहां राजा हिम्मत बहादुर का डेरा था तथा शत्रु के पीछा करने को चकमा देकर वह सुरक्षापूर्वक कुम्हेर के किले में पहुंच गया। पर्याप्त संख्या में जाट वहां स्त्रियों और बच्चों की रक्षा करने के लिए इस संकल्प के साथ रह गए कि आवश्यकता पड़ने पर वे अपना कर्तव्य पालन में अपने प्राणों का भी उत्सर्ग कर देंगे। अगले दिन १०वीं रबी उल अव्वाल ११९० हि० (२९ अप्रैल १७७६) को मिर्जा नजफ खां ने नगर में प्रवेश किया। परन्तु गरीजन जो अपने परिवारों के साथ बदनसिंह के महल और किले में चली गई थी उसने मुसलमानों को विजय का फल चखने नहीं दिया, उसने उस मौत की शराब में अधिक कड़वा बना दिया" (इबरतनामा, पृ० २८४) वे नवाब के सैनिकों पर अनवरत गोलाबारी करते रहे उनमें से अनेक उन्हें उनके स्थान में हटाने के प्रयास में मारे गए। मिर्जा का यह सख्त आदेश था कि उसके सैनिक किसी खाली मकान को भी न लूटें और उसने सब स्थानों पर मजबूत पहरेदार नियुक्त कर दिए थे। जाट गरीजन के अदम्य साहस से प्रभावित होकर मिर्जा ने उन्हें क्षमा का आश्वासन दिया। उन्होंने उसके इस उदार प्रस्ताव को ठुकरा दिया और शत्रुता जारी रखी। अन्त में नवाब ने समरू को आदेश दिया कि वह उनके विरुद्ध तोपखाना खड़ा करके उन पर गोलाबारी करे। सूर्यास्त के करीब महल की दीवालों और किले के अन्दरूनी भाग पर दरारें पड़ने लगीं और इस प्रकार अब वे अरक्षणीय होने लगी थी। रात्रि के अंधकार में

जाटो न गम्भीरतापूवक अपन जीवन की अतिम यात्रा की तैयारी की, उसन प्रम और स्नेह की सभी भावनाओ स अपन को विमुख करके अपने हृदय को इस्पात म ढाल लिया। उसने अपन सभी निकट के सम्बधियो को तलवार स उस इलाके म भेज दिया था जहा उसकी स्वय की आत्मा इस पृथ्वी क बधनो से मुक्त होकर आन वाले कल म उनकी खोज करेगी। सवेरा होत ही योद्धाओं न किले के द्वार खाल दिए तथा वे समरू के तोपखान और सनिको पर टूट पड़े। जो भी उनके रास्त म आया वह शीघ्र ही उनकी तलवार का शिकार बन गया। छर्रों स भरी हुई समरू की बन्दूको स विध्वसकारी आग निकलनी शुरू हुई, परन्तु घाव स कोई दद नही होता मौत के लिए कोइ आतक नही होता न इन बहादुरो के लिए जीवन म कोई आकषण था इनम म हरेक न तीस या चालीस शत्रुओ पर आक्रमण करके उन्ह चीर डाला तथा अन्धे क्रोध म बन्दूको पर तलवार स प्रहार किया अपन शत्रुओ की हत्या म छकन तथा अनक घावो को लेकर व आखिरी सास तक शान के साथ लडकर गिर पड। अपन श्रष्ठतम बच्चों तथा अपन शत्रुओ के खून म डीग" की भूमि लाल हो गई अब वह अपने विजता स अपन भाग्य के निणय की प्रतीक्षा म थी।

सदभ

१ वाका के अनुसार (हस्तलिपि पृ० २२७) बल्लभगढ और फरुखनगर को जाटो न १६वी सफर तथा ८वी रबी I ११८८ हि० के बाच समर्पित किया था। १६वी (रबी I 2० मई १७७४) को समरू की सम्राट स भेंट हुइ थी उस खिलत प्रदान की गई थी तथा उसे पानीपत और अन्य परगनाओ का फौजदार नियुक्त किया गया था (उपरोक्त प० २७८)।

२ सधि की दो शर्तें अग्रलिखित थी—(१) जमुना क पश्चिम मे नजीब-उद्दौला और जबीता खा क अधिकृत क्षेत्रो को जसे पानीपत सोनीपत महाम गोहाना हासी हिसार आदि को नजफ खा को सौंप दिया जाएगा जो सम्राट की ओर स उन पर शासन करेगा (२) यदि जबीता खा सम्राट का सत्ता को स्वीकार कर न तथा अमीर-उल-उमरा के साथ मत्री की कसम खाय और उसकी सत्ता से एक बाल बराबर भी विचलित न होन की प्रतिज्ञा करे तो सहारनपुर का मकाना रुहेला सरदार के पास बना रहन दिया जाएगा। (इबरतनामा हस्तलिपि प० २६० २६१)

३ इब्रतनामा की एक हस्तलिपि म इस स्थान को सिगार अथवा सुनकर कहकर पुकारा जाना चाहिए। गुडगाव जिले में एक स्थान सिगार नाम का है

(२७ ५' अक्षाश रखाश ७७ २०) जो कामा स २० मील उत्तर म है। इसी पुस्तक मे हम यह ज्ञात होता ह कि घिरी हुई जाट सेना इस स्थान पर कामा स अपनी रसद इतनी सुगमता स प्राप्त कर सकती थी कि कामा पर अधिकार स्थापित किए बिना जाट सेना पर किए गए किसी भी आक्रमण के सफल होन की कल्पना भी नही हो सकती थी। अत यह स्थान सिंगार नहीं हो सकता क्योंकि वह कामा से काफी फासले पर ह। सुनूखर (अक्षाश २७ ४५' रखाश ७७° १८) कामा से ८ मील उत्तर म है और बरसाना म १२ मील पश्चिम म तथा वह एक दलदली राम्न में स्थित है, अत यह स्थान वणन के अनुकूल प्रतीत होता ह। सुनूखर स आधा मील दूर सवलगढ़ का किला ह जिसके भग्नावशेष अभी भी हैं।

४ खरुद्दीन के अनुसार सकर के घेरे के समय यानी १७७४ की वर्षा ऋतु क अत म समरू न नजफ खा क खेमे म अपना अपसरण किया था। उसन परिशुद्धता की कीमत पर इस पूरे मामले का नाटकीय रूप दिया है। हमारे पास काका का असन्दिग्ध साक्ष्य मौजूद है कि २० मई १७७४ को पानीपत के अपन किले के लिए प्रस्थान करन की छुट्टी समरू को दी गई थी। यह बहुत सभव ह कि नजफ खा न पानीपत स उस वापस बुला लिया हो और यह सावकर उस नजफ कुली की सहायता के लिए भेजा हो कि उस जाट प्रदेश और [illegible] की दुवलताओ की जानकारी है।

५ मिर्जा नजफ खा का बगाल के गवनर का पत्र, २४ जनवरी १७७५।

६ आसफ-उद-दौला का गवर्नर को पत्र, ३१ मई १७७५।

७ गुलाम अली शाह आलम नामा हस्तलिपि पृ० ४।

८ खरुद्दीन न लिखा है कि डीग से अपने निष्कासन क [illegible] न मिर्जा नजफ खा के इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया था कि वह [illegible] में फिर स आ जाए। वह अपने को अब्दुल अहमद खा के साथ [illegible] था तथा उसन हिसार और हासी म नजफ खा क [illegible] पर आक्रमण किया था (इब्रतनामा पृ० २८६ २८९)। [illegible] वाक्य खैर-उद्-दीन के उक्त बयान की सचाई [illegible] है। ११वी जिकादा ११८९ हि० (३ जनवरी, [illegible] एक छोटा-सा वाक्य है खबर रशीद के [illegible] मिर्जा नजफ खां—' यानी खबर पहुची कि [illegible] नजफ खां के साथ थ—' सम्भवत' इसम हम [illegible] मिर्जा कि ३ जनवरी १७७६ को रहीमदाद खां और [illegible] थे। अत डीग से उसका निष्कासन इस [illegible] म मित्र [illegible]।

९ मेजर विलियम थोर्न, मेमोयर्स ऑफ दी वार इन [illegible]

के जो मुगल सना के माथ था एक गोली लगी तथा वह गम्भीर रूप से घायल हुआ। अन्त म उन्ह किले की दीवालो के नीचे सुरगें बिछान म सफलता मिल गई तथा राजा को उसे खाली करने के लिए बाध्य होना पडा।' मिर्जा नजफ खा ने मुडमान का किला अफरासियाब को सौंप दिया और उसन स्वय हाथरस (मुडसान से ८ मील पूव म स्थित) पर घरा डाल दिया जहा राजा भागकर चला गया था। शत्रु के शक्तिशाली दबाव के कारण भूपसिंह ने सधि के लिए राजा हिम्मत बहादुर के माध्यम स बात चलाई। नवाब ने सनिक सवा की शत पर उसे उसके समस्त अधिकृत प्रदेश वापस कर दिये तथा उसके पास वे सारे किले बने रहने दिय जो अभी तक चले आ रहे थ (इब्रतनामा पृ० २६)। इसके उपरान्त उसने रामगढ के लिए कूच किया तथा चौबीस दिन के घरे के बाद उम जीतकर उसने उस अलीगढ़ का नाम दिया।

इसी समय बादशाह न मिर्जा नजफ खा को रुहेला सरदार के विद्रोहो को दडित करने के लिए जिसन अब्दुल अहमद खा के भाई अब्दुल कासिम खा की हत्या कर दी थी तथा एक शाही सना को परास्त करके शाही भूमि पर स्थित अनेक महलो को अपने कब्जे म ल लिया था दिल्ली बुलाया।

जबीता खा के विरुद्ध मिर्जा नजफ खा का अभियान

मिर्जा नजफ खा चौथी मोहरम ११६१ हि० (१२ फरवरी १७७७) को दिल्ली पहुचा तथा शाही राजकुमारो जहादार शाह और जहानशाह ने बडे सम्मान के साथ बादशाह के सम्मुख प्रस्तुत किया। दो महीने के उपरान्त वह बादशाह के साथ जबीता खा के एक मजबूत केन्द्र गौसगढ गया। शाही सना १६ अप्रल को दिल्ली से रवाना हुई तथा ८ जून को गौसगढ़ क पडोस म पहुची। जबीता खा अपनी मुख्य सना के साथ शाही सनिको को उनके पृष्ठभाग म आने वाली रसद को काटने तथा इस प्रकार उन्हें परेशान करने के उद्देश्य से किले स पहल ही बाहर निकल आया था। मिर्जा नजफ खा ने किले का घरा डाल दिया, परन्तु वर्षा ऋतु के कारण जो थोड दिन पहल आरम्भ हुई थी उम बहुत कठिनाई का सामना करना पडा। १८वी रजब (२२ अगस्त) को उसने जबीता खा की सना क साथ जमकर लडाई लडी। यद्यपि शत्रु को परास्त करन म उस सफलता प्राप्त हुई तथापि अब्दुल अहमद खा के विश्वासघात के कारण उसके लिए परिस्थिति अत्यधिक गम्भीर हो गई। उसन तोपखान स अफरासियाब खा को बुलाया और वह २० रजब (३ सितम्बर) को उसकी सहायता करन क लिए आ पहुचा। एक दूसरी बडी लडाई हुई जिसम ११वी शवान (१४ सितम्बर) को मिर्जा नजफ खा को निर्णायक विजय प्राप्त हुई जिसका श्रेय मुख्यत अफरासियाब क युद्ध-कौशल एव धय को दिया

जाना चाहिए। २२ शवान (२५ सितम्बर) को बादशाह ने विजयाल्लास के साथ गौसगढ़ में प्रवेश किया तथा ७ शव्वाल (८ नवम्बर) को जबीता खां तथा अन्य अफगान सरदारों के परिवारों को दाऊद बेग खां तथा अफरासियाब खां के संरक्षण में आगरा के किले में भेज दिया गया। नजफकुली को सहारनपुर का गवर्नर बनाकर सम्राट और मिर्जा नजफ खां राव राजा प्रतापसिंह और रणजीतसिंह जाट को दण्डित करने के लिए तुरंत राजधानी की ओर रवाना हो गये।

रणजीतसिंह की नई सैनिक गतिविधियां

मिर्जा नजफ खां को गौसगढ़ में जिस उलझन का सामना करना पड़ा था उससे रणजीतसिंह को सांस लेने का थोड़ा अवसर प्राप्त हो गया था और उसने इस अवसर का अच्छा लाभ उठाया। मिर्जा ने अपने अयोग्य साले सादात अली को हिंडौन और बयाना (आगरा से दक्षिण-पश्चिम में ७० और ५० मील की दूरी पर स्थित) का दायित्व सौंप दिया था तथा चलते समय उसने उसे यह परामर्श भी दिया था कि वह समुचित रूप से व्यवहार करे तथा सावधानी के साथ जाटों के ऊपर निगरानी रखे। जो हुजूरों से घिरे हुए इस सामन्त ने मिर्जा से पहले उस जाट का दमन करने की योजना बनाई जो पहले से ही अन्तिम सांसें ले रहा था। उसने रणजीत सिंह से कई परगने छीन लिए तथा उसके एक किले पर घेरा डाल दिया। रणजीतसिंह ने अपने अधीनस्थ एक मराठा कप्तान को ५ या ६ सौ अश्व सैनिकों के साथ घिरे हुए लोगों की सहायता के लिए भेजा। उन्होंने रात्रि भर चलकर सवेरे मुस्लिम खेमे पर आक्रमण कर दिया जो रात भर रंग रेलियां मनाकर निद्रा में डूबे हुए थे। सादात अली और उसके साथी बहुत देर में उठे जब तक वे अपने कपड़े पहन पाते तथा अपने शस्त्र उठा पाते मराठा उनके खेमे में घुस गये। मुगलों ने भागना आरम्भ किया और बिना पीछे देखे वे ५० मील तक तब तक भागते रहे जब तक वे आगरा की दीवालों तक सुरक्षित नहीं पहुंच गये (इब्रतनामा, हस्तलिपि, पृ० २९२ २९४)।

इस सफलता से प्रोत्साहित होकर रणजीतसिंह कुम्हेर से निकल आया तथा नवलसिंह द्वारा खोये हुए प्रदेशों के अधिकांश भाग पर उसने पुनः कब्जा कर लिया। मुहम्मद बेग खां हमदानी जाट सरदार की गतिविधियों को रोकने के लिए आगरा से रवाना हुआ जाट-सरदार को कुम्हेर तक भगा दिया गया तथा उसे वहीं घेरे का सामना करने के लिए बाध्य कर दिया गया। परन्तु लगभग उसी समय राव राजा ने मुगल-शासन के विरुद्ध शत्रुता का रुख अपना लिया तथा उसके आक्रमण ने इतना गम्भीर आयाम हासिल कर लिया कि मिर्जा नजफ खां को

बेग खा हमादानी को यह आदेश देना पडा कि वह कुम्हेर का घेरा उठाकर मछेरी की ओर कूच करे। रजब ११९१ हि० (अगस्त १७७७) म हमदानी न मछेरी क सरदार को परास्त किया (वाका पृ० ३०२)। परन्तु इस सफलता स इस क्षेत्र म कोई विशेष सुधार नही हुआ। हमदानी की सना रणजीतसिंह तथा रावराजा की सम्मिलित शत्रुता के कारण घिरी पडी थी। योग्य एव उत्साही नरूका सरदार जिसे अपन अधीनस्थ कुछ मराठा कप्तानो की सहायता प्राप्त थी जाटो के विरुद्ध लम्बी और कडी लडाई के उपरान्त प्राप्त हुई विजय के फलो को नष्ट करन की धमकी दे रहा था। स्थिति इतनी विकट थी कि मिर्जा को जबीता खा क दमन के काम को अधूरा छोडना पडा और गौसगढ से दिल्ली म अपन पहुचन के केवल चार दिन बाद उसे इस नये खतरे को दूर करने के लिए आगरा जाना पडा। (२४ शव्वाल—२५ नवम्बर १७७७ वाका पृ० ३०५)।

राव राजा प्रताप सिंह की जाटो से मेवात की विजय

कछवाहो की नरूका शाखा क एक वशज राव प्रतापसिंह न अपना जीवन ढाई ग्रामो (मछेरी, राजगढ तथा आधा राजपुरा) स आरम्भ किया था तथा जब उसने उसका समापन किया तो वह अलवर राज्य को सस्थापित कर चुका था। जाटो के दुर्भाग्य के साथ उसके सौभाग्य का उदय होना आरम्भ हुआ मौण्डा के रणक्षेत्र मे जाटो के अनथकारी प्रत्यावर्तन को उनके दुर्भाग्य के आरम्भ की तिथि कहा जा सकता है। नवलसिंह के गृहयुद्ध मे फस हुए होने तथा बाद मे साम्राज्यवादियों के साथ कठिन सघष होने के कारण राव प्रतापसिंह न मेवात के समस्त परगन सुगमतापूवक अपने अधिकार मे कर लिए थ। उसकी सबस बडी सफलता अलवर की विजय थी जिसे उसने जाट गरीजन को रिश्वत देकर हासिल की थी इस गैरीजन के लोगो को लम्बे समय से वेतन नही मिला था। नवलसिंह तथा उसके सहायक जयपुर नरेश की सनाओ के ऊपर निर्णायक विजय प्राप्त करन क उपरात मिर्जा नजफ खा ने राव राजा को डीग बुलाया तथा महाराजा जयपुर के विरुद्ध प्रस्तावित कायवाही म मुगल सना का साथ दन के लिए उसम कहा। नरूका सरदार न न केवल अपन स्वामी के विरुद्ध हथियार उठाने मे इन्कार कर दिया अपितु उसन अपने इस दृढ निश्चय को भी व्यक्त किया कि यदि यह आक्रमण किया गया तो उस स्थिति म वह जयपुर की सना का साथ देगा। यदि राजा भूपसिंह के दोआब म विद्रोह के कारण उसे वहा न जाना पडता तो वह उस इस बात के लिए अवश्य दडित करता। उसने राव राजा के आक्रमक मनसूबो को प्रोत्साहित किया ताकि वह अपन पडोसियो के ऊपर एक वाछनीय अवरोध की भूमिका अदा कर सके। इस प्रकार उसने अपनी आवश्यकता के लिए एक नतिक आधार खोज लिया। राव राजा ने मिर्जा की इस

अपनो को इस मामा तन पूरा किया कि उस इसके लिए बाद म पश्चात्ताप करना पड़ा।

कुम्हेर का घेरा तथा राजा रणजीतसिंह द्वारा अधीनता स्वीकार

मिर्जा नजफ खा न अपना मुख्यालय डीग म स्थापित किया तथा मुहम्मद बेग खा हमदानी को यह आदेश दिया कि वह कुम्हेर के किले पर दुबारा घेरा डाले। उसका ध्यान महाराजा जयपुर, करौली के राजा भगवन्तसिंह तथा अन्य राजपूत सरदारो की सहायता स रावराजा की दुर्जेय शक्ति का कुचलन की ओर लगा हुआ था जिन्होंने मछेरी के राजा के आक्रमण के कारण क्षति उठाई थी।

अम्बाजी राव अप्पाजी पडित, बापूजी होल्कर तथा राव राना के अन्य मराठा मित्रो न उस यह समझान की बहुत कोशिश की कि उस मिर्जा के साथ सुलह कर लेनी चाहिए ताकि वह अपन अन्य शत्रुओ के विरुद्ध अधिक सफलता के साथ युद्ध कर सक। राव राजा मुगल सनापति स डीग म टक्कर लन क लिए एक बडी एव शक्तिशाली सना के साथ रवाना हुआ तथा उसन अपना खेमा आसिया (रसिया) पहाडी के करीब गाडा। ६वी जिकाद ११९१ हि० (६ दिसम्बर १७७७) को उसे मिर्जा स साक्षात्कार करन की अनुमति प्राप्त हो गई मिर्जा न उस एक खिलत प्रदान की तथा उसके साथ आदर एव सद्भाव का वर्ताव किया। समझौते की शर्तों पर राव राजा के हठी वर्ताव के कारण बातचीत लम्बी चली। यदि मिर्जा के गुमारतो न कठोर मार्गे प्रस्तुत की तो उसन अपने बडे खेमे की ओर नजर डालकर उन्हें खामोश कर दिया तथा ऐसा करके उन्ह यह भी जता दिया कि उसका दावा अत्यधिक तर्कसगत है। मिर्जा के कुछ अधिकारियो न रावराजा को बन्दी बनाने का षडयत्र रचा एक दिन उन्होंने उसके खेमे को उस समय घेर लिया जब उसके बसदेही राजपूत नित्य की क्रियाओ म व्यस्त थे तथा राव पूजा म लीन था। परन्तु कायर, मिर्ह-समार नरूका को अपन जाल म फसाने म विफल रहे उसन अपन वीर अनुचरो क साथ उनके विश्वासघाती प्रयास को निरस्त कर दिया और वह सुरक्षित लक्ष्मनगढ पहुच गया। मुस्लिम सना न उस चार महीन तक घेरे रखा परन्तु उसे कोई विशेष सफलता नही मिली। एक रात मिर्जा नजफखा क खेम पर अचानक आक्रमण हुआ तथा उसकी सना राव राना के सनिको स बुरी तरह पराजित हुई। उसके शत्रुओ न उसकी इस पराजय पर खुशिया मनाई और उन्होंन अपन इस दुर्जेय प्रतिद्वन्द्वी के ह्रासोन्मुख भाग्य का एक शकुन माना तथा उन्होंने उस पर शक्तिशाली प्रहार करन क लिए अपन को तयार किया।

चूकि मुहम्मद बेग खा हमदानी को नजफ खा न लक्ष्मनगढ क सम्मुख अपनी सना को ल जाने का आदेश देकर उसे दूर भेज दिया था रणजीतसिंह कुम्हेर से

बाहर निकल आया तथा उसने पुन: मुगल प्रदेशों में लूट-पाट और आगजनी प्रारम्भ कर दी। एक रात एक वीरतापूर्ण आक्रमण में उसने फरह (आगरा और मथुरा के मध्य में स्थित) के आमिल की हत्या कर दी तथा आगरा की दीवालों तक के पूरे क्षेत्र को इतने पूर्णरूप से लूटा कि उस क्षेत्र में प्रकाश होना बन्द हो गया। अब्दुल अहद खाँ के आग्रह पर सम्राट ने राजपूताना की ओर जाने का निश्चय किया और उसने ताल कटोरा में शाही खेमा गड़वाया। सिख सरदारों को भी षडयन्त्रकारी मन्त्री ने बादशाह की तरफ मिला लिया था। अपने शत्रुओं के इस खतरनाक गठबन्धन को देखते हुए नजफखां को राव राजा से सन्धि करने के लिए बाध्य होना पड़ा। मिर्जा ने उसे अलवर के राजा के रूप में मान्यता प्रदान कर दी तथा उसे उन सब क्षेत्रों का स्वामी मान लिया जिन्हें उसने जाटों से छीना था। (जुलाई १७७८)। उसने हमदानी को रणजीतसिंह के विरुद्ध पुन: भेज दिया तथा वह स्वयं आगरा की ओर रवाना हो गया। अपने शत्रुओं के मन्सूबों का प्रतिकार करने के लिए उसने अफगान परिवारों को रिहा कर दिया तथा सहारनपुर जबीता खां को वापस कर दिया (शबान ११६१ हि०—सितम्बर १७७८, वाका, पृ० ३१०)। इसके तुरन्त बाद वह जाटों के मामलों से निबटने के लिए अपनी समूची सेना के साथ कुम्हेर पहुंच गया।

कुम्हेर का घेरा बड़े सशक्त रूप से चलाया गया परन्तु बादशाह के आगमन की आशा में गैरीजन ने डटकर प्रतिरोध किया चूंकि घेरा लम्बा चल रहा था तथा उसका कोई अन्त दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था मिर्जा नजफ खां का धैर्य टूटने लगा। शाही सेना ने ताल-कटोरा में शव्वाल के महीने में अपना खेमा तोड़ डाला तथा उसने रेवाड़ी की दिशा में कूच कर दिया। नीति एवं सामान्य हित को ध्यान में रखते हुए अमीर-उल-उमरा ने चेतावनियों से भरा एक पत्र लिखा जिसमें रणजीतसिंह को यह समझाया गया कि अधीनता-स्वीकरण के द्वारा क्षमा प्राप्त करने का अभी समय है तथा वह निष्ठावान सेवा के द्वारा अपनी पुरानी गलती के लिए अपने कई हजार लोगों को सर्वनाश की ओर ले जाए बिना प्रायश्चित कर सकता है। जब यह पत्र रणजीतसिंह के पास पहुंचा उसका मस्तिष्क उद्विग्न हो उठा—उसमें न तो प्रतिरोध करने की शक्ति थी न अमीर उल उमरा के समक्ष प्रस्तुत होने के लिए उसके चरणों का वांछित दया कृपा प्राप्त थी। अन्त में इस उत्तम परामर्श का उसके जिद्दी हृदय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा—वह पहले की ही भांति घमंडी और हठी बना रहा' इब्रतनामा पृ० ३४६)। घेरा डालने वाली सेना ने अपने प्रयासों को दुगुना कर दिया तथा उन्होंने शीघ्र ही किले को अरक्षणीय बना दिया। गैरीजन में निराशा छा गई अब उसमें न तो बाहर जाने की शक्ति थी और न उसके पास खड़े होने के लिए स्थान था। अपनी इस संकट की घड़ी में उन्होंने अपनी वृद्ध रानी किशोरी का स्मरण किया जो जवाहरसिंह की मृत्यु के उपरान्त उपेक्षा और सेवा निवृत्ति के

वातावरण म भरतपुर राज-परिवार क वभव की समाप्ति पर अपने दिन गुजार रही थी। रणजीतसिंह के शुभ चिन्तको न उस परामश दिया कि वह वृद्ध रानी को मुगल-खेमे म भेजे क्योकि अमीर-उल-उमरा क उच्च पदाधिकारी उस सम्मान देत थ तथा उसे उनकी सदेच्छा प्राप्त थी तथा सम्भव है कि उसके अनुरोध पर उस अपने पुराने अपराधो के लिए क्षमा प्राप्त हो जाय। परन्तु रणजीतसिंह को उनके परामर्श पर आचरण करन म सकोच इसलिए था क्योकि उस आशका थी कि यदि मिर्जा ने मुगल-खम म उस बन्दी बना लिया तो उस स्थिति म उस बिना शत आत्म समपण करने के लिए बाध्य होना पडेगा। एक रात वह कुछ मित्रो के साथ कुम्हेर को उसक भाग्य पर छोडकर भाग गया। अगले दिन मुस्लिम सनिको ने किले की दीवारो पर चढ़कर उसके रक्षका को अभिभूत कर दिया। रानी किशोरी उनके हाथो में बन्दी बन गई तथा वे उस ससम्मान नवाब के खेमे म ले गए। उसके आदेशो के अनुसार उसकी सरकार के अधिकारियो ने उसके निवास के लिए ऊचे खमे बनवाये जहा वह एकान्त म रह सके उसक लिए कुशल सेवको की नियुक्ति की गई ताकि कुछ दिनो के उपरान्त उसका शोक शान्त हो सके (उपयुक्त हस्तलिपि, प० ३४७)।

जब विजेता न उसे बुलाया तो वह बन्दी क शकालु एव भीरु कदमो के साथ उससे मिलने नही गई, परन्तु वह एक सकट म फसी उस मा की आशा एव विश्वास क साथ गई जो अपने औरस पुत्र से मिलन जाती है। "नवाब की उपस्थिति मे पहुचकर वह एक स्नेही धाय की भाति अमीर उल-उमरा के चारों ओर चली तथा सच्चे हृदय से अपने कन्धो पर उसकी सारी बलाए ले ली।' आखो में आसू भरकर उसने अपनी दुदशा की दयनीय गाथा सुनाई। जब नवाब अमीर उल उमरा को उसके हृदय की व्यथा का पता चला तो उसन बडे शिष्टाचार के साथ उस स्वय अपनी मा के स्थान पर प्रतिष्ठित किया। उसने उसके निवास के लिए कुम्हेर का किला दे दिया तथा उसके सहारे के लिए किले के इद गिद के महल दे दिए। उसको प्रसन्न करने के लिए उसने रणजीत सिंह के अपराधो को क्षमा कर दिया तथा उसके लिए भरतपुर का किला तथा सात लाख रुपये के मूल्य का प्रदेश जागीर क तौर पर छोड दिए।" जहा उसका बबर क्रोध असफल रहा था, वहा उसकी उदारता सफल रही।

मिर्जा नजफ खां की मृत्यु

चार सकटपूण दशको के अधकार क बाद वभव के कुछ आकस्मिक प्रकाश से ज्योतित होकर मुगल-साम्राज्य अपने अन्तिम चरण म प्रवेश कर रहा था। राजपूताना अब पुन दिल्ली के राजदड के समक्ष नतमस्तक था। तथा तिमूर के

बगज न अन्तिम बार एक राजपूत राजकुमार के माथ पर राजतिलक लगाने की गौरवपूण औपचारिकता निष्पादित की थी। मिर्जा शफी की तलवार ने उपद्रवी सिखों को शाही सत्ता का आदर करना सिखा दिया था। मन्द-उद-दौला आखिर म अपन षड्यन्त्र के दलदल म स्वय फस गया तथा उस अपनी करनी के अनुसार उचित अपमान मिल गया और केवल उसी क भाग्य का सितारा एकाकी वभव के साथ चमकता रहा। लोग एक शक्तिशाली न्यायपूर्ण एव सहिष्णु शासन के सुखद युग की आशा कर रहे थे, परन्तु भगवान उन्हें बुरे दिनों के महत्वपूर्ण सकेत भेज रहा था। २ जमाद II, ११६२ हि० (२६ मई १७७८) को आकाश मे एक चौथाई घडी तक एक उल्का पिण्ड चक्कर काटता रहा जो एक बडी तोप के गोल की कानो को फोडन वाली ऐसी आवाज कर रहा था जसी दिल्ली के पुराने निवासियो ने कभी नहीं सुनी थी। इसी प्रकार की एक दूसरी आवाज तीन वर्ष बाद सुनाई पडी जब एक भीषण गरमी की दोपहर को यकायक अधरी रात जसा अधकार हो गया जसे वह साम्राज्य के वभव के ग्रहण का सकेत दे रहा हो उसके साथ ही स्वय सम्राट के नेत्रो की ज्योति चली गई। शाही परिवार पर एक बडा दुख राजकुमार फरखुन्दा बख्त (मिर्जा जहान शाह) के मृत्यु के द्वारा पहले ही आ चुका था, इसस भी बडा दुख समूचे साम्राज्य के ऊपर आने वाला था।

मिर्जा नजफ खा कुछ समय से एक ऐसी बीमारी स ग्रसित था जिसने अच्छे स अच्छे चिकित्सकों की कुशलता को हैरानी म डाल दिया। बादशाह से लेकर दिल्ली का छोटे-स छोटा नागरिक, हिन्दू और मुसलमान सभी अपने इस प्यारे योद्धा के जीवन के लिए चिन्तित थ। जब मानव प्रयास असफल हो गए तो उन्होंने स्वर्गीय शक्तियो से उसके चगे होने के लिए प्रार्थना की। ओखला के निकट कालका देवी के मन्दिर ७२ बी II (?) ११६६ हि० को मिर्जा की ओर स एक बडी भेंट चढ़ाई गई तथा उसके स्वास्थ्य के लिए देवी के आशीर्वाद का आह्वान किया गया।[11] नवाब ने ब्राह्मणो और छोट बच्चो म मिठाइया वितरित की तथा उन गायो को जो कटने जा रही थी कसाइयों को उनक मूल्य का तिगुना धन देकर मुक्त कराया, साथ ही म उन्हे इस आशय की एक चेतावनी भी दे दी गई कि वे इन पशुओ को पकडन अथवा उन्ह परेशान करन का प्रयास न कर। परन्तु यह सब व्यथ गया। २२ रबी II ११६६ हि० (६ अप्रल १७८२) को उसन अपनी अन्तिम सास ली और उसके चल जान के बाद हिन्दुस्तान म इस्लाम के प्रभामडल की अन्तिम चमक लुप्त हो गई।

यहा इस पुस्तक का अन्त होना है। इसक उपरान्त हम गोहद क जाट और अमृतसर के भाग्य का वणन करगे और देखगे कि किस प्रकार एक को महाराष्ट्र के अनवरत आक्रमण के सम्मुख समपण करना पडा तथा दूसरे ने गुरु के हाथो से अमृत पान करके दुर्रानी साम्राज्य क युद्धोन्मुख क्रोध एव ससाधनो के ऊपर

विजय पाई तथा समूचे हिंदुस्तान को पठान गाजियो के भयकर शासन से रक्षा की।

सदर्भ

१ खर-उद-दीन तिथि के सम्बन्ध म कोई निश्चित बात नही कहता। उसने लिखा है "यह कहा जाता है कि जब डीग का घेरा लम्बा खिच गया तो अमीर-उल उमरा न अफरासियाब खा को भेजा। (हस्तलिपि प० ८६)।
२ हाथरस ईस्ट इण्डिया रेलवे (अब उत्तर रेलवे) पर मथुरा से २५ मील पूव मे है मुडसान हाथरस से ८ मील पश्चिम म है। इब्रतनामा मे उल्लिखित दूसरे दुग 'बावल' को मानचित्र म पहचाना नही जा सका है। बहुत सभव ह गलती स जेवर' को बावल कह दिया गया हो, जवर एक बडा गाव ह जो हाथरस स १० मील और मुडसान स ४ मील उत्तर-पश्चिम म है। परन्तु इस गाव मे किले के नाम की कोई चीज नही है।
३ मुडसान ११९० हि० के ६वी जिक्दा और ७वी जिहिज्जा (२० दिसम्बर १७७६ तथा १७ जनवरी १७७७) के बीच म जीता गया था। वाका० ह० २९७
४ खर-उद-दीन ने लिखा है कि अफरासियाब न भूपसिह द्वारा दोआब मे भडकाए गये किसान विद्रोह का मुकाबला करने के पूव अलीगढ पर अधिकार कर लिया था। परन्तु घटनाओ की क्रमबद्धता के प्रति उसकी उदासीनता को देखत हुए हम इमाद उस सादात म पहले की लिखी इस साक्षी क विरुद्ध खर-उद दीन की बात को स्वीकार नही कर सकत।
५ राजस्थान गजेटियर म लिखा है जाटो की दयनीय स्थिति का लाभ उठाकर रावप्रताप सिंह न सम्वत् १८३२ और १८३६ के बीच बहादुर पुर देहरा झिण्डोली बानसुर बहरोर बरोद रामपुर हस्मौरा, नरायनपुर गढीमाभूर और थाना गाजी पर अधिकार कर लिया था। रावराजा न अलवर पर २५ नवम्बर १७७५ को अधिकार किया था।
६ महाराजा प्रतापसिंह कछवाहा के अनुरोध पर वह मीर माहम्मद अली खां तथा जैन-उल-आब्दीन के मतहत म १५०० घोडे सिपाहियों की दो बटालियन तथा चार तोपें भेज चुका था सम्भवत मछरी सरदार के एक मजबूत ग ढ राजगढ के घेर म उसकी सहायता के लिए उसन यह टुकडी भेजी थी (इब्रत नामा हस्तलिपि पृ० ९८)।
७ यह अलवर म २३ मील दक्षिण पूव म है तथा यह भरतपुर की सामाना पर

स्थित है। खरउद्दीन ने लिखा है कि लछमनगढ़ को राव राजा ने रणजीतसिंह जाट से छीना था। परन्तु स्थानीय परम्पराओं के अनुसार जो अधिक प्रामाणिक है इस स्थान को पहले 'टॉर' कहा जाता था और उसे स्वरूपसिंह नरूका से लिया गया था।

८ २ सफर ११९३ हि० (१९ फरवरी १७७९) को नारनौल में महाराजा सवाई प्रताप सिंह कछवाहा ने १००१ अशरफियां की एक नजर बादशाह शाह आलम द्वितीय को भेंट की और उसने महामहिम के शुभ कर कमलों से राज तिलक प्राप्त किया। वाका हस्तलिपि पृ० ३२१)

९ मज्द-उद-दौला को बन्दी बना लिया गया और उसे अफरासियाब खां तू जिक्दा ११९३ हि० (नवम्बर १५, १७७९) को मिर्जा नजफ खां के खेमे में ले आया (वाका० पृ० ३१३)।

१० यह घटना २६ जमाद I तथा २७ जमाद II ११९५ हि० (२० मई और २० जून १७८१) के बीच एक सोमवार को घटी। दोपहर में तेज आंधी चलने लगी। इतना अंधेरा हो गया कि कुछ भी दिखाई नहीं पड़ रहा था। इसके उपरान्त आसमान लाल हो गया तथा तूफान और वेग से चलने लगा। कुछ समय बाद दिन का सामान्य प्रकाश वापस लौट आया। (वाका, पृ० ३३३ यह एक आंधी हो सकती है जो दिल्ली के ग्रीष्म ऋतु में कोई अनहोनी बात नहीं है। परन्तु उसमें कुछ तो अस्वाभाविक अवश्य था जिस कारण वाका में उसका उल्लेख किया गया।

११ वाका के अनुसार रात को ढ़ाई बजे नवाब नजफ खान की ओर से कालका देवी पर भेंट चढ़ाने के लिए शियोरमदास गया था। (हस्तलिपि पृ० ३३७) तारीख के बारे में कुछ भ्रांति है। दूसरे २७ रवी II लिखते हैं। लेकिन परिवर्ती प्रविष्टि के अनुसार नवाब का स्वगवास २२ रवी II को हुआ था। इसलिए पहली तारीख सही नहीं हो सकती, इसलिए ६ के स्थान पर २७ गलत है अथवा रवी-उल-अव्वल के स्थान के पार रवी-उल-सानी गलत है। ७ रवी II शुक्रवार (२२ मार्च १७८२) को पड़ती है लेकिन २७ रवी I मंगलवार (१२ मार्च) को पड़ती है। अतः पहली अधिक सही तारीख बैठती है क्योंकि यह सप्ताह के दिन के अनुकूल है।

परिशिष्ट (अ)

जाटों की उत्पत्ति का इन्डो-सिथियन सिद्धान्त

इण्डो सिथियन सिद्धान्त उन महान् विद्वानो के नाम के साथ जुडा है जो भारतीय इतिहास एव मानव जाति विनान के क्षेत्र म अत्यधिक ख्याति प्राप्त हैं। इस सिद्धान्त के अन्तिम विद्वान समथक विंशेण्ट स्मिथ ने लिखा है जब छठी शताब्दी के बहुसख्यक कबायली झुण्ड वाला इण्डो सिथियन गूजर और हूण स्थापित हो गए तो उनके राज-परिवारो को राजपूत के रूप म मान्यता दे दी गई जबकि उन लोगो को जिन्होंने कृषि का उद्यम अपनाया वे जाट बन गए।[1] एक दूसरे स्थान पर उसने लिखा है कि 'इस बात पर विश्वास करने का कारण है कि जाट भारत म गूजरो से बाद म आये शायद लगभग उसी समय।[2]

इस सिद्धान्त के विरुद्ध निम्न तक प्रस्तुत किए जा सकते है

(१) कनल टाड ने ४०९ ई० के एक जिट राज-परिवार के अस्तित्व के सम्बन्ध म एक शिला लेखीय साक्ष्य दिया है।[3]

(२) राजपूत एव जाट की पारम्परिक शत्रुता से यह बात अत्यन्त सन्देहपूण लगती है कि यदि उन्होने भारत म कही बाहर से प्रवेश किया—तो वे यहा साथियों के रूप म आए परन्तु बाद म वे दो विरोधी गुटो म विभक्त हो गए। हम सवत्र यह पाते हैं कि भूमि के आरम्भिक स्वामी जाटो म नये राजपूत आप्रवासियो ने भूमि छीनी। परमारो न जाटो को मालवा म बेदखल किया और तुनवारो ने उनस दिल्ली छीन ली। राठौरो न बीकानेर से उन्हें हटाया और भट्टियो न जसलमेर मे उन पर अपना शासन स्थापित किया।

(३) सिथियन जो सम्भवत कद म छोटे और मजबूत होते थे जिनके चेहरे चौडे और ठोडी ऊची होती थी वे लम्बे और लम्बे सिरवाले जाटो के पूवज नही हो सकत।

(४) इण्डो सिथियन सिद्धान्त के जोशीले समथको न एक बडी भूल यह की है कि उन्होंने उन लोगा के देशान्तरण की दिशा की उपेक्षा की है जो अपने को आज

जाट कहते हैं। पंजाब के सभी जाट कबीलों की परम्परा' (जिसमे डेरा गाजी खा के अभारतीय बब्बर जाट भी शामिल हैं) यह बताती है कि पूर्व अथवा दक्षिण पूर्व—अवध, राजपूताना अथवा मध्य भारत—उनका मूल आवास स्थान था। यदि लोक-गाथाओं का कुछ अर्थ है तो उनसे यह सकेत प्राप्त होता है कि वे मूलत भारतीय आर्य थे जो पूर्व से पश्चिम की ओर आये थे, इण्डो सिथियन नहीं जिन्होंने आक्सस घाटी से इस देश में प्रवेश किया। निस्सन्देह जाटों के एक भाग ने भट्टी राजपूतों के साथ भारत के बाहर देशान्तरण किया तथा कई शताब्दियों के उपरान्त उन्हें फारस के सीमान्तों से भगाकर सिन्धु नदी के पूर्व में धकेल दिया गया। परन्तु सिर्फ इसी कारण उन्हें विदेशी आक्रमणकारी नहीं कहा जा सकता।

सम्भवतः ऐतिहासिक साक्ष्य के नियमों के विरुद्ध जाटों की पहचान गटे, यूती, येथा अथवा अन्य इण्डो सिथियन लोगों के साथ इसलिए नहीं की जा सकती क्योंकि उनके नामों के बीच साम्य है यद्यपि भाषा विज्ञान एवं नृजाति विज्ञान इस निष्कर्ष के विरुद्ध है। यदु जाति के वंश वृक्ष में जाटों अथवा सुजाटों के स्थान की खोज करना भी निरर्थक है क्योंकि स्वयं यदु जाति की उत्पत्ति भी सन्देह से परे नहीं है। कर्नल टाड ने राटास चीनियों तथा चन्द्रवंशीय आदि क्षत्रियों के उद्भव का एक स्रोत सिद्ध करने का प्रयास किया है और ऐसा करने के लिए उन्होंने इन तीनों जातियों के वंशवृक्षों तथा उनकी व्युत्पत्ति से सम्बद्ध लोक-गाथाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया है (क्रुक द्वारा सम्पादित राजस्थान पृ० ७१ ७२)। विल्सन को जिसके अनुसार पुराण १०४५ ई० से पहले के नहीं है यह सन्देह था कि हिन्दुओं के हयाओ तथा हैहेयों का हिआ से कुछ सम्बन्ध था जिनका चीन के इतिहास में उल्लेख होता है—परन्तु हैहया के सिथियन उद्भव को प्रमाणित करने वाला साम्य खोजना असम्भव नहीं है जैसा कर्नल टाड का विश्वास था (विल्सन द्वारा सम्पादित विष्णु पुराण, पृ० ४१८ फुट नोट २०)। संक्षेप में अनेक यूरोपियन प्राच्यविदों का यह सन्देह है कि मध्य एशिया के कुछ निवासी इण्डो सिथियन जातियां के साथ भारत आये और उन पर बेईमान हिन्दू वंशज्ञानिकों ने चतुरतापूर्वक इण्डो आर्यन वंश वृक्ष आरोपित कर दिया तथा इन बर्बर आक्रमणकारियों के वंशजों को चन्द्र वंशीय क्षत्रिय घोषित कर दिया गया।

सभी राष्ट्रों के इतिहास में ऐसे लोगों की कमी नहीं रही है जिन्होंने कल्पना के आधार पर व्यक्तियों एवं जातियों के वंश-वृक्षों की रचना कर दी है। परन्तु इसके पीछे प्रयोजन क्या है? प्रथम कोई सफल मनुष्य जो कल तक अकिंचन था अथवा कोई कम ख्याति प्राप्त कबीला जिसका भूत उज्ज्वल नहीं रहा और वह यकायक महत्त्वपूर्ण बन जाये उसे अपने वर्तमान को समुज्वल तथा भविष्य को समुज्वलतर सिद्ध करने के लिए किसी समीचीन पृष्ठभूमि की आवश्यकता होती है और इस

उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह एक काल्पनिक श्रेष्ठता की रचना कर लेता है। द्वितीय, लोग अपनी वश-परम्परा को अपने द्वारा अंगीकृत नये धर्म के साथ अथवा अपने से अधिक शक्तिशाली अथवा अधिक सभ्य पड़ोसियों के साथ जोड लेते हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण अरब के बाहर रहने वाले मुसलमानो का है। अफगानिस्तान के अनेक कबीले जो सुलतान महमूद गजनवी के समय तक मूर्ति पूजा करने वाले बौद्ध थे अब अपने को पैगम्बर के प्रख्यात समकालीन खालिद का वशज होने का दावा करते हैं (मखजान-ए-अफगान का डॉर्न का अनुवाद)। बौद्ध तुर्कों ने भी इस्लाम को स्वीकार करने के बाद अरब परम्पराओ में अपने को ढालने के लिए इसी प्रकार के परिवर्तन किए थे। यह भी सर्वविदित है कि इस्लाम को स्वीकार करने वाले भारतीयों ने अपनी शेख और सयद व्युत्पत्ति सिद्ध करने के लिए हास्यास्पद दावे प्रस्तुत किये थे। जो स्थिति अरब से बाहर रहने वाले मुसलमानों के लिए अरब की थी वही स्थिति ईसा के जन्म से पूर्व मध्य-पूर्व और पूर्व के देशों मे रहने वाले बौद्धो के लिए भारत की थी। यह इतिहास का एक जाना पहचाना तथ्य है कि चीन और टार्टरी मे बौद्ध धर्म को भारतीय धर्म प्रचारकों ने पहुंचाया था। किसी हिन्दू ने अभी तक अपनी चीनी व्युत्पत्ति का दावा नहीं किया है, परन्तु जैसा सर विलियम जोन्स[1] ने बताया है चीन के लोग अपनी हिन्दू वश परम्परा का दावा करते हैं।

इण्डो सिथियन सिद्धान्त के प्रतिपादकों को ईमानदारी से यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि यदि मध्य-एशिया के गटे किसी प्रकार आर्यन जदु अथवा जाट बन गये तो उल्टी प्रक्रिया से भारतीय जदु को भी मध्य एशिया मे गेंटे बन जाना चाहिए था। दारा द्वारा सिन्धु घाटी की विजय के समय से लेकर मौर्य साम्राज्य के विघटन के समय तक (६०० ई० पू० से लेकर २०० ई० पू० तक) भारतीय कबीलो का एशिया के अन्य भागो मे देशान्तरण का सिलसिला बराबर बना रहा है। जिस प्रकार अंग्रेज सरकार ने गोरखा और सिख वेतनभोगी सैनिकों को अपने भारतीय साम्राज्य के विभिन्न भागों मे विशेषत बर्मा मे अपनी बस्तियों को स्थापित करने के लिए प्रोत्साहन दिया तथा जिस प्रकार कुछ शताब्दियो पूर्व रूसी सरकार ने मजबूत और युद्ध प्रिय तातार कज्जाकों को डान नदी के आसपास तथा अपने साम्राज्य के अन्य चुने हुए स्थानो पर बसाया उसी प्रकार भारतीय वेतन-भोगी सैनिकों को अथवा जिनकी भरती बलपूर्वक की गई थी तथा जिन्होंने मेरेथोन तथा थर्मोपली के समय से फारस के साम्राज्य की सेवा की थी—उन्हें कृष्ण सागर के तट पर बसाया गया और उन्हें वहां सिंधी अथवा कटक्टे के नाम से जाना गया।" यह माना जा सकता है कि कुछ भारतीयों को कृष्णसागर के तट पर बसाया गया होगा यह भी सम्भव हो सकता है कि वे वेतनभोगी हों और उनको साम्राज्य विस्तार रक्षा तथा प्रभाव स्थापना की दृष्टि से बसाया गया था तो नौकर आते

पर वे विदेशी कैसे हो गए, अछूत कैसे बन गए। आज यदि अमेरिका, इंग्लैंड और बर्मा में बसे लोगों की संतान भारत लौटकर आती है तो वे विदेशी नहीं हो जाते? सैनिक सेवा के अतिरिक्त, व्यापार के कारण भी भारतवासी विभिन्न देशों को गये। देशान्तरण को सबसे अधिक प्रोत्साहन मौर्य साम्राज्य के हिन्दूकुश पर्वत तक विस्तार के कारण प्राप्त हुआ इसके उपरान्त समूचे मध्य एशिया और चीन में बौद्ध धर्म के प्रचार से भी इसमें वृद्धि हुई। तुर्किस्तान का जो तेजी के साथ भारतीयकरण हुआ, जैसा फाहियान तथा अन्य चीनी यात्रियों ने जो इस क्षेत्र से होकर निकले थे बताया है वह मुट्ठी भर धर्म प्रचारकों के द्वारा नहीं हो सकता था उसमें भारतीय व्यापारी तथा वेतनभोगी सैनिक की भी सम्भवतः एक महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। जिस प्रकार इस्लाम के प्रचार के साथ मुसलमानों में अरब अप्रवासी स्वागत योग्य था उसी प्रकार उन देशों में जहां बौद्ध धर्म को कुछ समय पूर्व ही स्वीकार किया गया था वहां भारतवासी को भी वही सम्मान प्राप्त था। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मध्य एशिया के बौद्ध राज्यों तथा मध्य पूर्व के यूनानी राज्यों में भारतीयों के देशान्तरण को उसी प्रकार की नीति के अधीन प्रोत्साहन दिया जाता था जिस प्रकार की नीति रूस के पीटर महान् ने अपनाई थी और जिसके अनुसार सामन्तों की भरती जर्मनों में से की जाती थी तथा पश्चिमी यूरोप से कारीगरों के देशान्तरण को इसलिए प्रोत्साहित किया जाता था ताकि प्राच्य रूस का पश्चिमीकरण किया जा सके और इस मामले में पहल रूढ़ि विरोधी एवं उद्यमी यदुओं ने की जिनकी संख्या में द्रुत गति से वृद्धि हुई और जिन्होंने पंजाब के कबीलों के अनेक देहाती तत्त्वों को आत्मसात कर लिया। यदु जाति के लोगों का भारत से देशान्तरण हुआ, इस तथ्य की पुष्टि इस बात से होती है कि जैसलमेर के भट्टी राजपूतों ने इस्लाम के आगमन तक जबूलिस्तान पर शासन किया था। अपनी विदेशी बस्तियों में यदुओं के केवल भट्टियों जैसे कुलीन भाग ने अपने खून में कोई मिलावट नहीं होने दी परन्तु आम लोगों ने स्वच्छन्दतापूर्वक टारटरी की विजातियों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए तथा तुर्की भाषी लोगों को जन्म दिया। अलबरूनी ने एक तुर्की कबीले का उल्लेख किया है जिसका भारतीय नाम भट्टावयन असंदिग्ध है।' मध्य एशिया के दो अन्य कबीले जिन्हें जाटों का पूर्वज माना गया है वे हैं दाहे (Dabae) तथा मासागेटे (बड़ा दरवाजा) जो कैस्पियन सागर के पूर्वी तट पर बसे हैं। (राजस्थान I ५५) कहा जाता है कि दाहे वही लोग हैं जिन्हें विष्णु पुराण में दाहा कहा गया है (विल्सन विष्णु पुराण पृ० १९२ फुटनोट १०) और जो आज दाहिया के नाम से जाने जाते हैं। यह केवल एक सुझाव है जिसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है इनमें केवल ध्वनि की समानता है। इसी आधार पर कैस्पियन के दाहे को यदुओं की एक शाखा माना जा सकता है क्योंकि महाभारत काल में उनका कबायली नाम दशार्ह था जिसे

सुगमतापूर्वक दहाई में परिवर्तित किया जा सकता है।

यह भी कहा जा सकता है कि जाटों का मुस अवर और अनेक नाम दिये गये हैं। सत्य यह नहीं है कि जाटों ने सु साक अथवा अभीर नामों को अंगीकृत किया परन्तु इन नामों का धारण करने वाला ने अपने से अधिक सम्मानित श्रेष्ठ लोगों का नाम स्वयं धारण कर लिया। आगे हम यह भी देखते हैं कि बक्ट्रिया और जिहून में बस तूचिया ने अन्त में जटा और येतान (यानी गटे) का नाम स्वीकार कर लिया।

(हिस्टोइर डी हून्स)। आखिर इन विजेता कबीलों शक दूची हूण तथा अन्य तुर्की लोगों के लिए यटा गटे तथा भटटावयन नामों में क्या आकर्षण था? इसमें इस सन्देह की पुष्टि होती है कि श्रेष्ठ रक्त और उच्चतर सभ्यता के साथ जुड़ हुए नाम में अधिक आकर्षण होता है मध्य एशिया के इन कबीलों को इनमें वही आकर्षण था जो भारत के हिन्दू युद्ध प्रिय कबीलों को राजपूत नाम में है। भारतीय आर्यों के य वंशज जो आक्सस नदी और कृष्णसागर के तट पर बस थे उनका आर्यों के देश के साथ वही सम्बन्ध था जो सुदूर फिजी और अफ्रीका के जंगलों में बसे आधुनिक भारतीय प्रवासियों का हमारे साथ है। एक या दो शताब्दी के बाद उनकी भारतीय राष्ट्रीयता की शायद पहचान भी न हो सके क्योंकि तब तक खून धर्म और भाषा जो उनकी पहचान को अभी बनाये हुए है वह सब तब तक ऐसे मिल चुके होंगे कि उनका कोई पृथक चिह्न शेष ही न रहे।

सदर्भ

१ जनल आफ रायल एशियाटिक सोसाइटी १८६६ पृ० ४३४।

२ वही १६०६ पृ० ६३

३ राजस्थान का क्रुक द्वारा सम्पादित संस्करण १२८ फुट नोट। सम्पादक ने यह सन्देह व्यक्त किया है कि जाट कथीत्त जाट है अथवा कथे का गटे है।

४ यह असम्भव नहीं है कि इस प्रसिद्ध नगर का नाम दिल्ली जाटों के नाम के साथ जुड़ा हो जो अभी भी दिल्ली जिले में बड़ी संख्या में पाये जाते हैं। लोक निरुक्ति दिल्ली को ढीला अथवा आलसी के साथ जोड़ती है।

५ केवल घटवाल राग और मलिक जाट गजनी अथवा गर गजनी से अपना सम्बन्ध जोड़ते हैं परन्तु वे इस स्थान को अफगानिस्तान के साथ न जोड़कर दक्षिण में किसी स्थान से जुड़ा हुआ कहते हैं। (रोज की पंजाब ग्लोसरी II ५६ ४७२ III ५६) परन्तु सर एच० एम० ईलियट ने लिखा है उत्तर पश्चिम प्रान्त के लगभग सभी जाट जो अपनी राजपूत व्युत्पत्ति का

नहीं करते अपना उद्भव सुदूर उत्तर-पश्चिम से बताते हैं और उनमे स कुछ जसे गयवाडा गजनी अथवा गढ-गजनी की ओर संकेत करते हैं जो स्पष्टत अफगानिस्तान म है। यहा जाटो तथा प्राचीन गटे की पहचान के सम्बन्ध में विद्वत्तापूर्ण विचार विमर्श की अनुपस्थिति मे हम इन कबीलो के बारे मे पारम्परिक गाथाओ का सहारा ले सकते हैं जो गजनी को इनका मूल स्थान बताती है। (मेमायस आफ नोथवेस्ट प्रोविन्सेज I १३२)

६ देखिए 'राजस्थान' I पृ० १६६ फुटनोट, डबलू कुक ने लिखा है कि 'मगोल तथा हिन्दू परम्परा की तुलना का कोई महत्त्व नही है।

७ देखिए, ईलियट का इतिहास I प० ५१८

८ उस खदक को छोडकर जिससे आप काश्मीर म प्रवेश करते हैं तथा पठार म पहुचने के उपरान्त आपको दो दिन और चलना पडेगा और तब आपकी बाइ ओर बोलार तथा शामिलान के पवत हैं। वहा निवास करने वाले तुर्की कबीले भटटावयन के नाम से जाने जाते हैं। उनके राजा को भटटाशाह कहत हैं। उनके नगर हैं गिलगिट असबीरा तथा शिल्ताम और उनकी भाषा तुर्की है। (अंग्रेजी अनुवाद सचाऊ प० २०७)

९ दाहिया महाभारत म श्रीकृष्ण को बहुधा दाशाह कहकर सम्बोधित किया गया है यानी दाशाह के वशज। सिसुपाल ने क्रोध म उन्हे दाशाह राजा के पद के लिए अयोग्य कहा (सभा अध्याय ३६)। लागो की सूची म दशाण कुकुर के पहल आता है परन्तु दाशाह के सन्दभ म यह गलत प्रतीत होता है (भीष्म अध्याय ८, वनपव अध्याय पृ० १८३)। वारहमिहिर की वृहत्सहिता म दाशाण का उल्लेख है और यह कहा गया है कि वे दक्षिण आग्नेय म निवास करते हैं (एस० द्विवेदी का सस्कृत अनुवाद भाग १० प० २८८), परन्तु बाद के एक अध्याय म इस कबीले का उल्लेख कावेय और गान्धार के साथ उत्तर-पश्चिम म किया गया है (वही, प० ३१४)। यद्यपि पुनरावृत्ति किसी भी दृष्टि स नयी बात नही है परन्तु दशाण का दाशाह के लिए गलत तरीके स प्रयुक्त नही माना जा सकता।

परिशिष्ट (ब)

यदु जाति के बारे में कहानी

ऋग्वदकालीन समय मे यदु सप्तसिन्धु प्रदेश म रहत थे इनको साहसिक स्वभाव तथा शास्त्र विरोधी मान्यता वाले बताया जाता है। कहा जाता है कि इन्द्र' ने सागर को पार किया और उनको सप्तसिंधु के किनारो तक वापस ले आया। सागर के दूरस्थ किनारे पर सभवत अपन निजी नए नगर म बिना अभिषेक हुए राजा की तरह यदु और तुरवस रहा करते थे। लौटने के पश्चात् इन्होंने सरस्वती नदी के तट पर अनेक यज्ञ किए। लेकिन वे फिर अपधम (विधम) की ओर वापस हो गए। जिस तरह आज का पडित उसके धम म विश्वास न करने वाले क्षत्रिय को मलेच्छ कहता है उसी प्रकार इन्द्र की पूजा न करन तथा शास्त्र विरोधी धम मे विश्वास करन के कारण उनकी ऋग्वेद क मत्र १० ६२ १० म भत्सना की गई है। जाति को उत्पन्न करन वाला पौराणिक व्यक्ति यदु ययाति राजा' का ज्येष्ठ पुत्र था जिसने उसको आना न मानन के कारण राज्य से वचित करते हुए कहा—
तुम्हारी सन्तान दुश्चरित्र पापी और दुष्ट होगी तथा बिना राज्य के रहेगी। ययाति ने आर्यावत के मुख्य राज्य के सिंहासन पर उत्तराधिकारी के रूप म पुरु को आसीन किया और राजदेय के रूप म गुजारे के लिए दक्षिण की ओर कुछ लोगो की धारणा है कि आर्यावत के दक्षिण पश्चिम की दिशा म यदु को भू भाग दे दिया था। वहा यदु की सतान बढती रही और शक्तिशाली होती रही। साथ ही अपने मूल अधिकार की प्राप्ति के लिए पुरु की सतान के साथ वशगत सघष भी करती रही। यह सघष प्राय बडा क्रूर तथा भयकर भी हो जाता था। इसकी एक झलक हमको महाभारत' म मिलती है। यहा वर्णित है कि ब्राह्मणो के नेतृत्व म समस्त वैश्य तथा शूद्र जातियो का सामूहिक विद्रोह हैहय यादवो के विरुद्ध हुआ था, जिनकी सतानो के रूप मे जाटो अथवा सुजाटा का सकेत प्राप्त होता है। ब्राह्मणो ने शूद्र तथा वश्यो की भीड के भानुमती के पिटारे के साथ अपन झडे पर कुश को रखकर, क्षत्रियो के विरुद्ध अभियान किया था।

परशुराम के रूप में ब्राह्मणों का महान प्रतिशोधमूलक संघर्ष उत्पन्न हुआ जिसने इक्कीसवार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन किया था। कुछ थोड़े लोग जो उसके युद्ध प्रिय कुठार की धार से बच गए थे वे या तो पहाड़ों में छिप गए अथवा छोटी जातियों में मिलकर रहने लगे। कुछ को दयालु स्वभाव के ब्राह्मणों ने ही बचा लिया था। शिक्षा तथा अभिषेक के अभाव में वे शूद्रों की भांति विकसित होते रहे। ऋषि कश्यप ने उनको सम्मान पद पर स्थापित किया और क्षत्रिय के रूप में उनको पुनर्प्रतिष्ठापित भी किया। सूर्यवंश से सम्बन्ध स्थापित करने वाली मिश्रित रक्त की सम्भवतः यह पहली जाति थी जो नव क्षत्रिय के रूप में उत्पन्न हुई थी।

यदु के इतिहास की एक प्रमुख घटना सूर्यवंश के राजाओं के साथ परम्परागत संघर्ष है। यदु की संतानों ने शक, पल्हव, पारद, यवन, कम्बोज तथा बर्बर आदि जातियों के साथ मिलकर एक राज्य संघ की स्थापना करके अपने अधिक सांस्कृतिक एवं परम्परावादी शत्रु राजा सगर के पिता को अपदस्थ करने का प्रयास किया था। राजा सगर ने समस्त हैहय यादवों का सर्वनाश कर दिया और उसने उनकी मलेच्छ मित्र जातियों का भी संहार कर दिया होता किन्तु ऋषि वसिष्ठ के हस्तक्षेप के कारण ऐसा न हो सका। इसी समय यदु की राजनीतिक शक्ति तथा सामाजिक उत्कर्ष का पराभव प्रारम्भ हुआ था।

राजा सगर द्वारा किए गए संहार तथा भयानक पराजय से यदु संतान पूरी तरह से कभी मुक्त न हो सकी। उनका निरंतर पराभव आज के जाट समाज में हुआ प्रतीत होता है जिनको अपने पूर्वसूत्रधारों की समता सामाजिक स्तर पर हीन माना जाता है और राजकीय सम्मान के अयोग्य ठहराया जाता है। महाभारत के युग में वे लोग सूरसेन प्रदेश (वर्तमान मथुरा) में बसे हुए थे। उग्रसेन जो भोजों की प्रमुख जाति का प्रधान था और जिसका सम्बन्ध यदु की पंक्ति के हैहयों के साथ था के आदेशों का पालन करते हुए अठारह जातियां संघबद्ध होकर रह रही थी। उग्रसेन राजा सिर्फ सम्मान के लिए कहा जाता था। वह समस्त जातियों का कुल पति मौन अनुमति के आधार पर था। उसमें अधिनायकतावादी प्रवृत्ति लेशमात्र नहीं थी। वास्तविक शक्ति वरिष्ठ लोगों की कौंसिल में निहित होती थी जिसका निर्माण प्रत्यक गोत्र के अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तियों से होता था। उसकी स्थिति आजकल के जाट के समाज के बारह अथवा चौबीस गावों के प्रधान की तरह होनी थी। किन्तु उग्रसेन के यहां नितांत क्रूर तथा हठी कंस के रूप में औरंगजेब उत्पन्न हो गया था। उसने अपने पिता उग्रसेन को बन्दी बना लिया और उसने कुछ वेतन भोगी लड़ाकू लोगों के साथ गठ-बंधन करके शक्ति का उपार्जन कर लिया था। राजा जरासंध की दो कन्याओं के साथ विवाह कर लेने के बाद शक्ति उपार्जन के गर्व तथा अभिमान में मंडित हो गया और स्वयं को यादव कहलाने में भी लज्जा का अनुभव करने लगा था। उसने यादवों की कुछ निम्न जातियों को दासों की

स्थिति तक पहुंचा लिया और उनकी क्रूरता के कारण कुछ लोग जीविकोपाजन के लिए जिसका उपाजन धर्म द्वारा अथवा राज-परिवार के सदस्य के रूप में होना सभव नहीं रहा था, पशु-पालन¹ की स्थिति तक आ गए थे। श्रीकृष्ण ने दुराचारी कंस का बध कर दिया और उग्रसेन को पुन सिंहासनासीन कर दिया। मगध के हठी सम्राट ने अपने दामाद कंस के बध का प्रतिशोध लेने के लिए अठारह बार यादवों पर आक्रमण किया और पराजय के पश्चात् प्राय उसको लौटना पड़ा। यादवों के प्रमुख ने मथुरा को त्यागने का निश्चय किया जहा कि उसका शक्तिशाली शत्रु उनको शान्ति के साथ रहने नहीं देता था।

यदि हम पौराणिक परम्पराओं पर विश्वास करें तो हमको यह मानना पड़ेगा कि यदु वदिक देवताओं तथा ब्राह्मणों के प्रति भक्ति तथा श्रद्धा के क्षेत्र में न केवल उदासीन ही थे वरन् अधिक विरोधी थे। उन्होंने उनके पारिवारिक पुरोहित गार्ग्य का अपमान किया जिसने उनसे प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञा की और उसने रुद्र की तपस्या एक ऐसा पुत्र पाने की कामना से की, जो अन्धक तथा वृष्णि जातियों के गर्व का भंजन कर सके (हरिवंश पुराण अध्याय ११४) उनका अंतिम पराभव प्रभास में हुआ जहा वे ऋषि दुर्वासा जिसके साथ उनके युवा पुत्रों ने शैतानियां की थी शाप का कारण बन गए। ब्रज भूमि में, स्वयं श्रीकृष्ण ने इन्द्र-पूजा का उन्मूलन उस समय किया था जब कि वह स्वयं एक बालक थे। राज-सत्ता प्राप्त करने के पश्चात उन्होंने देवताओं के इस राजा का अभिमान भंग नंदन कानन से पारिजात पुष्पों का अपहरण करके किया था। पुरातन हैहय लोग दत्तात्रेय की पूजा करते थे जबकि महाभारत काल में उनकी सतानें शिव की आराधना करते हुए मिलती थी। यादवों की सर्वाधिक आकर्षक तथा प्रभावशाली विशेषता उनकी लोकतंत्रात्मक राज्य-संघ था जो जातीय भावना के साथ प्रतिबद्ध भी था। यद्यपि यादव अनेक दूर के वंशों तथा जातियों में यहा तक विभाजित थे कि एक-दूसरे के साथ वैवाहिक संबंधों की स्थापना भी होती थी फिर वे एक ही पिता की संतान के रूप में आचरण करते थे और शत्रु के सामने संगठित मोर्चा प्रस्तुत किया करते थे। वे सबके दुख तथा व्यथा को समान रूप से भोगते थे और एक शरीर के समान रहते तथा कार्य करते थे। जब उनको उनके भाग्य पर छोड़ दिया गया तो बहुत मामूली ईर्ष्या के पारिवारिक-संघर्ष उनके जीवन के अंग बन गए। हरिवंश पुराण उनके सामाजिक जीवन का सजीव चित्रण करता है। वे पुरुष तथा नारी युवा तथा वृद्ध सभी मिलकर खेल की भावना से प्रफुल्लित होकर घने जंगलों अथवा समुद्र के तटों पर आनन्द विहार के लिए जाया करते थे। बलराम हमेशा नशे की हालत में होते थे उनकी पत्नी हाथों की तालियां बजाकर उनके उच्च स्वर में गायन का साथ देती थी। उसका छोटा भाई श्रीकृष्ण अपनी पत्नी अपनी बहन तथा अपने मित्रों के साथ मिलकर गाने में उनका साथ देता था। युवक मंडली निस्संकोच भाव के साथ

उस ससर्ग को पकड़ती थी और बड़ी गहराई क साथ गाती थी। इसक बाद पानी का खेल (जिसम नहात समय एक-दूसरे पर पानी के छीटे मारे जाते थे) श्रीकृष्ण द्वारा प्रस्तावित किया जाता था। इसके दो भाग होत थे। एक दल बलराम की अध्यक्षता म होता था जिसम आधे यादव होत थ जिनम श्रीकृष्ण के पुत्र तथा उनकी पत्निया शामिल होती थी। दूसरा दल श्रीकृष्ण की अध्यक्षता म होता था जिसम बलराम के पुत्र तथा उनकी पत्निया होती थी। अत्यधिक-मादक द्रवो का सेवन करन के बाद वे नग्नावस्था म पानी म कूद पडत थे और आपस मे एक-दूसरे पर पानी उछालत थे। इस खेल म वे इतन उत्तेजित हो जाया करत थे कि महिला वग की उपस्थिति को नजरअदाज करके गम्भीर सघप म उलझ जाते थे। शात मस्तिष्क श्रीकृष्ण सकट का अनुमान लगाकर खेल को ठीक समय पर समाप्त कर दिया करत थे। वे पानी से बाहर निकलते थ। अपन वस्त्र पहनते थ और फिर भोजन पर बठ जाते थे। अनार तथा अन्य फल विभिन्न प्रकार के तामसिक भोजन, भस शावक का भुना हुआ मास आदि भोजन म शमिल होता था। भोजन के बाद अपनी पत्नियो के साथ अनेक प्रकार की सुराओं का पान करत थ। उनम उद्धव तथा भोज आदि शाकाहारी थ जो चावल हलुवा दही तथा मिष्ठान्न तक सीमित रहत थ। आर्यों क अत्यन्त सुरुचिपूण शिष्टाचार के मामन इनके ये खल तथा भोजन की परम्परा निहायत घणास्पद थी जो केवल यादवा म ही मिलती थी। अशोक महान् के राज्य के प्रारम्भिक दिनों म इम प्रकार के जनजातीय रीतिरिवाज मगध देश म भी मिलत थ। हरिवश का लखक स्पष्ट रूप स बताता है कि अधक वष्णि तथा दशरह प्रेम को प्रत्यक वस्तु स श्रेष्ठ समझत थ और अपन पुत्रो के साथ मित्रवत आचरण करत थे (तात्पय यह कि आयु तथा पतक सम्बन्धो की चिन्ता न करके व्यवहार करत थे)।

युधिष्ठिर के राज्य के छत्तीसवें वष म (अर्थात कुरुक्षत्र युद्ध के बाद) यदु की जाति पर एक विषम सकट आया जिसन उमको मूल तथा शाखाओ के साथ बरबाद कर दिया। वे दुराचारी दुर्विनीत निष्ठुर तथा सम्मान योग्य ब्राह्मणा के प्रति अनादरकारी बन गए। जाति के अत्यन्त प्रभावशाली प्रमुख बलराम श्रीकृष्ण बभ्रु और आहुक जाति की नतिकता के सुधार की योजना को लेकर एक बठक म शामिल हुए। उन्होन यह घोषणा की थी कि यदि कोई व्यक्ति अकेले म भी मादक द्रव्यो का सवन करता मिलगा तो उसको उसक समस्त परिवार के साथ मृत्युदण्ड दिया जायेगा। लकिन भोगवादियों क नगर म इतनी पावन गम्भीरता को शायद ही सफलता मिल सकती थी। थोड समय पश्चात उन्हाने सपत्नी प्रभास क समुद्र तक की तीर्थयात्रा की। समस्त प्रतिबधों को दूर हटाकर उन्होंने सुरा-सवन का आयोजन किया उनको सगीत नृत्य और विशषज्ञ अभिनताओ के अभिनय आदि न जीवन्तता प्रदान की। युवको न, ब्राह्मणो के लिए तयार किए गए भोजन को

वन्दरों का आपसी सघष देखने के प्रलोभन से उनके सामने फेंक दिया। ऋतिवर्मा सात्यकी और यहा तक कि श्रीकृष्ण के पुत्रो ने, उनकी उपस्थिति म ही अपने प्याले खाली किए। सात्यकी तथा ऋतिवर्मा के बीच एक सघष पैदा हो गया। इन दोनो म कुरुक्षेत्र के युद्ध मे विरोधी दलों म युद्ध किया था। सात्यकी सहसा ऋतिवर्मा पर झपटा और उसका सिर काट दिया। उनके मित्र तथा भिन्न गोत्रो के सदस्य दो दो दलों म बट गए और उनम भयकर युद्ध प्रारम्भ हो गया। मद के नशे तथा प्रतिशोध की भावना मे डूबे योद्धा यादव अपनी अतिम श्वासो तक लडते रहे। जब उनके आयुध बकार हो गए तब उन्होन जगली सरपत खींच लिए और एक-दूसरे पर आक्रमण करने लगे। किसी न पीछे हटकर अथवा एकान्त म खडे होकर स्वय को बचाने की बात नहीं सोची।

बहुत दिन पश्चात अजुन द्वारिका आया और एक शक्तिशाली जाति के दुखद अवशेष—जिनमे अधिकाशत विधवाए, असहाय बालक तथा वृद्ध जन थे आदि को लेकर हास्तिनापुर की ओर चला। एक दिन वह पचनद नदी के किनारे ठहरा था। यह जगह पशु तथा कृषि उत्पादो का भडार थी और अमीर दस्युओ स युक्त थी। अल्प सुरक्षा के साथ अनेक महिलाओ का काफिला, उनके प्रलोभन को रोकने के लिए अपर्याप्त था। अजुन की अतिम पक्ति पर वे अपने चौपाइ दडे का हथियार लेकर ही झपट पडे। कुरुक्षेत्र का विजेता अपनी मडली के एक भाग स हाथ धो चुका था और दस्युओ की भूमि से बाकी बचो को निकाल ले जाना कठिन अनुभव कर रहा था। उसने ऋतिवर्मा के पुत्र के सरक्षण म पश्चिम के नगर मार्तिकवती म भोज यादवों को रहन के लिए छोड दिया। उसके द्वारा एक-दूसरे नगर की स्थापना सात्यकी के पुत्र के रक्षण मे वृद्धजन तथा परिवार के बालको के साथ रहन के लिए सरस्वती नदी के तट पर की गई। पाण्डवो की पुरानी राजधानी इद्रप्रस्थ म श्रीकृष्ण के प्रपौत्रवज्र का अभिषेक राजा के रूप मे किया। इस प्रकार यदु जाति के बीज पाच नदियो की भूमि तथा यमुना की घाटी म बिखर गए।

सदभ

१ ऋग्वेद VI १२० १२ और IV ३० १७)
२ यदु की उत्पत्ति के विषय म मिस्टर आर०पी० चद्र को हरिवश म दो विरोधी कहानिया मिलती हैं—एक ययाति के पुत्र यदु के विषय म और दूसरी सूय वशीय इच्छवाकु हरयश्व के पुत्र ययाति के बारे मे (दि इडो आयन रेस पृ० २८ ३०) यदु की उत्पत्ति क विषय म दूसरी कहानी पर बल देना अधिक न्यायोचित तथा वैधानिक इसलिए प्रतीत नहीं होता कि यह सूयवश के विषय

परिशिष्ट (स)

औरंगजेब के शासनकाल में जाट-शक्ति का विकास

अभी कुछ दिन पहले ही जयपुर राज्य के पुरातत्व विभाग म प्रोफेसर जदुनाथ सरकार ने उन सकडों सरकारी पत्रो तथा अखबारो (अखबाराते-दरबारे मुअला) की प्रतिया प्राप्त की थीं जो शाही दरबार म वतमान जयपुर राज्य के एजेन्टस ने राजा बिशनसिंह तथा सवाई जयसिंह को भेजी थी। इतिहास की मेरी यह पुस्तक छप जाने के बाद यह सामग्री मेरे हाथ लगी। अत मैं नवीन उपलब्ध तथ्यो का केवल सार ही यहा दे सकता हू।

इन पत्रा म साहसी जाटो को प्राय जाट-बदजात कहा गया है। इसस मुगल सरकार के उस नपुसक क्रोध का सकेत मिलता है जिसको यह ज्ञान नही था कि इनको किस प्रकार दबाया जा सकता है। इन पत्रा से ज्ञात होता है कि जाटो की छापामार गतिविधि का क्षत्र मथुरा स जयपुर की सीमा तक तथा मेवात की पहाडिया से लेकर चम्बल नदी तक फला हुआ था। इस क्षत्र स शान्ति तथा व्यवस्था विदा हो चुकी थी। सडकें इतनी असुरक्षित हो गयी थी कि आगरा से धौलपुर तक सुरक्षा किराया दो सौ रुपया मागा जाता था। व्यापारी तथा राहगीरो को भारी मूल्य चुकाकर जाट नेताओं से लिए गये पासों पर ही यात्रा करनी पडती थी। उस काल मे जाटों क मजबूत ठिकाना के सदभ म सिनसिना, सोगर सौंख तथा वैर का प्राय उल्लेख मिलता है।

हमे बार-बार यह देखने को मिलता है कि मुगल प्रशासन बहुत भ्रष्ट था। स्थानीय अधिकारी तथा सनिक समान रूप से जाटो की विद्रोही कायवाही के साथ गठबधन किये हुए थे। उनका समझौता उनके स्वामी के आत्मियो तक की लूट म हिस्सा लेने तक था। एक पत्राचार से, एक घटना इस सबध में उद्धत की जा सकती है। आगरा म नियुक्त फजलखान नामक एक अधिकारी को शाही खजाने को धौलपुर तक सुरक्षित पहुचाने का आदश दिया गया था। उसने अपनी यात्रा की गुप्त सूचना जाटो तक पहुचा दी। जाटों ने उत्तर दिया कि उनका गोला-बारूद कम

हो गया है। फजल खान ने गुप्त रूप से गोला-बारूद उनको भेज दिया और पूर्व निर्धारित योजनानुसार शाही खजाने को लूट लिया गया।

अकबर के मकबरा के सरक्षक मीर अहमद ने २८ मार्च १६८८ को सूचना दी कि रात के समय राजाराम के एक दल ने मकबरा पर हमला किया और इसके गलीचे कालीन बरतन दीपक और सज्जा की अन्य सामग्री को लेकर भाग गया। दूसरी सूचना थी कि आगरा के समीप शाहजहा के मकबरे की आर्थिक सहायता के लिए लगे आठ गावो को लूट लिया है।

वतमान पत्राचार जाट विद्रोहियो द्वारा अकबर की हड्डियो के जलाने के बारे मे कुछ नही बताता इस सम्बन्ध मे अब तक ज्ञात स्रोत केवल मनूची है। किंतु जाटो के प्रति औरगजेब का अत्यधिक गुस्सा और जाट जनता का आम कत्लेआम करने के बार-बार दिये गये आदेश जिनका उल्लेख ये सूचना-पत्र करते है से इस विचार को समर्थन मिलता है कि अकबर की हड्डियो को जलाने वाली गाथा सत्य पर आधारित हो।

जयपुर के राजा विशनसिंह के शाही दरबार मे स्थिति एजेण्ट वकालाय के बीसिया पत्र यह बताते हैं कि बादशाह जाटो के निरंतर बढ़ते हुए विद्रोह तथा उसको दबाने मे विशनसिंह की देरी पर बहुत चिंतित था। राजा विशनसिंह को बार बार यह कहा गया था कि यदि उसने शाहजादा बेदारबख्त के आने से पहले जाटो के गढ सिनसिनी को छीन लिया तो उसको बहुत अच्छी तरह पुरस्कृत किया जाएगा। फिर भी राजा ने इस अभियान को स्थगित रखा। आखिरकार उसने अपनी सेना को शहजादे की सेना मे मिलाया और सिनसिनी का घेरा डाल लिया। बेदारबख्त का वापस बुला लेने के बाद सिनसिनी के अभियान मे विशनसिंह का ही अधिकार सर्वोच्च था। जयपुर के सेनापति हरीसिंह ने सिनसिनी के घेरा डालने का काम सम्भाला था और दण्डात्मक गतिविधि को सचालित किया। एक मुकाबले मे हरीसिंह घायल हो गया और अफवाह यहा तक फैल गयी कि वह मारा जा चुका है। सभवत युद्ध-सामग्री के अभाव के कारण जाटो ने गुप्त रूप मे सिनसिनी को खाली कर दिया और जयपुर की सेना ने एक छोटी सी झडप के बाद किले पर अधिकार कर लिया। औरगजेब के पास यही सूचना पहुची थी स्वाभवत उसने विशनसिंह को कोई पुरस्कार देना अस्वीकार कर दिया। दिल्ली-दरबार मे मौजूद जयपुर के एजेण्ट ने इस सूचना का खण्डन करने के अनेक प्रयत्न किए। उसने कहा कि उसके स्वामी के विरोधियो की यह घृणात्मक कल्पना है। इसके साथ ही उसने राजा विशनसिंह को लिखा कि वह स्थानीय वाकानवीस को अच्छी रिश्वत देकर खुश करे और उसके द्वारा जयपुर की सेना की बहादुरी की गाथा बढा चढाकर भिजवाये।

हो गया है। फजल खान ने गुप्त रूप से गोला-बारूद उनको भेज दिया और पूर्व-निर्धारित योजनानुसार शाही खजाने को लूट लिया गया।

अकबर के मकबरा के संरक्षक मीर अहमद ने २८ मार्च १६८८ को सूचना दी कि रात के समय राजाराम के एक दल ने मकबरा पर हमला किया और इसके गलीचे कालीन बरतन दीपक और सज्जा की अन्य सामग्री को नष्ट भ्रष्ट किया गया। दूसरी सूचना थी कि आगरा के समीप शाहजहां के मकबरे की आर्थिक सहायता के लिए लगे आठ गांवों को लूट लिया है।

वर्तमान समाचार जाट विद्रोहियों द्वारा अकबर की हड्डियां के जलाने के बारे में कुछ नहीं बताता इस सम्बन्ध में अब तक मात्र मात्र केवल मनूची है। किन्तु जाटों के प्रति औरंगजेब का अत्यधिक गुस्सा और जाट जनता का आम कत्लेआम करने के बार-बार दिये गये आदेश जिनका उल्लेख ये सूचना-पत्र करते हैं से इस विचार को समर्थन मिलता है कि अकबर की हड्डियां को जलाने वाली बात मनूची सत्य पर आधारित हो।

जयपुर के राजा बिशनसिंह के शाही दरबार में स्थिति दरबार वकील के बीमिया पत्र यह बताते हैं कि बादशाह जाटों के निरंतर बढ़ते हुए विद्रोह तथा उसको दबाने में बिशनसिंह की देरी पर बहुत चिंतित था। राजा बिशनसिंह को बार-बार यह कहा गया था कि यदि उसने शाहजादा बेदारबख्त के आने से पहले जाटों के गढ़ सिनसिनी को छीन लिया तो उसका बहुत अच्छी तरह पुरस्कृत किया जायगा। फिर भी राजा ने इस अभियान को स्थगित रखा। आखिरकार उसने अपनी सेना को शहजादे की सेना में मिलाया और सिनसिनी का घेरा डाल दिया। बेदारबख्त को वापस बुला लेने के बाद सिनसिनी के अभियान में बिशनसिंह का ही अधिकार सर्वोच्च था। जयपुर के सेनापति हरीसिंह ने सिनसिनी के घेरा डालने का काम सम्भाला था और दण्डात्मक गतिविधि को संचालित किया। एक मुकाबले में हरीसिंह घायल हो गया और अफवाह यहां तक फैल गयी कि वह मारा जा चुका है। सम्भवतः युद्ध-सामग्री के अभाव के कारण जाटों ने गुप्त रूप से सिनसिनी को खाली कर दिया और जयपुर की सेना ने एक छोटी सी झड़प के बाद किले पर अधिकार कर लिया। औरंगजेब के पास यही सूचना पहुंची थी स्वाभवतः उसने बिशनसिंह का कोई पुरस्कार देना अस्वीकार कर दिया। दिल्ली-दरबार में मौजूद जयपुर के वकील ने इस सूचना का खण्डन करने के अनेक प्रयत्न किये। उसने कहा कि उसके स्वामी के विरोधियों की यह घृणात्मक कल्पना है। इसके साथ ही उसने राजा बिशनसिंह को लिखा कि वह स्थानीय वाकानवीस को अच्छी रिश्वत देकर खुश करें और उसके द्वारा जयपुर की सेना की बहादुरी की गाथा बढ़ा चढ़ाकर भिजवाये।

□□